शिवाजी

वीर-केसरी-शिवाजी।

उमादत्तशर्मा

Vishwamitra Press, Calcutta.

शिवाजी

वीर-केसरी-शिवाजी ।

उमादत्तशर्मा

Vishwamitra Press, Calcutta.

रत्नाकर-ग्रन्थमाला का १८ वां रत्न।

शिवाजी।

(महाराष्ट्रका गौरवमय इतिहास।)

लेखक :—

पं० उमादत्त शर्म्मा।

प्रकाशक :—

द्दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी

१४।१ ए० शम्भूचटर्जी स्ट्रीट,

कलकत्ता।

द्वितीय संस्करण] संवत् १९८८ [मूल्य १॥)

प्रकाशक :—
दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी
१४।१ ए० शम्भूचटर्जी स्ट्रीट,
कलकत्ता।

Price Rs 1/8/-

मुद्रक :—
विश्वमित्र—प्रेस,
कलकत्ता।
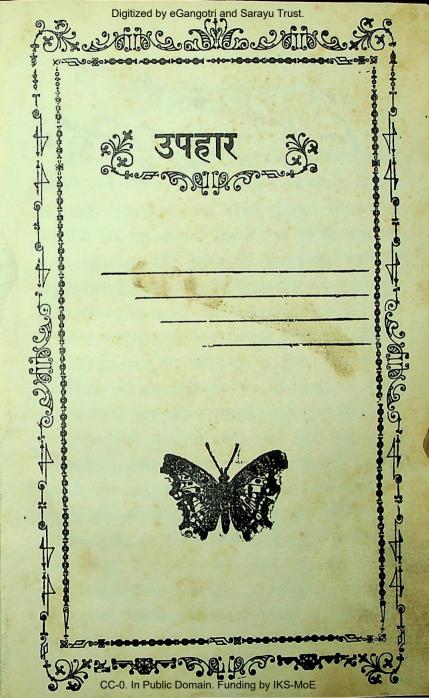
उपक्रमणिका ।

महीयसी भारतमाताने, जिन अनेक वीरोंके रक्त-रञ्जित अर्घ्यकी अञ्जलि ग्रहण करके अपनेको वीर-प्रसविनी कहलाया है, शिवाजी, उन वीरोंमें अग्रगण्य थे। उस समयके मुसल्मान-इतिहासकारोंने शिवाजीके साथ, बड़ा अन्याय किया है। उन लोगोंने शिवाजीको कायर, पहाड़ी-चूहा, डकैत, नरहन्ता और विश्वासघातीकी उपाधियोंसे अलंकृत किया है! इन मुसल्मान-इतिहासकारोंके इतिहासके आधार पर ही अंग्रेज-इतिहासकारोंने अपने इतिहासोंकी रचना की है। इन लोगोंने भी मक्खीको जगह मक्खी मार कर अपने इतिहासोंके पृष्ठ काले किये हैं। परन्तु सत्य अधिक दिन तक छिपा नहीं रह सकता। नई विवेचना और नया इतिहास-विश्लेषण सत्यको झूठ और पक्षपात के पर्देके भीतरसे बाहर खींच ले आया है। पहले स्कूलों और कालेजों में जहां शिवाजीको डाकू, चोर और पहाड़ी-चूहा, विश्वासघातक कह कर पढ़ाया जाता था, वहां अब उनको विश्वासी, धर्मनिष्ठ, वीरव्रती, देशभक्त कह कर स्मरण किया जाता है। एक समय था— जब कि बृटिश-भारतमें शिवाजीका इतिहास पढ़ना और रखना पाप या राजद्रोह समझा जाता था। किसी सभामें यदि शिवाजीका नाम ले दिया जाता, तो राजभक्त-मण्डली काम्प उठती थी। परन्तु परिवर्तनशील समयके प्रभावसे वह समय भी चला गया। लोगोंने डाकू और नरहन्ता, विश्वासघातीको जब धर्मपरायण, वीर, दृढ़प्रतिज्ञ तथा कुशल-राजनीतिज्ञके रूपमें देखा तो अवाक् रह गये। गत वर्ष स्वयं बृटिश राज्यके युवराजने पूनामें महामहिम शिवाजीकी मूर्तिका उद्घा-

टन करते समय उपस्थित महाराष्ट्रोंको सम्बोधन कर कहा था,—"आज महान् महाराष्ट्र जातिके निर्माणकर्ता शिवाजीके स्मृति-भवन की आधारशिला रखते हुए जो आनन्द मुझे प्राप्त हुआ है, उसका मैं शब्दोंमें वर्णन नहीं कर सकता। यूरोपके गत महायुद्धमें वीर-मराठों ने जो युद्ध-कौशल दिखाया था, उसे मैं शिवाजीकी ही कृपा समझता हूं, जिन्होंने अपने कार्य-कलापोंसे सोते हुए महाराष्ट्रको अपने भेरी-रवसे जगा दिया था। अभी कुछ थोड़ी देर पहले मैं उन्हीं वीरके स्मृति-स्तम्भकी आधार-शिला रख कर आया हूं। शिवाजी और उनके वंशधरोंने जिस राज्यकी स्थापना कर देशको गौरवान्वित किया था, आज उसीकी स्मृति-रक्षाके लिये हम लोग यहां एकत्रित हुए हैं। मैं नहीं समझता कि इससे अच्छा महाराष्ट्र जातिके लिये स्मृति-रक्षाका और क्या काम हो सकता है। मेरी यह आन्तरिक इच्छा है कि महाराष्ट्रगण शिवाजीके पद-चिन्हों पर चल कर अपने अतीत गौरवकी रक्षा करें।"

प्रसिद्ध इतिहास-तत्ववेत्ता प्रोफ़ेसर यदुनाथ सर्कारने संक्षेपमें शिवाजीके सम्बन्धमें लिखा है,—"शिवाजी, एक अशिक्षित ग्रामीण युवा थे। उन्होंने कभी राजसभा या राजनीतिक-युद्ध नहीं देखे थे, परन्तु अपनी स्वाभाविक प्रतिभासे उन्होंने दिल्ली और बीजापुरके लोगोंमें हलचल मचा दी थी। शिवाजी साधारण कृषक और एक छोटे जागीरदारके पुत्र थे, परन्तु उन्होंने अपनी प्रतिभा और बाहु-बलसे छत्रपतिकी उपाधि ग्रहण की थी। उन्होंने इतनी शक्ति और सम्मान-लाभ किया था—कि अन्तमें एक प्रकाण्ड राज्य स्थापना करनेमें समर्थ हुए। पूर्वमें बीजापुर और पश्चिममें अविसीनिया तथा उत्तरमें दिल्ली—उनके प्रबल शत्रु थे, परन्तु तब भी उन्होंने साहस-पूर्वक अपना हिन्दू-राज्य स्थापन करके ही छोड़ा। अन्तमें शिवाजी

अपने बाहुबल, प्रतिभाके ही कारण इतने शक्तिसम्पन्न हुए कि यूरोपीय व्यवसायी और भारतवर्षके राजागण उनसे सहायता मांगने लगे। शिवाजीकी वीरताके सम्मुख बीजापुर और गोलकुण्डाने भी शिर झुका दिया था और मैत्री करनेमें ही अपना कल्याण समझा था। दक्षिणके मुगल-शासनकर्ताने मैत्रीके लिये प्रार्थना की थी और भारतके मयूर-सिंहासन पर विराजमान मुगल-सम्राट् उनके विरोधी भावोंसे घबरा उठे थे!

"शिवाजी अपनी शक्तिका ऐसे अच्छे ढङ्गसे उपयोग करते थे, कि सभी लोग उनको ज्ञानी, धार्मिक, परोपकारी समझने लगे थे। हिन्दू उनके राज्यको रामराज्य कहते थे। सभी लोगोंको समान भावसे रक्षा करते थे। वे अपने बाहुबलसे राज-सिंहासन पर बैठे, परन्तु कभी उन्होंने यह नहीं समझा कि मैं इसका स्वामी हूं---सर्वेसर्वा हूं। शिवाजीने एक दिन अपना समस्त राज्य अपने गुरु समर्थ रामदासको दान कर दिया था, परन्तु साधु-तपस्वी रामदासने शिवाजीको यह कह कर वापस कर दिया था—कि 'तुम मेरे प्रतिनिधि होकर इसकी रक्षा करो।' इसके बाद शिवाजी अपनेको भरतकी तरहसे हिन्दूराज्यका चौकीदार समझ कर उसकी रक्षा करने लगे। राजा लोग जैसे अपने सुख-स्वप्नोंमें निमग्न होकर अथवा इन्द्रिय-सुखोंमें रत रह कर पार्थिव-सम्मान और सम्पदके वाह्याडम्बरमें जीवन व्यतीत करते हैं, शिवाजीने राजशक्ति प्राप्त करके भी कभी इस प्रकारके प्रमादमें जीवन व्यतीत नहीं किया। वे जब तक जीवित रहे, अद्भुत कर्तव्यपरायण तथा संयमी रहे। सदा भगवान्‌को साक्षात् साक्षी समझ कर उन्होंने किसी काममें हाथ डाला और फिर उसे साङ्गोपाङ्ग पूर्ण किया। उनके इसी अध्यवसायके फलसे उनका छोटा-सा राज्य, एक महाशक्तिशाली साम्राज्यके रूपमें परिणत हुआ।

शिवाजीने थोड़ीसी शक्ति लेकर जो काम आरम्भ किया था, उससे स्वप्नमें भी यह कल्पना नहीं होती थी—कि निकट भविष्यमें इसका फल महान्-साम्राज्य-स्थापन होगा। एक मरणोन्मुख जातिको गठित करके वे इस रूपमें खड़ी कर देंगे। धूलिमेंसे शिवाजीने रत्न निकाल कर रख दिये। उनकी जातिके जो सद्गुण छिपे पड़े थे, शिवाजीके आश्चर्य-मन्त्रसे वे प्रकाशमें आ गये। वीरताके भवोंकी महाराष्ट्रमें उत्ताल तरंगे उठने लगीं। अन्तमें उसी वीरत्व और आत्मविश्वाससे अनुप्राणित होकर महाराष्ट्रोंने विजय प्राप्त की। उन समस्त स्मृति-गाथाओंको स्मरण कर आज भी भारतवासी गौरव अनुभव करते हैं। बावन वर्षकी अवस्थामें शिवाजीने जो आश्चर्यजनक कार्य कर दिखाये, कौन कहता है कि यदि वे और भी कुछ दिन जीवित रहते तो क्या न कर डालते।"

भारतके आज फिर नवजागरणके दिन उपस्थित हुए हैं। शिवाजी के चरित्रका विश्लेषण करनेसे जो रत्न प्राप्त हो सकते हैं, हमें उन्हें प्राप्त करना चाहिये। जातीय उत्थानके लिये शिवाजीने कितनी चिन्ता की,—कितना असाधारण परिश्रम किया,—कितना त्याग स्वीकार करना पड़ा, कितनी यन्त्रणायें सहन करते हुए क्लेश-कण्टक-मुकुटको मस्तक पर धारण करके वे आगे बढ़े। एक मरणोन्मुख जातिको गठित करनेके लिये उन्होंने कैसे-कैसे उपकरण एकत्रित किये, धैर्य, बुद्धि और सहिष्णुता तथा राजनीतिक बुद्धिका अवलम्बन कर महान् हिन्दू-राज्य स्थापन करनेमें सक्षम हुए। स्वराज्य लाभ करने पर शिवाजीने निःस्वार्थ त्याग और प्रेम, वैराग्य तथा भगवद्भक्ति द्वारा समस्त प्रजाको वशमें कर लिया था।

रही शिवाजीको बदनाम करनेकी बात, मोहम्मद-साहेबने जिस समय अपने धर्मका प्रचार किया था, उस समय उनको पाखण्डी

और लम्पट बताया गया था, इसी प्रकारसे वीरवर नैपोलियनको नीच स्वार्थी और पापीकी उपाधियोंसे विभूषित किया गया था। परन्तु आज देखते हैं कि उन्हीं मोहम्मद साहेबके करोड़ों मतानुयायी हैं ! मुसलमानोंने तो उन्हें भगवान्‌का विशेष रूप तक मान लिया है। महावीर नैपोलियनका नाम स्मरण करके बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ शिर झुका देते हैं। वही दशा शिवाजीकी भी हुई है। जो लोग उनको पहाड़ी-चूहा कहते थे, वे उनकी वीरत्व-गाथाका गौरव-गान करते नहीं अघाते। जो लोग उनको नरहन्ता और डकैत कहते थे, वे उनकी धर्मनिष्ठाका गुणानुवाद करते हैं।

महावीर शिवाजीमें और एक गुण था। वे केवल वीर ही नहीं थे, किन्तु परम भगवद्भक्त भी थे। रणभेरीके गम्भीर निनाद एवं भगवद्भक्तिपूर्ण-मृदङ्ग-ध्वनिको समान भावसे श्रवण करते थे। धर्म-रक्षाके समय वे किसी विपद्‌की परवा न कर आगे बढ़ते थे। उनका धर्मानुराग ऐसा अकपट और सुदृढ़ था कि बीजापुरके सुल्तानने उन्हें पकड़नेके लिये अपने सैनिक भेजे। महाराज शिवाजीको भी इसका पता लग गया। इससे वे जरा भी नहीं घबराये, और यथास्थान पहुंच कर उन्होंने निर्भीकताका परिचय दिया। इसी प्रकारसे जब आगरासे पलायन कर भागे तो औरङ्गज़ेबके गुप्तचरों और सैनिकोंने उनका पीछा किया। शिवाजीका कर्तव्य था कि वे किसी तरहसे जान बचा कर महाराष्ट्र पहुंच जाते। परन्तु उन्होंने ऐसा न कर पहले उत्तरभारतके समस्त प्रधान-प्रधान हिन्दू-तीर्थोंका उसी दशामें दर्शन किया और इसके बाद महाराष्ट्रकी ओर प्रस्थान किया।

महाराज शिवाजी भवानी-शक्तिके अनन्य उपासक थे। भवानी-भक्तिसे ही उनमें देशभक्ति उदित हुई थी। विना भगवद्भक्तिके देशो-द्धारका बड़ा काम करनेमें कोई देशभक्त सफल हो सकता है, इसमें

हमें सन्देह है। शिवाजीकी वीरता, धर्मनिष्ठा जहां प्रशंसनीय है, वहां उनकी भगवद्भक्ति, गुरु-भक्ति और मातृ-पितृ-भक्ति भी स्मरणीय है।

हिन्दीमें शिवाजीके कई छोटे-मोटे और बृहत्-जीवन-चरित्र प्रकाशित हो चुके हैं। छोटे-छोटे चरित्र एक तो अप्राप्य हैं, दूसरे उनसे शिवाजीके सम्बन्धमें पूरा पपिचय प्राप्त नहीं हो सकता। बृहत्-जीवनके पढ़नेवाले धैर्यवान् पाठक विरले ही होते हैं। दूसरे शिवाजीके जीवनसे सम्बन्ध रखने वाले चित्र भी आज तक किसी जीवन-चरित्रमें नहीं निकले। इन्हीं सब बातोंको ध्यानमें रख कर इस जीवनको प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है हिन्दीके पाठक-गण इसकी उपयोगितासे यथेष्ट लाभ उठायेंगे। अन्तमें मैं उन पुस्तकोंके लेखकोंके प्रति हृदयसे कृतज्ञता कृतज्ञता प्रकट करता हूं—जिनकी पुस्तकोंको देख कर यह पुस्तक लिखी गई—और जगह-जगह उनके मत उद्धृत कर इसकी प्रामाण्यता सिद्ध करनेमें सहायता मिली है।

(हर्षकी बात है कि हिन्दीसंसारने इस पुस्तकका यथोचित आदर किया है। इसीलिये यह दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। प्रकाशक,)

मार्गशीर्ष कृष्णा ८ मी
संवत् १८८२।

उमादत्त शर्म्मा।

——*——

शिवाजी ।

प्रथम-परिच्छेद ।

पूर्वाभास ।

—(*)—

दा क्षिणात्य-प्रदेशके एक विशिष्ट भागका नाम महाराष्ट्र-प्रदेश है। चार शताब्दी पहले इसकी सीमा इस तरह से थी,—उत्तरमें ताप्ती नदी, दक्षिणमें कृष्णा नदीका पूर्व भाग और पूर्वमें सीना। इस विस्तीर्ण भू-भागका परिमाण २८००० वर्गमील है। महाराष्ट्र प्रदेशमें ब्राह्मणोंकी बहुतायतको देख कर लोग अनुमान करते हैं, कि पहले यहां किसी क्षत्रिय राजाका राज्य था। परन्तु इसके सम्बन्धमें कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता। हां, एक पौराणिक कथा जरूर प्रसिद्ध है। वह कथा इस तरहसे है,—भगवान् परशुरामने पृथ्वीको क्षत्रियोंसे निर्वीर्य करके—महाराष्ट्रमें ब्राह्मणोंको ला बसाया। परन्तु जब परशुरामजीने अपने रहनेके लिये ब्राह्मणोंसे स्थान मांगा, तो उन्होंने अस्वीकार कर दिया। तब परशुरामजीने सह्यादि-पर्वत-माला पर आरोहण कर समुद्रको सम्बोधन कर कहा,—'तुम यहांसे प्रस्थान करो!' परन्तु जब समुद्रने आज्ञाका पालन नहीं किया—तब क्रुद्ध हो परशुरामजीने एक तीक्ष्ण बाण छोड़ा। बाणके पृथ्वी पर गिरते ही समुद्र काम्प उठा—ओर उसने उस स्थानको छोड़ दिया। सह्यादि—

पवत-मालासे लेकर अरब सागर तक जो भू-भाग खाली पड़ा है, उसीके सम्बन्धमें यह कथा प्रसिद्ध है। इसी रिक्त स्थानमें परशुरामजी ने वास किया—और तभीसे इसका नाम कङ्कण या कोकण पड़ा। यह प्रदेश महाराष्ट्रका एक प्रधान स्थान है। इस भू-भागमें—कहीं पर्वतमालायें हैं, तो कहीं समतल-क्षेत्र मीलों तक चला गया है। लोग इसे प्रकृतिकी रम्यलीला-भूमि कहते हैं। क्योंकि यहां प्रकृतिने जैसा अपने रूप-लावण्यका विस्तार किया है, वैसा बहुत कम देखनेमें आता है। यहांकी उर्वरा-भूमिमें जो अन्न और घास पैदा होता है, वही समस्त महाराष्ट्र-प्रदेशमें बांट दिया जाता है।

महाराष्ट्रका अधिकांश भू-भाग, जङ्गलाकीर्ण होनेके कारण लोक-संख्या अपेक्षाकृत अत्यन्त अल्प है। प्रचुर-वृष्टिके अभावके कारण अनेक स्थानोंमें खेती बहुत कम होती है। हां, छोटे-छोटे नदी-नालोंके तीरस्थ स्थानों पर ज्वार, बाजरा और मका तथा घास उत्पन्न होता है। पहले यहां भीषण वन होनेके कारण गमनागमन बहुत कम होता था। किसान लोगोंको खेती-बाड़ीमें उन्नति कम होनेके कारण राजाके यहां नौकरी करनी पड़ती थी। जिस समयकी हम बात कह रहे हैं, उस समय दक्षिणके राजा लोग परस्परके लड़ाई-झगड़ोंमें ही लिप्त रहते थे। इन्हीं राजा लोगोंके साथमें काम करते-करते महाराष्ट्र युवकगण भी शौर्य-वीर्य और क्षमताशाली हो उठे थे। जीवन समस्या अधिक कठिन होनेके कारण महाराष्ट्रके बाल-वृद्ध वनिता सभी परि-श्रमशील होते थे। इसीलिये महाराष्ट्रोंके अङ्ग-प्रत्यङ्ग सुगठित और बल-शाली होते थे। विलासिता और वर्तमान सभ्य-समाजकी प्रमाद-पूर्ण रीति-नीतिसे ये लोग बिल्कुल अनभिज्ञ थे। महाराष्ट्र घोड़ेकी सवारीमें बड़े दक्ष होते थे। बाल्य-कालसे ही कठोर परीश्रमशील होनेके कारण, उनका चरित्र और साहस, अध्यवसाय तथा आत्मा-

शिवाजीको गुरु रामदासका देश-भक्तिका उपदेश।
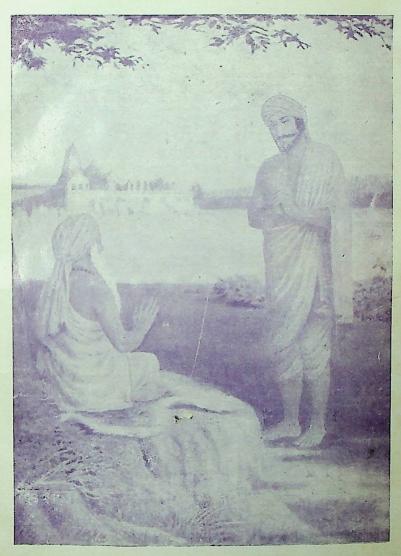
भिमानका भाव अत्यन्त प्रबल होता था। यद्यपि वे दरिद्र थे, तथापि आत्म-सम्मान-ज्ञान और मनुष्यत्व-गौरवसे परिपूर्ण थे। सातवीं शताब्दीमें एक चीनी यात्रीने महाराष्ट्रकी यात्रा कर लिखा था, कि 'इस प्रदेशके अधिवासी गर्वित और योद्धा हैं। महाराष्ट्र उपकारीके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करते हैं, किन्तु अन्याय-व्यवहार करनेसे बिना प्रतिशोध लिये छोड़ने वाले नहीं हैं। विपद् पड़ने पर साहाय्य-प्रार्थीकी सहायता करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं, किन्तु अपमानित होनेपर विषधर सर्पकी तरहसे ऐसा डङ्क मारते हैं, कि शत्रुका सर्वनाश कर डालते हैं और यदि अपमानका प्रतिशोध लेते समय मृत्यु भी हो जाय, तो भी अपने कर्त्तव्य-कर्मके करनेसे कभी कुण्ठित नहीं होते।'

१६ वीं शताब्दीमें भारतमें धर्म-सम्बन्धी क्रान्ति हो रही थी। प्राचीन रीति-नीतियोंका संशोधन हो रहा था। बङ्गालमें श्रीचैतन्य-महाप्रभु देशवासियोंको एक झण्डेके नीचे आकर खड़ा होनेका संदेश दे रहे थे—और उत्तरभारतमें कबीर, पञ्जाबमें गुरु नानकदेव तथा महाराष्ट्रमें तूकाराम, रामदास, एकनाथ प्रभृति महात्मागण एक साथ ही उत्पन्न हुए थे। ये सभी परमभक्त एवं सुधारक थे। दक्षिणमें जिन महात्माओंने जन्म लिया था, वे प्रायः सभी ब्राह्मण थे। उनमें कुछ दरजी, जुलाहे, कुम्हार, माली, नापित आदि भी थे, जो आचार-अनुष्ठान-रक्षाके अत्यन्त विरोधी थे। उनका कहना था कि सामाजिक कर्म-कलापोंकी अपेक्षा हृदय शुद्ध होना आवश्यक है। यही धर्म है। तूकाराम, रामदास, एकनाथ, बामन पण्डित इन लोगोंको ठीक रास्ते पर लानेवाले थे। तूकारामकी बाणी और रामदास स्वामीकी शिक्षाका शिवाजी पर भी भारी प्रभाव पड़ा था, जिसका उल्लेख यथास्थान मिलेगा।

महाराष्ट्रके इस उत्थानके सम्बन्धमें महामति रानाडेने लिखा है

कि—जो लोग महाराष्ट्र जातिके उत्थानमें धर्म-संस्कारकी बातको नहीं देख सकते, वे उत्थानका प्रकृत कारण भी नहीं जान सकते। महाराष्ट्र-जातिके देशी और विदेशी इतिहासकारोंने इस महत्वको समझनेकी चेष्टा नहीं की। इस धर्म-संस्कारने प्राचीन कालकी जाति भेद-प्रथाका स्वातन्त्र्य-भाव परिवर्तित कर दिया था। ब्राह्मण-समाज में जो स्थान प्राप्त कर सकते थे, शूद्रोंके लिये भी उसका द्वार बन्द नहीं रहा था। इस समाजकी उदारताने महाराष्ट्रोंमें साम्यवाद की मन्दाकिनी बहा दी थी। सब लोगोंमें प्रीति और प्रेमके भाव सञ्चारित हो गये थे। छोटी-छोटी जाति-भेदकी दीवारोंको तोड़-फोड़ कर महाराष्ट्र एक सूत्रमें ग्रथित हो गये थे। आचार, अनुष्ठान, तीर्थ-यात्रा एवं उपवास प्रभृति अवान्तर विषय, प्रेम और विश्वास द्वारा भगवत्-पूजामें लोगोंको संलग्न करनेके कारण हुए थे। इसीलिये भारतको स्वाधीन करनेका सर्वप्रथम प्रयास, इस महाराष्ट्र जाति द्वारा ही हुआ था।

शिवाजीके पूर्व पुरुषा देवराजजो, रङ्ग-भूमि चित्तौरके अधिवासी थे। उदयपुरके राणाके साथ वाद-विवाद होनेके कारण उदयपुरको छोड़ कर दक्षिणमें चले आये थे। सर्वप्रथम इन्होंने दक्षिणके अहमद-नगरके राजाके यहां नौकरी की। देवराजजीके पिताका नाम भोंसाजी था। इसलिये दक्षिणमें आने पर भोंसले कहलाये। कुछ लोगोंका यह मत है कि देवराजजीके वंशज, दक्षिणके दौलताबादके भोंसले-दुर्गमें आकर रहे थे, इसलिये भोंसले कहलाये। कुछ भी हो छत्रपति शिवाजी के पूर्वज राजपूतानेसे आकर 'भोंसला' के नामसे प्रसिद्ध हुए। इसी वंशमें आगे चल कर सम्भाजो नामक एक पुरुष हुए। इनके सम्बन्ध में कहा जाता है कि ये बड़े वीर्य-विक्रम शाली थे। इनके पुत्रका नाम बाबजी था। बाबजीके दो पुत्र हुए। इनके नाम थे मालोजी और

बीठोजी। यह सन् १५५० ई० की बात है। बड़े पुत्र भालोजी ही शिवाजीके पितामह थे। दक्षिणका यह भोंसला-वंश सिंगनापुरके महादेव और तुलजापुरकी देवीका अनन्योपासक था।

इन दोनों भाइयोंके सम्बन्धमें विचित्र कहानी प्रसिद्ध है। वह इस तरहसे है,—एक दिन शामको विठोजी खेतमें जब घास लेने गये, तो संध्याको किसी कारणवश समय पर वापस न आ सके। भ्रातृ-वत्सल भालोजीसे न रहा गया और वे अन्धकारमयी रात्रिमें ही उन्हें खोजनेके लिये खेतोंकी ओर चल पड़े। रास्तेमें एक मोर और एक दूसरे नीलकण्ठ पक्षीको बायीं ओरसे दाहिनी ओर जाते देख बड़े सन्तुष्ट हुए और इस घटनाको शुभ शकुन समझ कर भाई बिठोजीकी खोज करने लगे। चलते-चलते रास्तेमें एक जगह ठोकर खाकर गिर पड़े। इसके बाद बड़े आश्चर्यसे भालोजीने देखा कि सामने साक्षात् देवी भवानी खड़ी हैं! भालोजी देवीके तेजोमय रूपको देख कर भयभीत हो—बेहोश होकर भूमि पर गिर पड़े। किन्तु भवानीने अपनी दैवी शक्तिसे उनको होशमें लाकर कहा,—"वत्स, घबराओ मत! तुम्हारे वंशमें स्वयं भगवान् पिनाकपाणि शङ्कर अवतार धारण करके हिन्दू-धर्मकी रक्षा करने वाले हैं। वे हिन्दू जातिकी रक्षा करेंगे और इस देशसे यवनोंको भगा देंगे और एक ऐसा हिन्दू राज्य स्थापित करेंगे, जो उनकी २७ पीढ़ियों तक बराबर अखण्ड रहेगा। इस वंशके २७ वें राजा अन्धे होंगे और उनके हाथसे इसका ध्वंस होगा।" इसके बाद भवानीने एक बाल्मीक-मिट्टीके स्तूपकी ओर संकेत कर कहा,—"वत्स, इस बाल्मीकको तोड़नेसे तुमको अनेक धन-रत्न मिलेंगे।" इस पर भालोजी पहले तो उस बाल्मीकको तोड़ने में इधर-उधर करने लगे। क्योंकि भालोजीको भय था कि कदाचित् कोई प्रेतात्मा उस धनका मालिक हो तो कुपित होकर मुझे मार

डालेगा और यदि यह न भी हो तो, मुसलमान शासकोंको मालूम हो जाने पर वे लोग धन तो हरण कर ही लेंगे, साथ ही मार भी डालेंगे ! भालोजीके इस भयको ताड़ कर भवानीने फिर आदेश दिया कि,— 'वत्स, भयभात मत हो, इस धनको ले जाकर श्रीगण्डामें शेशजी नायकके यहां सुरक्षित रखो ।' इस प्रकारसे आदेश देकर देवी तो अन्तर्हित हो गईं और भालोजी इस दृश्यको स्वप्नवत् देख कर बेहोश हो गिर पड़े ।

इतनेमें ही बिठोजी जब घर पहुंचे और उन्होंने सुना कि भालोजी उन्हींको तलाश करने गये हैं और अभी तक वापस नहीं आये तो वे भी उन्हें खोजने चले । रास्तेमें बिठोजीने देखा कि उनके ज्येष्ठ भ्राता भालोजी बेहोश हुए भूमि पर पड़े हैं ! बिठोजीने उनको उठा कर होशमें किया और उनसे भवानी-संवादकी सब बातें सुनीं । अगले दिन प्रातःकाल दोनों भाइयोंने वहां आकर उस बालमीक-मृत्तिका-स्तूपको तोड़ डाला और उसमेंसे बहुतसा धन मिला, जिसे लेकर वे श्रीगण्डामें नायक शेशजीके पास पहुंचे । भवानीने नायकको भी उसी प्रकारसे दर्शन देकर उस धनको गुप्त रूपसे रखनेका आदेश दिया था । सुतरां—नायकने उस धनको लेकर रख लिया । इसके बाद इसी धनसे भालोजीने भिरुलमें एक मन्दिर और सिंगनापुरमें दूसरा मन्दिर और तालाब निर्माण कराये । सन् १५७७ में भालोजी और बिठोजीने जगपतराव नामक एक महाराष्ट्र सरदारके यहां नौकरी कर ली । इसके बाद बहुत शीघ्र वे अपनी शक्तिके प्रभावसे सूबेदार हो गये । कुछ दिनों बाद इन्होंने अपनी सेना लेकर बीजापुर पर चढ़ाई कर दी और उसे लूट लिया । बीजापुरके वीरोंको परास्त कर जब दोनों भाई अपने घरको लौटे तो अहमदनगरके राजाने इनके शौर्य-वीर्यको देख कर इन्हें अपने यहां नियुक्त कर लिया । धीरे-धीरे

भालोजी और बिठोजीने अहमदनगरके प्रधान आमात्य लूखाजीका ध्यान अपने कर्म-कलापोंसे अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। इसका फल यह हुआ कि जगपतरावकी भग्नी दीपाबाईके साथ भालोजीका विवाह हो गया। इसके बाद अनेक वर्ष व्यतीत हो गये, परन्तु भालोजीके कोई सन्तान उत्पन्न न हुई। सुतरां पुत्र-प्राप्तिके लिये भालोजी नाना प्रकारके धर्मानुष्ठान करने लगे। भालोजी मुसल्मान फकीरोंको भी बहुत मानते थे। अहमदनगरके पीर शाह-शरीफ पर आप बहुत श्रद्धा रखते थे। कहते हैं इन पीर साहेबकी मिन्नत करनेसे ही भालोजीकी पत्नीके गर्भसे सन् १५९४ में प्रथम पुत्रका जन्म हुआ, और सन् १५९७ में दूसरे पुत्रने जन्म लिया। इससे भालोजीने पुत्र जन्मको पीरजीकी ही कृपा समझ कर पीरके सम्मानार्थ प्रथम पुत्रका नाम—साहाजी और दूसरे पुत्रका नाम शरीफजी रखा। इस विषयमें बहुत लोगोंका मतभेद भी है। केवल साहाजी और सरीफजी नाम होनेसे भालोजी जैसे वीरबाहू और भवानीपूजकने पीरके नाम पर ही ये नाम रखे थे, इसका इतिहासमें कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है। हो सकता है—पक्षपाती मुसल्मान-इतिहासकारोंने जैसे शिवाजीको डकैत, नरहन्ता तक लिख दिया है, उन्होंने ही इन वीरोंके नामोंकी अन्वय इस प्रकारसे लगा कर मुसल्मान-धर्मकी महत्ता लोगोंको दिखानी चाही हो। हम तो समझते हैं—जो जगज्जननी-शक्ति भवानी का उपासक है, उसे किसी भी पीर-फकीरकी पूजा करनेकी आवश्यकता नहीं है। अप्रामाणिक शृङ्खलाविहीन इतिहासका यही फल होता है—चाहे जिसके साथ जिसको जोड़ दिया जाता है। यूरोपीय इतिहास-लेखकोंकी इसीलिये इतनी प्रशंसा की जाती है—कि वे इतिहासमें अपना नोन-मिर्च मसाला न लगा कर जो कुछ अच्छा या बुरा वस्तु-तत्त्व होता है, उसीको इतिहासके पृष्ठोंमें स्थान देते

हैं। क्योंकि इतिहास बहुत ही पवित्र वस्तु है।—खैर, जो कुछ भी हो भालोजी इस समय प्रचुर धनके अधिकारी, एवं उच्च राजकर्मचारी तथा दो पुत्रोंके पिता होकर भवानीके वर-प्रदानके सफल होनेकी प्रतीक्षा करने लगे। इसके बाद भालोजीके ज्येष्ठ पुत्र साहाजीके विवाहका लूखाजीकी कन्याके साथ आयोजन होने लगा।

पहले महाराष्ट्रमें प्रत्येक समृद्धिशाली व्यक्तिके यहां होलिकोत्सव के समय तरह-तरहके धर्मानुष्ठान-समारोह होते थे। जिस घरमें पूजा और षोड्शोपचारका समारोह होता था, उसमें अनेक बन्धु-बान्धव आकर आतिथ्य स्वीकार करते तथा भोजनादि पान-सुपारी लेकर तृप्त होते थे। एक बार ऐसे ही होलिकोत्सवके समय जब कि अहमदनगरके प्रधान-आमात्य लूखाजीके यहां आनन्दोत्सव-समारोह हो रहा था, तब भालोजी भी निमन्त्रण पाकर अपने ज्येष्ठ पुत्र साहाजी को साथ लेकर लूखाजीके यहां आनन्दोत्सव-समारोहमें सम्मिलित हुए। इस समय साहाजीकी वयस पांच वर्षकी थी। देखनेमें बड़े सुन्दर प्रतीत होते थे। लूखाजीने साहाजीके रूप-लावण्य पर मुग्ध होकर उनको अपने पास बड़े आदर और प्रेमसे बुलाया और अपनी अल्पवयष्का कन्या जीजाबाईके पास बैठा कर दोनोंके हाथोंमें अबीर-गुलाल दिया और कहा—कि तुम लोग भी खेलो। इसके बाद निमन्त्रित लोगोंको सम्बोधन कर कहा,—"देखो भाइयो, ये दोनों सुन्दर बालक कैसे अच्छे मालूम होते हैं।" यह बात कह कर लूखाजीने कन्यासे पूछा,—"क्यों जीजा, तू इसके साथ विवाह करेगी?" इसी समय दोनों बालक-बालिका एक दूसरे पर कुंकुम-डाल कर खेलने लगे। सभास्थित निमन्त्रित लोग बालकोंके इस क्रीड़ा-कौतुकको देख कर बहुत प्रसन्न हुए। इसी समय सुयोग समझ कर भालोजीने सबको सम्बोधन कर कहा,—"भाइयो, आप लोगोंने
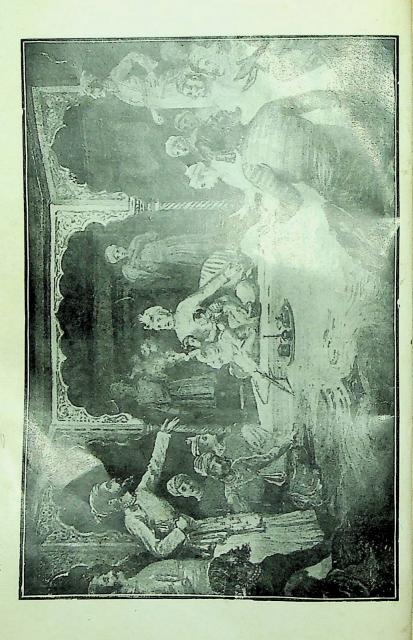
सबने सुन लिया है कि लूखाजी हमारे साथ वैवाहिक-सूत्रमें आवद्ध हो गये हैं।" लूखाजीने इस बातका कुछ भी उत्तर न दिया। वे चुपचाप रहे। क्योंकि उन्हें स्वयं भी इसमें कुछ आपत्ति नहीं थी। किन्तु लूखाजीकी पत्नीको यह सम्बन्ध स्वीकार नहीं था। लूखाजीने जब अपनी पत्नीके सामने इस प्रसङ्गको उठाया, तो वह बड़ी बिगड़ी और रुष्ठ होकर बोली—"इतनी स्पर्द्धा! इतना घमण्ड! दरिद्र भालोजी अपने पुत्रके साथ मेरी कन्याका विवाह करेगा! यह बात उसने किस साहससे की है?" इस प्रकारसे कोप-प्रकाश करती हुई लूखाजीकी पत्नी उनकी भर्त्सना करने लगी। अगले दिन लूखाजीने फिर भालोजीको निमन्त्रण दिया, परन्तु भालोजीने कहला भेजा कि—"यदि लूखाजी अपनी कन्याके साथ सचमुच साहाजीका विवाह करना स्वीकार करें तो मैं निमन्त्रिग स्वीकार कर सकता हूं'।' परन्तु लूखाजी जब इसके लिये तैयार न हुए तो भालोजी अहमदनगरको छोड़ कर तुलजापुर चले गये। वहां जाकर उन्होंने फिर भवानीसे सहाय्य-भिक्षा मांगी। कहते हैं कि भवानीने फिर स्वप्नमें सक्षात दर्शन देकर भालोजीको अश्वासन दिया और कहा कि—जो तुम्हारी इच्छा हो करो—तुम्हारी कामना पूर्ण होगी। इसके बाद भालोजीने घर पर आकर दो सूअरोंको मार डाला और उनके गलेमें एक-एक चिट्ठी बांध कर उनको प्रधान मस्जिदोंमें फिकवा दिया। प्रातःकाल जब मुसलमानोंने मस्जिदोंमें आकर यह कृत्य देखा, तो वे आपेसे बाहर हो गये। उन्होंने नवाबको सूचना दी। नवाबने चिट्ठियां खुलवा कर पढ़ीं तो उनमें लिखा देखा, भालोजीने लिखा था कि—"लूखाजीने अपनी कन्याका विवाह मेरे पुत्रके साथ करनेका वायदा किया था, किन्तु इस समय मुझको दरिद्र समझ कर उन्होंने प्रतिज्ञा पालन करनेसे इन्कार कर दिया है। इससे समाजमें मुझे बड़ा अप-

मानित होना पड़ा है। मुसलमान लोग हमारे राजा हैं, उनसे विवाद करनेकी मेरी जरा भी इच्छा नहीं है। परन्तु यदि वे राजा होकर भी इस विषयमें न्याय नहीं करेंगे तो मुझे अनन्योपाय होकर दूसरे मार्ग-का अवलम्बन करना पड़ेगा।"

इसके बाद भालोजी भवानीकी अश्वासवाणी सुन कर अहमद-नगर पहुंचे और वहां जाकर उन्होंने लूखाजीको द्वन्द-युद्धके लिये आह्वान किया। इस पर सूरतजा निजामशाहने लूखाजीको बुला कर भालोजीके पुत्रसे कन्याका विवाह करनेका आदेश दिया। परन्तु लूखाजीने भालोजीकी दरिद्रताका उल्लेख कर कहा—कि मैं उनके लड़केसे अपनी कन्याका विवाह कैसे कर सकता हूं ? इस पर निजा-मशाहने उसी समय भालोजीको पांच हजारी सेनाका सेनापति बनाने की घोषणा की तथा पूना और सूबा नामक नगर जागीरमें दिये और इसके साथ ही 'राजा' की उपाधिसे विभूषित किया। इस-पद प्राप्तिके होने पर लूखाजी तो प्रसन्न हो ही गये—साथ ही उनकी पत्नी भी सन्तुष्ट हो गई और बड़े आनन्द-समारोहके साथ सन् १६०४ में साहाजीका विवाह लूखाजीकी कन्या जीजाबाईसे हो गया। इस घटनाके १५ साल बाद तक भालोजी अत्यन्त राज-सम्मान प्राप्त कर सन् १६१९ में परलोकवासी हुए। उस समय साहाजीकी अवस्था २५ वर्ष की थी।

इसके बाद दिल्लीमें जब मुगलोंकी तूती बोलने लगी, तो उन्होंने दक्षिण पर भी चढ़ाई की। दाक्षिणात्य मुसलमान राज्योंको नष्ट-भ्रष्ट तो मुगल नहीं कर सके—परन्तु उनकी शक्ति क्षीण अवश्य हो गई थी। भारतमें उस समय ऐसी कोई बात नहीं थी, जिसे मुगल अपनी शक्तिके प्रभावसे न कर सकते हों। परन्तु दक्षिणके मुसलमान राज्यों को एकाएक तहस-नहस कर डालनेकी क्षमता भी उनमें नहीं थी।

एक बार मुगलोंने जब अहमदनगरके राज्य पर आक्रमण किया, तो लूखाजी जादव और साहाजी भोंसलेने असाधारण शौर्य और क्षमता का प्रदर्शन किया। इसके बाद निजामशाही वंशके दशवें नृपतिका देहान्त हो जानेसे राज्यमें बड़ी विश्रृङ्खलता आ गई। निजामके दोनों पुत्र उस समय अत्यन्त शिशु थे। एक दिन विधवा बेगमने राज्यके प्रधान कर्मचारियोंको बुला कर पूछा कि सुव्यवस्थित रूपसे राज्य-कार्यका परिचालन कैसे हो सकता है। सब लोगोंने एक स्वर होकर साहाजी भोंसलेकी कार्यदक्षता एवं शौर्य-वीर्यकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और कहा कि साहाजीको प्रधान-मन्त्री बनानेसे राज्यका काम सुचारू रूपसे चलेगा। इसके बाद राजसभामें सहाजीको बुला कर अपने दोनों शिशु-पुत्रोंको उनकी गोदमें बैठा कर मन्त्रित्व-पद पर प्रतिष्ठित किया। सभी राजकर्मचारी इस नियुक्तिसे परम प्रसन्न हुए और नाना प्रकारकी बहूमूल्य वस्तुवें उपहारमें देकर अपनी-अपनी भक्ति प्रदर्शित की।

लूखाजी जादव जामाताकी अभावनीय उन्नति देख कर भीतर ही भीतर जल उठे। अन्तमें ईर्ष्या और अभिमानसे प्रज्वलित होकर लूखाजीने चुपचाप दिल्लीके मुगल-सम्राट् शाहजहांको दौलताबाद पर आक्रमण करनेका निमन्त्रण भेज दिया! दिल्ली-सम्राट्ने छः हजार अश्वारोही सैनिकोंको मीर जुमलाके साथ दौलताबाद पर चढ़ाई करने को भेजा। इधर लूखाजी भी अपनी सेना लेकर अहमदनगर पर चढ़ाई करनेके लिये मुगल-सेनासे जा मिले। साहाजीने जब यह संवाद सुना तो वे सन्न रह गये और निजामके बाल-बच्चोंको साथ लेकर उन्होंने माहुलीके दुर्गमें आश्रय लिया। उधर लूखाजीको जब इस बातका पता लगा तो उन्होंने माहुली-दुर्ग पर ही आक्रमण कर दिया। साहाजी अमित पराक्रमके साथ दुर्ग-रक्षा करने लगे।

साहाजीकी सेना मुगल-सेनाकी अपेक्षा बहुत ही कम थी, सुतरां धीरे-धीरे साहाजीकी सेना मर कट कर गिरने लगी। अन्तमें साहाजीकी सेना इतनी थोड़ी रह गई कि दुर्गकी रक्षा करनी असम्भव हो गई। तब साहाजीने सोचा कि मेरे कारण ही मेरे प्रभु पर यह विपत्ति आई है, इसलिये मेरा मन्त्री पद त्याग करना ही उचित है। इससे प्रभु-पुत्रों और उनके राज्यकी रक्षा हो सकेगी। सुतरां साहाजीने चुपचाप एक दूत बीजापुर भेज कर अपनी नियुक्तिके लिये प्रार्थना की और वहांके ब्राह्मण मन्त्रीने सहर्ष साहाजीकी सेवाको स्वीकार किया। सुतरां एक दिन रात्रिको साहाजीने पुत्र शम्भाजी और गर्भिणी पत्नी जीजाबाईको साथ लेकर पांच हजार अश्वारोही सैनिकों सहित बीजापुरको प्रस्थान किया। मार्गमें सुयोग देख साहाजीको बन्दी करनेके लिये लूखाजीने साहाजी पर आक्रमण कर दिया। साहाजी बड़ी आफतमें पड़े। उन्होंने एकसौ सैनिकोंकी रक्षामें पुत्र-पत्नीको रवाना करके स्वयं लूखाजीका सामना किया और अन्तमें निरापद भाग कर बीजापुरमें जा पहुंचे। बीजापुरमें पहुंचने पर बीजापुर वालोंने बड़े समारोहसे साहाजीका स्वागत किया।

इधर पुत्री जीजाबाईको अकेली देख लूखाजीने उसे बन्दी करके पांचसौ अश्वारोही सैनिकोंके पहरेमें सिडनी-दुर्गमें भेज कर कैद कर दिया और स्वयं जामाता साहाजीका पीछा करने लगे। जीजाबाई सीडनीके दुर्गमें बन्दिनी होकर किसी प्रकारसे दिन काटने लगी। स्वामी परित्यक्ता जीजाबाई पिताके व्यवहारसे अत्यन्त क्षुब्ध हो दुर्गमें संयम पूर्वक रहती हुई—दुर्गकी अधिष्ठातृ देवी शिवा-भावानीकी पूजामें नीरत हो गई। भगवान्‌की कैसी आश्चर्यलीला है। जिन्होंने भविष्यमें धर्म-रक्षाके लिये अमित विक्रम और शोणित-कृपाण हाथमें ले चारों दिशाओंको कम्पायमान कर दिया था, जिनका हृदय,

आत्म-संयम रूपी अति दुलर्भ भूषणोंसे भूषित हो चुका था, इष्ट देवताकी भक्ति जिनमें सञ्चारित हो गई थी। अनासक्त वैरागीकी तरहसे जिन्होंने समस्त जीवन यापन किया था, जब वे मातृ-गर्भमें अबस्थान करते थे, तभी यह समस्त गुणराशि, मातृरक्तमेंसे होकर उनके शरीरमें प्रविष्ट हुई थी। इसके बाद यथासमय सन् १६२७ ईस्वीकी छठी एप्रिलको शिवाजीका जन्म हुआ। दुर्गाकी अधिष्ठातृ देवीका नाम 'शिवा' था—इसलिये जीजाबाईने अपने इस तेजस्वी पुत्र का नाम भी शिवाजी रखा।

शिवाजीके जन्मसे पहले लूखाजी जादव और अहमदनगरके कतिपय सम्भ्रान्त व्यक्तियोंने मुगलोंका साथ दिया था, किन्तु साहाजीने उनका अनुकरण नहीं किया—इससे लूखाजी उन पर नाराज हुए। साहाजीकी वीरताके सम्बन्धमें स्वर्गवासी प्रसिद्ध महाराष्ट्र बङ्गला लेखक—श्रीयुत सखाराम गणेश देउस्करजीने लिखा है कि,—"सन् १६३३ में मुगल सम्राट्ने अहमदनगर पर आक्रमण कर उसको ध्वंस कर दिया था, किन्तु साहाजीने उसे स्थापन करनेके लिये बार बार प्राणपणसे चेष्ठा की। साहाजीने अनेक बार मुगलोंके साथ बड़े पराक्रमके साथ युद्ध कर उनको पराजित किया, किन्तु इतना सब कुछ करने पर भी अभीष्ट सिद्धि नहीं हुई। अन्तमें विवश हो अहनदनगर-राज्य स्थापित करनेकी लालसा परित्याग करनी पड़ी। साहाजी वीर, उदारचेता पुरुष थे। उस समय महाराष्ट्रमें उनका समकक्ष कोई नहीं था। अब तक भी शिवाजी, पेशवा बाबाजीविश्वनाथको छोड़ कर उन जैसा कोई वीर महाराष्ट्रमें उत्पन्न नहीं हुआ। उस समय दक्षिणके समस्त मुसल्मान नरेश साहाजीके आतङ्कसे काम्पते थे। साहाजी अनेक राज्योंके मन्त्रीत्व पद पर अधिष्ठित हुए—परन्तु प्रकृत राज-काज वे स्वयं ही करते थे। इस बीचमें

काल-चक्रमें फंस कर साहाजीको कई बार अपनी नीतिमें परिवर्तन भी करना पड़ा था। परन्तु अब भी वे इस बातकी चेष्टा करते थे कि कर्तव्यसे विमुख न हो जांय। जिसके पक्षमें साहाजी हो जाते थे, वह अपनेको महा-सौभाग्यशाली समझता था। साहाजीके चरित्रका विश्लेषण करनेसे यह भी स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि मुसलमानोंकी पराधीनताकी बेड़ियोंको काट कर फेंकने और स्वतन्त्र हिन्दू-राज्य स्थापित करनेकी उन्होंने कई बार चेष्टा की। किन्तु रामचन्द्रकी कीर्तिसे जैसे महाराज दशरथकी कीर्ति विलुप्त हो गई थी—और समस्त प्रजाके मुखसे राम-नाम मुखरित होने लगा था, ठीक वही दशा साहाजीकी भी हुई। छत्रपति महात्मा शिवाजीकी कीर्तिके सामने साहाजीकी कीर्ति लुप्त हो गई।"

लूखाजी, जामाता साहाजोको जैसो घृणाको दृष्टिसे देखते थे, ठीक वैसे ही मुगल भी उनसे डाह करते थे। लूखाजीकी मृत्युके बाद निजामशाहीके एक प्रधान कर्मचारी मालदारखांने दिल्लीके मुगल-सम्राट् शाहजहांसे मेल-मिलापका रुख दिखा कर शाहजहांकी कृपा प्राप्त कर ली। अन्तमें शाहजहांकी ही कृपा बनाई रखनेके लिये इस कर्मचारीने जीजाबाईको मस्ताना-दुर्गमें कैद कर दिया। शिवाजी भी जीजाबाईके साथ थे। मुगलों और निजामशाहीके दुष्ट कर्मचारियोंने बालक शिवाजीको कई बार पकड़नेका प्रयास किया, किन्तु महीयसी जीजाबाईकी बुद्धिमत्तासे शिवाजी उन लोगोंके हाथ न लगे। इधर साहाजो वार-बार हिन्दू-राज्य स्थापन करनेकी चेष्टामें लगे रहे। साहाजीके उद्योग जब सब विफल हो गये, तो अन्तमें उन्होंने भी मुगल-सम्राट् शाहजहांको आत्म-समर्पण कर दिया। इसके बाद जीजाबाईको भी कैदसे मुक्त कर दिया गया और पुत्र तथा पत्नी सहित साहाजी सानन्द रहने लगे। सम्राट्-शाहजहांने पहले अहमद-

नगरको ध्वंस करनेके लिये बीजापुरके साथ सन्धि की थी—साहाजी के आत्म-समर्पण करनेसे उसकी अब कोई आवश्यकता न रही। साहाजी फिर बीजापुरके प्रधान आमात्य हो बीजापुरमें रहने लगे। इसके साथ ही उन्हें पूना और सूबाके सूबे भी प्राप्त हो गये थे।

शिवाजीके समय पूना शहर जैसा था, अबके पूनासे उसका कोई सादृश्य नहीं है। वर्तमान पूनाकी श्री-सम्पद और सौन्दर्यके सामने प्राचीन पूनाकी तुलना नहीं हो सकती। शिवाजीके समय पूना छोटी-छोटी झोपड़ियोंका एक साधारण गांव था। आज जहां रेल्वे और मोटर गाड़ियां दौड़ रही हैं, उस समय वहां भीषण हिंसक-पशु विहार करते थे। आज नल-नहरों द्वारा जहां शश्य-श्यामला भूमि नजर आती है, वहांकी भूमि उस समय जलाभावके कारण मरु-भूमिका रूप धारण किये हुए थी। मुगल और महाराष्ट्र संग्राममें लिप्त होकर महाराष्ट्र-भूमिको रक्तकी नदियोंसे प्लावित कर रहे थे। भयभीत होकर लोग खेती-बाड़ी भी नहीं करते थे। ऐसी ही दशामें साहाजी ने पत्नी और पुत्र शिवाजीको दादाजी कोण्डदेवके भरोसे पर वहां रखा।

द्वितीय-परिच्छेद ।

शिवाजीकी शिक्षा ।

दादाजी नामके उपरोक्त सज्जन, बहुदर्शी विचक्षण ब्राह्मण थे। वे संयमी, न्याय-परायण और राजनीति विशारद थे। वे किसानोंको विना करके भूमि देते और उनसे खेती आदि करा कर पूनाको बसानेकी चेष्टा करते, एवं शिकारियोंको पुरस्कार देकर हिंस्र-जन्तुओंको वहांसे भगाते थे। दादाजीके इस उद्योगसे सन्तुष्ट होकर साहाजीने उन्हें इन्दुपुर और बरामति नामक स्थानोंका प्रबन्धभार दे दिया। दादाजी भी बुद्धि और परिश्रमसे इन स्थानोंकी उन्नति करने लगे। दादाजीकी साधुताके सम्बन्धमें एक कहानी भी प्रसिद्ध है। दादाजीने बहुत पहले एक बाग लगाया था। यथासमय जब उस बागके आम्र-वृक्षोंसे फल उतरने लगे तो उन्होंने एक फल खा लिया, परन्तु तुरन्त ही उन्हें आत्म-ग्लानि हुई। दादाजी बहुत दुखी हुए। प्रायश्चित्त-स्वरूप उन्होंने अपना दाहिना हाथ काट देना चाहा, जिससे वह फल तोड़ा था! लोगोंने इसका कारण पूछा। दादाजीने कहा,—"इन फलों पर स्वामी साहाजीका आधिपत्य है। मैंने विना आज्ञाके फल तोड़ कर बड़ा अनर्थ किया है। इस पर लोगोंने उन्हें बहुत समझा-बुझा कर हाथ काटनेसे मना किया। तब दादाजीने हाथ तो नहीं काटा, परन्तु उससे आजन्म कोई काम नहीं लिया!

इन्हीं दादाजीको साहाजीने शिवाजीका अभिभावक नियुक्त किया। इसके बाद दादाजीकी अभिभावकतामें रह कर शिवाजीके चरित्रमें दादाजीके गुणोंका सञ्चार होने लगा। इधर शिवाजीकी माता

जीजाबाई स्वामीसे विच्छिन्न होकर स्वाधीनता पूर्वक रहने लगीं। संसारकी समस्त वासनाओंका परित्याग कर धर्मानुष्ठानमें ही उनका समय व्यतीत होता था। वे रामायण और महाभारतको विशेष प्रेमके साथ पढ़तीं। महाभारत और रामायणका पाठ करते समय बालक शिवाजी भी उनके पास बैठ कर पौराणिक कथायें ध्यानपूर्वक सुनते। राम, लक्ष्मण, भीष्म, द्रोण, अर्जुन प्रभृति—महावीरोंके शौर्य-वीर्यकी कथा सुन-सुन कर शिवाजी आत्मविस्मृतसे हो जाते थे। इन वीरोंके पुरुषार्थ, प्रतिज्ञा, वीरत्व, रणनैपुण्य, धर्मानुराग एवं त्यागशीलताको स्मरण कर शिवाजी उत्साहित होते थे। बाल्य-कालमें ही शिवाजीके हृदयमें वीर-पूजाका भाव भर गया था। भविष्यमें इसी वीर-पूजाके भावोंके प्रभावसे शिवाजीने भारताकाशमें दीप्तिमान् वीर-नक्षत्रका स्थान ग्रहण किया। बाल्यावस्थामें ही शिवाजीने निर्भीकताका पाठ पढ़ा था। अन्धेरी रातोंमें वे गहन-वनों और निविड़-अन्धकारपूर्ण पर्वतमालाओंमें भ्रमण करते रहते थे। महीयसी जीजाबाईके पुण्य-चरित्र एवं आत्म-संयमका शिवाजी पर गहरा प्रभाव पड़ा। मातृ-पूजा के प्रभावसे ही उनमें मातृ-पितृ-भक्ति तथा गुरु-भक्ति और इसके बाद देश-भक्ति उदित हुई थी।

पूनासे पश्चिमकी ओर सह्याद्रि पर्वत-मालाके पास ६० मीलका लम्बा चौड़ा एक विस्तीर्ण समतल भूमि-क्षेत्र है। इस स्थानको 'मवाल' कहते हैं—और यहांके अधिवासियोंको मावले। प्रायः समस्त प्रदेश-अरण्य एवं पर्वतोंसे घिरा हुआ है। यहांके अधिवासी मावले बहुत समयसे अत्यन्त दृढ़कार्य, साहसी एवं बलिष्ट होते चले आये हैं। मावलोंको अपने अधीन करनेके लिये दादाजी उन लोगोंके साथ सदैव सद्व्यवहार करते थे। शिवाजी अल्पवयससे ही उन वीर-मावलों के साथ इन पर्वत-मालाओं पर कभी पैदल और कभी घोड़े पर

भ्रमण किया करते थे। अभी तक यद्यपि शिवाजीने कुछ विशेष शिक्षा नहीं पाई थी, तथापि पर्वत-समूहोंके मनोरम दृश्य, निविड़ अरण्यकी गम्भीर निस्तब्धता, अनन्त आकाशमें मेघ-समूहोंकी अबाध-गति और क्रीड़ा एवं मावला-बन्धुगणोंकी सरल अकृत्रिम प्रीतिने उनके जीवनको कवित्वमय और चरित्रको उदार बना दिया था। मावला-गण यद्यपि बड़े परिश्रमी थे, परन्तु गरीबीके मारे अन्न वस्त्रके बिना बड़ा कष्ट पाते थे। समस्त दिन भर कठिन काम करने पर भी जिसको भोजन मिल जाता, वह महा भाग्यवान् समझा जाता था। दादाजी भी उन लोगों पर विशेष कृपाका भाव रखते थे। वर्षों तक उन लोगोंसे दादाजीने भूमि-कर नहीं लिया। जहां तक बन पड़ा उनकी सहायता ही की। इन्हीं सब कारणोंसे मावला लोग भी दादाजीके बहुत अनुरक्त हो गये थे। पहले-पहले दादाजीने शिवाजीको मावलोंके साथ घूमने-फिरनेसे बहुत कुछ मना किया, परन्तु शिवाजी ने इस पर ध्यान नहीं दिया। अन्तमें जब दादाजीने शिवाजीके चरित्रका अच्छी तरहसे विश्लेषण किया, तो उनके चरित्रमें संयम, शौर्य-वीर्य एवं साहस आदि अनेक गुण प्रच्छन्नभावमें दृष्टिगोचर हुए। तब दादाजीने मावलोंके साथ फिरने-घूमनेसे मना करना छोड़ दिया। इसके बाद इन्हीं गुणोंको जाग्रत करनेके लिये दादाजीने शिवाजीकी उचित शिक्षा-दीक्षाका प्रबन्ध किया। दादाजी अब पूरी तरहसे इस बातको समझ गये थे कि यह सिंह-शिशु एक दिन जाग्रत होकर देशका बहुत बड़ा कल्याण साधन कर सकेगा। इस प्रकारसे विचार कर दादाजीने शिवाजीको स्वयं अस्त्र-विद्या एवं राजनीति-शिक्षा देनी आरम्भ की। दादाजीकी असाधारण बुद्धि, पाण्डित्य और परिश्रमके कारण बहुत शीघ्र शिवाजीने भी अपनी निर्मल एवं प्रखर बुद्धिका परिचय देना आरम्भ कर दिया।

शिवाजीके पिता साहाजी अभी तक युद्धमें ही लिप्त थे। जब जरा शान्ति मिली तो बीजापुरके निजामशाहके यहां जाकर फिर मन्त्री हो गये और यथापूर्व काम-काज करने लगे। साहाजीके बड़े पुत्रका बाईस वर्षकी अवस्थामें देहान्त हो चुका था और शिवाजी अभी बहुत छोटे थे, दूसरे जीजाबाईसे बहुत दिनसे विच्छेदसा हो रहा था। इसके सिवा लूखाजीके वर्तावसे साहाजी चिढ़ भी बहुत गये थे। साहाजी का ख्याल था कि लूखाजीकी पुत्री उनकी पत्नी जीजाबाईसे उत्पन्न पुत्र; उनके अनुरूप न होगा—इसलिये शिवाजीके पिता साहाजीने और एक विवाह कर लिया था। सुतरां बीजापुरमें नई पत्नीके साथ सानन्द रहते थे—और जीजाबाई तथा शिवाजीको एक प्रकारसे भूलसे गये थे। इन्हीं दिनों उन्होंने बालक शिवाजीके गुणोंकी प्रशंसा इधर-उधर उड़ती हुई सुनी तो—वे उधर आकर्षित हुए। कई दिन तक साहाजी पुत्र और पत्नी जीजाबाईके सम्बन्धमें सोचते रहे। अन्तमें साहाजीने अपने दूत भेज कर दोनोंको बुला भेजा। पुत्र शिवाजी सहित जीजाबाई बीजपुरकी ओर प्रस्थित हुई। मार्गमें बालक शिवाजी ने देखा कि कई एक मुसलमान कसाई गो-हत्या कर रहे हैं। उसी समय बालक शिवाजीने गो-हत्याका तीव्र प्रतिवाद करते हुए अपने भावी जीवनका मार्ग निश्चित कर डाला। इसके बाद जीजाबाई, पुत्र—शिवाजी सहित बीजापुर पहुंची। साहाजी पुत्र शिवाजीके रूप-लावण्य एवं तीव्र बुद्धि तथा दृढ़ अङ्ग-प्रत्यङ्गको देख कर मोहित हो गये। बीजापुरमें रहते हुए जब कितने ही दिन बीत गये, तो वहां भी बालक शिवाजीकी गुण-गरिमाका बखान होने लगा। धीरे-धीरे बीजापुरके निजामशाह तक बालक शिवाजीकी प्रशंसा पहुंची। निजामने साहाजीसे पुत्र शिवाजीको दरबारमें लानेका अनुरोध किया। साहाजी पुत्र शिवाजीको बहुत कुछ समझा-बुझा कर निजामशाहके

दरबारमें ले गये। शिवाजी पिता सहित दरबारमें उपस्थित हुए और साधारण अभिवादन कर निर्भीकता-पूर्वक वीरासन से बैठ गये। निजामशाह अल्पवयष्क—बालक शिवाजीके साहस, तेजस्विता, औद्धत्यको देख कर विस्मित हुए। इसके बाद बड़े प्रेमसे शिवाजीसे सम्भाषण किया और अनेक प्रकारके वस्त्राभूषणोंसे सम्मानित कर विदा किया। इसके बाद शिवाजी बराबर दरबारमें पिताजीके साथ जाते और चुप-चाप जाकर एक सम्माननीय आसन पर बैठ जाते। उस समय मुसलमान शासकोंके यहां सलाम करनेका एक अद्भुत नियम था। जब लोग दरबारमें जाते तो भूमि पर हाथ और शिर रख कर सलाम करते थे। इस सलामको दरबारी-भाषामें 'कोर्निस' कहते थे। शिवाजी जब दबारमें जाते तो—वे उस प्रकारसे सलाम नहीं करते थे। पिताजीने भी कई बार शिवाजीको समझा कर कहा कि,—"बेटा, इस समय देशमें मुसलमानोंका राज्य है, उनके अनुकूल ही चलना ठीक है।" परन्तु शिवाजीने कहा,—"पिताजी, आपकी आज्ञाका पालन करना मेरा कर्त्तव्य है, परन्तु मुसलमानोंको जो गो और ब्राह्मणके शत्रु हैं और हम लोग हैं उनके दास, इसलिये इस जातिसे हमारा मेल नहीं हो सकेगा।" शिवाजीकी इस दृढ़ताको देख कर साहाजीने भी फिर कुछ नहीं कहा। हां, एक दिन निजामशाहने शिवाजीको बुला कर पूछा कि—भाई तुम और लोगोंकी तरहसे मुझे सलाम क्यों नहीं करते? प्रत्युत्पन्नमति शिवाजीने तुरन्त जवाब दिया कि पिताजी तो मुझे प्रतिदिन सिखा-पढ़ा कर लाते हैं, परन्तु यहां आकर मैं सब भूल जाता हूं। कृपा कर मेरे साधारण सलामको ही आप दरबारी सलाम समझ लिया करें। इस पर निजामशाहने भी कुछ ध्यान नहीं दिया।

कुछ दिनोंके बाद शिवाजीके पिता साहाजीने विठोजी मोहितकी

रूपवती कन्या सईबाईके साथ शिवाजीका विवाह कर दिया और उन लोगोंको फिर पूना भेज दिया गया। आगे चल कर इन्हीं सईबाईके परामर्शके अनुसार शिवाजीने कितने ही दुष्कर कार्य सम्पन्न किये थे।

यथासमय बीजापुरसे चल कर जीजाबाई पुत्र शिवाजी तथा नव पुत्र-वधू सईबाई सहित पूना पहुंची। पूनेमें दादाजीने एक फूसके छपरोंका बड़ा भव्य भवन तैयार किया था और उसका नाम रखा था,—'राजमहल।' कई मावले कर्मचारी रख कर एक छोटासा राज-दरबार बना दिया था। जीजाबाई शिवाजी और पुत्रबधू सहित इसी 'राजमहल' में रहने लगीं। दादाजी शिवाजीको उपयुक्त शिक्षा देते हुए उनकी स्वाभाविक शक्ति और प्रतिभाको विकसित करनेके काममें लग गये। इसी तरह धीरे-धीरे इस 'राजप्रासाद' में रहते हुए शिवाजी को कई वर्ष व्यतीत हो गये।

वय:क्रमसे शिवाजी जितने ही यौवनमें पदार्पण करने लगे, उतने ही यौवनचाञ्चल्यको परित्याग कर भविष्य-जीवनकी चिन्ता करने लगे। वे दाक्षिणात्य मुसलमानोंके शौर्य-वीर्य और सम्पद तथा दिल्ली-के मुगल-सम्राट्के असीम प्रतापकी कहानियां सुनते और उधर हिन्दुओंके गृह-विच्छेद, शक्ति हीनता और हिन्दू-गौरवके नष्ट होनेकी बात सुन कर कांप उठते। पूर्व पुरुषाओंने मुसलमान-शासकोंके अधीन रह कर जैसे आनन्द चैनके दिन विलासितामें व्यतीत किये थे, उनकी कभी कल्पना भी न होती। माता जीजाबाईके सम्पर्कसे शिवाजीमें संयम, वैराग्य, त्यागशीलताके भावोंका सञ्चार हो गया था। सांसारिक सुखोंकी जरा भी लालसा नहीं रही थी। इसके सिवा हिन्दुओंके लुप्त गौरव और मुसलमानोंके अत्याचारोंको देख कर शिवाजीने एक प्रकारसे निश्चयसा कर लिया था कि हिन्दूजातिका

पुनरुत्थान करना ही होगा। विशेष कर शिवाजी जब किसी मुसलमान-राजकर्मचारी द्वारा हिन्दुओंके देव-देवीके मन्दिरों और मठोंके चूर्ण-विचूर्ण होनेकी बात सुनते, तो उत्तेजित हो जाते और इसके प्रतिकारका कुछ प्रकृति उपाय सोचते। साधारण लोग जिस समय सुख और विलासितामें रह कर आनन्द करते हैं, भगवान् द्वारा प्रेरित मनुष्य उस समय भगवान्‌को स्मरण कर अपनी जीवन रूपी नौकाके सम्बन्धमें कर्त्तव्य स्थिर करते हैं। शिवाजी भी षोड्श वत्सर यौवन-की स्वाभाविक चञ्चलताको परित्याग कर ज्ञानवृद्ध प्रवीण व्यक्तिकी तरहसे अपने जीवनके उद्देश्योंको स्थिर करते। अन्तमें उन्होंने स्थिर किया कि हिन्दू शक्तिको पुनः जाग्रत करके हिन्दू-धर्म और जातिकी रक्षा करनी होगी। एवं भारतभूमिमें पुनः हिंदू-गौरव-पताका उड़ानी होगी।

पहले इस बातका उल्लेख हो चुका है कि शिवाजी मावलोंसे विशेष प्रेम रखते थे और उनका अधिक समय उन्हीं लोगोंके सहवासमें व्यतीत होता था। शिवाजी—उन लोगोंके साथ प्रगाढ़-प्रेम और सहानुभूति रखते थे। उनके कष्टोंको यथासाध्य कम करनेकी चेष्टा करते थे। मावले भी देवचरित शिवाजीके प्रगाढ़ प्रेम और सहानुभूति तथा कर्तृत्वको देख कर उनके अनुरक्त हो गये थे। शिवाजी मावलोंके साथ पहाड़ों पर शिकार खेलने जाते और समस्त पर्वतों और कन्दराओंमें भ्रमण करते। इससे उनका शरीर और भी शक्तिशाली और कष्ट-सहिष्णु हो गया था। मावले लोग शिवाजीके इतने अनुरक्त हो गये थे कि अपने सभी कार्य उनकी सम्मति और आज्ञासे करते थे। शिवाजीकी अभूतपूर्व वीरता एवं त्याग और सहिष्णुताको देख कर मावलोंके नेताओंने भी शिवाजीको आत्म-समर्पण कर दिया था। आगे चल कर इन्हीं वीर मावलोंको लेकर शिवाजीने

अपनी दृढ़ सेनाका सङ्गठन किया था। मावलोंके तीन नेता शिवाजी के विशेष अनुरक्त थे। जेसाजीकङ्क, तानाजी मालसूरे एवं बाजी फसलकर। इन तीनों नेताओंने शिवाजीकी सेनाओंका सेनापतित्व ग्रहण कर अनेक युद्धोंमें विजय प्राप्त की थी। जिसका उल्लेख आगे चल कर मिलेगा।
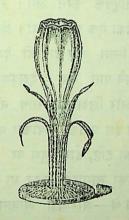
तृतीय-परिच्छेद ।

बीजापुरके साथ संघर्ष ।

जिस समय शिवाजीकी आयु बारह बरसकी थी, उस समय उन्होंने एक शिलाको साफ कर उस पर मराठीमें लिखा था कि,—"चन्द्रमाको मनुष्य पहले छोटा देखता है, किन्तु क्रमशः देखता-देखता, उसे पूर्ण चन्द्रमाके रूपमें देखने लगता है। यह शिला साहाजीके पुत्र शिवाजीके लिये उपयुक्त है।"

सन् १६४३ में शिवाजीने सोलहवें वर्षमें पदार्पण किया—और सब कार्य स्वयं स्वाधीनतापूर्वक करने लगे। रोहिदा-दुर्गके निकट रोहिदेश्वर नामक महादेवका एक मन्दिर था। शिवाजीने इस मन्दिर को अपने प्रबन्धमें ले लिया और दादाजी देशपाण्डे नामक एक बीजापुरी ब्राह्मणको अपने पास रखा। देशपाण्डेके पिताने उसको बहुत समझाया-बुझाया और शिवाजीके साथ न रहनेका आदेश भी दिया। परन्तु देशपाण्डेने इस बातको स्वीकार न किया। इसके बाद सन् १६४६ में शिवाजीकी दृष्टि, तोरण-दुर्ग पर पड़ी; जो बीजापुरके अधीन था और साहाजीकी जागीरके निकट था। वर्षा-ऋतुमें सैनिक लोग भी नीचे उतर आते थे—और वहां आवागमन बन्द हो जाता था। शिवाजीने एक दिन अपने सेनापतियों और एक हज़ार मावलों-को ले जाकर उस पर आक्रमण किया और बिना रक्तपातके ही उस पर अधिकार कर लिया। दुर्ग पर अधिकार करके शिवाजीने अपने सब लोगोंको इसकी मरम्मत पर लगा दिया, जिससे यह सुदृढ़ हो जाय। दुर्गकी जब मरम्मत हो रही थी, तभी एक दिन एक जगहसे

स्वर्ण-मुद्राओं (अशर्फियों) का एक गुप्त खजाना बाहर निकल आया।

इधर दुर्ग पर अधिकार करनेका समाचार बीजापुर पहुंचा तो निजाम बहुत अप्रसन्न हुआ। शिवाजीने पहले ही एक पत्र लिखा कि—आपने जिस नायकको इस दुर्गका नायक नियुक्त कर रखा था, वह बड़ा असावधान था, इसलिये मैंने उसे हाथमें ले लिया है। कृपा कर अब मुझे इसका नायक समझ लीजिये। शिवाजीकी बुद्धिके सामने निजाम परास्त हो गया। निजामने साहाजोकी जागीरके साथ उस दुर्गको भी शिवाजीको दे दिया। इसके बाद निजामको प्रसन्न करके शिवाजीने 'तोरण-दुर्ग' से पांच मीलके फासले पर 'राजगढ़' नामक एक और दुर्ग तैयार करवाया।

शिवाजीके इस साहसको देख कर मोरोपिङ्गले, अन्नाजीदत्त, श्रीराजी-पन्त, रावजीसोमनाथ, दत्तजी गोपोनाथ, रघुनाथपन्थ एवं गङ्गाजी, पाङ्गोजी प्रभृति प्रसिद्ध पुरुष—बहुत प्रसन्न हुए और इन लोगोंने शिवाजीके कार्यमें योगदान किया। किन्तु दादाजीने शिवाजीके इस कार्यका प्रतिवाद किया। दादाजी धर्मपरायण व्यक्तिथे। वे जानते थे कि मैंने और साहाजीने बीजापुरका अन्न खाया है, अतः उसके विरुद्ध आचार करना न्याय-सङ्गत नहीं है। किन्तु शिवाजीने दादाजीके इस परामर्शको स्वीकार नहीं किया। अन्तमें विवश होकर दादाजीने शिवाजीकी इन बातोंका उल्लेख करके—उनके पिता साहाजीके पास एक पत्र भेजा। इस समय साहाजी मद्रास प्रान्तके एक युद्धमें लगे हुए थे—वे कोई उत्तर न दे सके।

इधर बीजापुरके निजामशाह शिवाजीके कार्योंसे बहुत खिन्न हो गये थे। उन्होंने मद्रासमें एक दूत भेज कर साहाजीसे जवाब-तलबी की। साहाजीने उत्तरमें कहला भेजा कि मुझे शिवाजीके

सम्बन्धमें कुछ मालूम नहीं है, कि वे क्या कर रहे हैं। परन्तु तब भी मैं शिवाजीको चेतावनी दिये देता हूं। सुतरां साहाजीने एक चेतावनीको पत्र शिवाजीको लिख भेजा, जिसका आशय यह था कि शिवाजीने राजगढ़-दुर्गको अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित करनेका जो उपक्रम किया है, उसे वे बन्द कर दें। पत्र दादाजीके हाथ लगा। उन्होंने शिवाजीको बहुत तरहसे समझायाबुझाया। परन्तु शिवाजी नहीं माने।

दादाजीकी आयु इस समय ७० वर्षकी हो गई थी। जरा—और तरह-तरहकी चिन्ताओंने उनकी शारीरिक शक्तिको क्षीण कर दिया था। दादाजी अब प्रायः बीमार ही रहते थे। शिवाजीने प्राणपणसे उनको सेवा और चिकित्सा की, परन्तु कुछ फल न हुआ। दादाजी दिन पर दिन क्षीण ही होते चले गये। अन्तमें दादाजीका अन्त समय आ पहुंचा। उन्होंने अपने सब कर्मचारियों एवं शिवाजीको सामने बुला कर जागीरके कोषकी चाभियां शिवाजीके हाथोंमें सौंप दीं—और कर्मचारियोंको भविष्यमें शिवाजीकी आज्ञा और आदेश माननेका उपदेश दिया। इसके बाद शिवाजीको एकान्तमें बुला कर जननी जन्म-भूमिकी सेवा करनेका अन्तिम उपदेश दिया। शिवाजीने पिता-गुरु-तुल्य दादाजीके उपदेशोंको मस्तक झुका कर स्वीकार किया। इसके कई दिनके बाद दादाजीने शरीर परित्याग किया। यह कहना निष्प्रयोजन है कि, शिवाजीको दादाजीके परलोकवाससे बहुत दुःख हुआ।

दादाजीके परलोकवासके समय फिरङ्गजी मशेला, शम्भाजी मोहितको छोड़ कर शेष सभी कर्मचारी उपस्थित थे। दादाजीकी मृत्युके बाद फिरङ्गजीने चाकनेरका कर्तृत्व-भार शिवाजीके हाथोंमें सौंप दिया। किन्तु शिवाजीने वहांका प्रबन्धक उन्हींको बना रहने

दादाजी कोण्डदेवकी मृत्यु
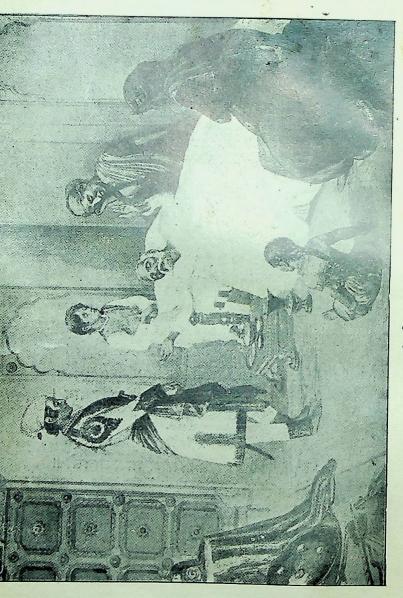
दिया, बल्कि और भी दो एक ग्रामोंका प्रबन्ध-भार उनको दे दिया। शम्भाजी मोहित पर सूबाका भार दिया हुआ था। उन्होंने शिवाजी का आधिपत्य अस्वीकार कर दिया। शम्भाजी मोहित साहाजीकी दूसरी पत्नी तुकावाईके भाई थे। उन्हें अपनी रिश्तेदारीका कुछ अधिक घमण्ड था। इसके सिवा साहाजीने जब तुकावाईसे विवाह किया, तो शिवाजीकी माता जीजाबाईने इसका विरोध किया था, तभीसे मोहितका शिवाजीसे मनोमालिन्य हो गया था। इसीलिये मोहितने शिवाजीका शासन स्वीकार नहीं किया था। शम्भाजी मोहित समझते थे कि वे तो साहाजीके नियुक्त किये हुए कर्मचारी हैं, शिवाजी की आज्ञाका पालन क्यों करें? तब इस प्रकारसे शम्भाजी मोहितको बागी हुआ देख, शिवाजीने एक दिन रात्रिको चुप-चाप सूबा पर तीनसौ मावलोंको लेकर आक्रमण किया और शम्भाजी मोहितको बन्दी करके—बङ्गलौरको अपने पिता साहाजीके पास भेज दिया। इस समय शिवाजीने अपने पिताकी समस्त जागीर पर पूरी तरहसे अधिकार कर लिया था और इस छोटीसी जागीरको एक सुश्रृङ्खलित छोटेसे राज्यके रूपमें परिणत कर रहे थे।

इस बीचमें शिवाजी अपने प्रधान प्रधान कर्मचारियों एवं मावलों को बुला कर मातृभूमिको स्वाधीन करनेका उपदेश देते थे। शिवाजी हिन्दुओंके लुप्त-गौरवका स्मरण करा कर उनके नेत्रोंके सामने मुसलमानोंके अन्याय और अत्याचारोंका मर्मस्पर्शी भाषामें चित्र खींच देते थे। कई बार तो शिवाजीके श्रोता, हिन्दुओंकी दुर्दशाका वृत्तान्त सुन रो उठते थे। शिवाजीके सदाचार, त्यागशीलता एवं देश-भक्तिको देख कर लोग तन्मय हो जाते थे। शिवाजीके मुंहसे शब्द निकलते ही मावला लोग प्राणोंकी आहुति तक देनेको तैयार रहते थे। इसी प्रकारसे पहले छोटी सभा-समितियां होतीं—और

इसके पश्चात् मावलोंके विराट अधिवेशन होने लगे, जिनमें स्वयं शिवाजी देशभक्ति-पूर्ण उपदेश देते हुए उत्साहकी मन्दाकिनी बहा देते। उत्साहित मावलोंकी आनन्द-ध्वनिसे वह प्रदेश मुखरित हो उठता।

एक दिन शिवाजीके बाल्य-बन्धु—वीरवर तानाजीने कोण्डाना-दुर्ग पर आक्रमण करनेका प्रस्ताव किया। शिवाजीने इस प्रस्तावको सहर्ष स्वीकार किया। इसके बाद तानाजीने एक दिन कुछ मावला-वीरोंको लेकर उस पर आक्रमण किया और बातकी बातमें उस पर अधिकार हो गया। निद्रित-मुसलमानोंने दुर्ग-रक्षाका कुछ और उपाय न देख स्वयं आत्म-समर्पण कर दिया। यही दुर्ग—पीछे सिंहगढ़के नामसे प्रसिद्ध हुआ। शिवाजीने तानाजीकी प्रखर-बुद्धि, वीरता एवं रण-कुशलताको देख कर उन्हें ही इस दुर्गके शासनका भार दे दिया। इसके बाद इस दुर्गको नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित करने का काम शिवाजीने आरम्भ किया। मुसल्मानोंके साथ न जाने कब घोर-संग्राम आरम्भ हो जाय, इसलिये शिवाजी प्रति मुहूर्त अपनी सेनाको सुसज्जित रखते थे। इस समय शिवाजीके पास ३६ हजार अश्वारोही और १० हजार पदातिक सैनिक थे।

कुछ दिनोंके बाद शिवाजीको ज्ञात हुआ कि पुरन्दर नामक राज्य के नरेशका देहान्त हो गया—और उनके तीनों पुत्र परस्परमें झगडा कर रहे हैं। शिवाजीने इस छोटेसे राज्य पर भी अधिकार कर लिया और मृत-राजाके तीनों पुत्रोंको अपना उच्च-कर्मचारी नियुक्त किया और पुरन्दर-दुर्गका प्रबन्ध-भार प्रसिद्ध मोरो पिङ्गलेको दिया गया।

इस प्रकारसे कितने ही दुर्गों पर अधिकार और उनकी व्यवस्था करनेमें शिवाजीका बहुतसा धन व्यय हो गया था। दैवगतिसे इसी समय कल्याणका शासक, कल्याणसे बीजापुरके यहां खजाना जमा

करने जा रहा था। शिवाजीको भी इसका पता लग गया। शिवाजी ने अपनी एक छोटीसी सेना लेकर उस पर धावा बोल दिया। रक्षक-सैनिकोंको मार भगाया और खजाना लूट कर अपने अधिकारमें कर लिया। बीजापुरके राजस्वको हरण-करना, प्रत्यक्ष रूपसे बीजापुरके साथ संग्राममें लिप्त होना था। सुतरां अब शिवाजीने और आत्म-गोपन करना अनावश्यक समझा—और धड़ाधड़ एकके बाद एक ९ दुर्गों पर अधिकार कर लिया। इनमें लोहगढ़, राजमढ़ो, रोहरी-दुर्ग प्रसिद्ध थे। शिवाजी जिस समय इन दुर्गों पर आक्रमण कर रहे थे—उसी समय शिवाजीके एक अनुचर आवाजी सोनदेवने कल्याण-प्रदेश पर आक्रमग कर उस पर अपना अधिकार कर लिया तथा उसके शासक मोलाना अहमद एवं उसको सुन्दरी पुत्र-वधूको कैद करके शिवाजोके दरबारमें ले आये। सोनदेवने समझा कि शिवाजी इस रमणी-रत्नको पाकर बहुत सन्तुष्ट होंगे—ओर अपनी सेवा-दासीके रूपमें ग्रहण करेंगे। जिस समय आवाजी सोनदेव शिवाजीके दर-बारमें इन बन्दीजनोंको लेकर पहुंचा,—उस समय वीरकेसरी शिवाजी उदीयमान सूर्यकी तरहसे अपने ज्योतिर्मय प्रभाव द्वारा सभाको आलोकित कर रहे थे। इसी समय सोनदेव, कल्याणकी लूटका माल और दोनों बन्दियोंको लेकर सभामें उपस्थित हुए। सब लोग रूप-वती सुन्दरी बन्दिनीको देख कर अनुमान लगा रहे थे कि, महाराज शिवाजो इसे उपपत्नीके रूपमें ग्रहण करेंगे और जब सोनदेवने भी कल्याणके आक्रमण और विजय-प्राप्तिके बाद इन लोगोंको बन्दी कर के लानेका सम्बाद सुना कर, सुन्दरीको उपपत्नीके रूपमें स्वीकार करनेका प्रस्ताव किया तो लोगोंको और भी पूर्ण विश्वास हो गया कि इस मुसलमान-रमणीको शिवाजो जरूर उपपत्नीके रूपमें ग्रहण करेंगे। इसके बाद सोनदेवके आदेशसे बन्दिनी सुन्दरीको डोलीसे

उतारा गया और शिवाजीके सम्मुख उपस्थित करके उसका घूंघट खोल दिया गया। सुन्दरीके अद्भुत रूप-लावण्यको देख कर सभा-स्थित लोग स्तब्धसे हो उठे। शिवाजीने भी स्तब्ध—किन्तु स्थिर दृष्टिसे उसको देखा और माता जीजाबाईको स्मरण कर बोले—"माता, किसी प्रकारका भय मत करो। मेरी माता भी यदि तुम्हारी जैसी सुन्दरी होती तो मैं कैसा सुन्दर होता? तुम सन्तानके दिये हुए ये वस्त्राभूषण स्वीकार करो और जहां तुम्हारी इच्छा हो—स्वेच्छापूर्वक जा सकती हो। तुम्हारे पूजनीय श्वसुरको भी मैं मुक्त करता हूं—जहां चाहें जा सकते हैं।" इस प्रकारसे दोनों बन्दियोंको मुक्त कर शिवाजी सभासे उठ कर चले गये। हाय! इन्हीं शिवाजीको पक्षपाती इतिहासकारोंने जो इतने संयमी, धर्मपरायण, त्यागशील, देवचरित थे,—डाकू, नरहन्ता एवं विश्वासघाती बताया है! इसके बाद यथासमय आवाजी सोनदेवको कल्याण-प्रदेशका शासक बना कर शिवाजीने वहां भेज दिया।

इधर कल्याणकी लूट-खसोट एवं अधिकारका सम्बाद बीजापुरके अधिपति—मोहम्मद आदिलशाहके पास भी पहुंचा। आदिलशाहने सोचा कि बिना साहाजीकी सहानुभूति और सहायताके शिवाजी ऐसा साहस कभी न कर सकते। आदिलशाह समझते थे कि शिवाजी तरुण-वयस्क अनभिज्ञ युवक और पर्वतीय युवकोंके साथ रहनेवाला कैसे इतना बड़ा साहसका काम कर सकता है?

इस प्रकार शिवाजीके कार्योंका उनके पिता साहाजीको अपराधी समझ कर आदिलशाहने साहाजीको एक कड़ा पत्र लिखा—और उसमें चेतावनी दी कि शिवाजीको शीघ्रातिशीघ्र समझावें। उत्तरमें साहाजीने अपनेको बिल्कुल निर्दोष बताया और शिवाजीके कार्योंके लिये उन्हें ही उत्तरदायी बताया। इसके साथ ही साहाजीने एक पत्र
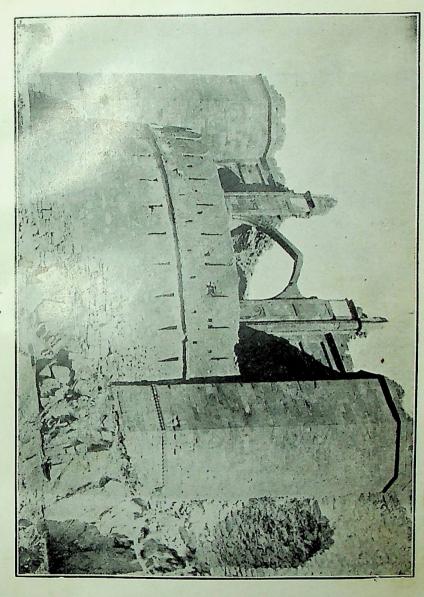
बीजापुर—दुर्ग और प्राचीर।

शिवाजीको भी भेजा। पत्रमें साहाजीने लिखा था कि—तुमने बार-बार मना करने पर भी मुसलमान-शासकोंसे विरोध कर लिया है—सो अच्छा काम नहीं हुआ और बीजापुरके विरुद्ध तो कुछ भी नहीं करना चाहिये था। पिताके इस पत्रका जो उत्तर शिवाजीने दिया; उसका मर्म इस प्रकार है,—"पिताजी, मुसलमानोंके अत्याचार दिन पर दिन अधिक होते जाते हैं। अब और अधिक इनको सहन नहीं किया जा सकता। आज जगह जगह मुसलमान द्वारा, हिन्दू-देवी-देवताओंके मन्दिरों, मठों और मूर्तियोंको चूर्ण-विचूर्ण किया जा रहा हैं। मन्दिर और देवताओंको लूट-खसोट कर नष्ट-भ्रष्ट किया जा रहा है। हिन्दू-रमणियोंको भगा कर उन पर बलात्कार किया जाता है। बीजापुरके अधिकारी अपनी विलास-प्रवृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये निरीह ग्रामीणों पर अत्याचार करते थे। उनका घास और अन्न लूट लेते थे, रमणियोंके भूषण और दरिद्र प्रजाका यथासर्वस्व हरण करके मन-मानी मौज करते थे। कई बार बीजापुरके राजाको इसकी सूचना दी गई, परन्तु वहां कुछ भी सुनाई नहीं हुई। अतएव उसीके प्रति-विधानके लिये मुझे लाचार होकर खड़ा होना पड़ा। जिस समय मुसलमानोंने विजयनगरको ध्वंश किया, उस समय उन्होंने हिन्दुओं पर क्या क्या अत्याचार नहीं किये थे? तीन राज्योंके मुसलमानोंने परस्परमें सम्मति करके अमरपुरीके तुल्य विजयनगरको ध्वंश कर दिया था। बहुत दिनोंके लिये दक्षिणमें हिन्दू-गौरव लुप्त हो गया। जब मुसलमान हिन्दुओंकी सम्मान-रक्षा नहीं करते, तो अब प्रत्येक हिन्दूका यह कर्त्तव्य हो गया है कि वह अपने आत्म-सम्मानकी रक्षा करे।"

शिवाजीके पाससे इस प्रकारसे उत्तर पाकर साहाजीने फिर नवाबको लिखा कि 'शिवाजी मेरा कहना नहीं मानते। अपने कार्य-

कलापोंका उत्तरदायित्व स्वयं उन पर ही है। आपकी जो इच्छा हो—सो प्रति-विधान कीजिये।' साहाजीका पत्र पाकर भी नवाबको उनकी बात पर विश्वास नहीं हुआ। सुतरां नवाबने साहाजीको गिरफ्तारीके लिये उन्हींके एक सम्बन्धी घोड़-फड़केको नियुक्त किया। साथ ही चेतावनी दी कि शाहाजीको प्रकाश्य रूपसे बन्दी करने पर लोगोंमें उत्तेजना फैलनेका भय है। क्योंकि सर्वसाधारण लोगों पर साहाजी-का अद्भुत प्रभाव है। इसके बाद फड़केने अपना जाल बिछाना आरम्भ किया। एक दिन फड़केने अपने यहां एक पूजाका आयोजन किया। इसमें सम्भ्रान्त लोगोंके लिये भोजनादिका भी प्रबन्ध किया गया था। साहाजी उच्च राज-कर्मचारी एवं फडकेके रिश्तेदार थे, इस-लिये उनको भी निमन्त्रण देना स्वाभाविक था। यथासमय पूजा हुई और भोजनादि करनेके लिये साहाजी भी पधारे। इसी समय नवाबको सूचना देकर देश-द्रोही फड़केने उनको गिरफ्तार करवा दिया! गिरफ्तारीके बाद साहाजीको बहुत तङ्ग किया गया। उनसे यह बात स्वीकार करानेकी तरह-तरहसे चेष्टा की गई कि—हां, मेरे ही परामर्शसे, शिवाजीने उपरोक्त सब काम किये हैं। परन्तु साहाजीने किसी प्रकारसे भी इस बातको स्वीकार न किया! तब नवाबने उनको एक दीवारमें गले तक चुन कर फिर उनसे स्वीकृति लेनी चाही। किन्तु वीरवर साहाजीने उस बातको स्वीकार नहीं किया। तब नवाबने साहाजीसे कहा कि अच्छा तुम एक पत्र शिवाजीको लिख कर यहां बुलाओ। नहीं तो तुम्हारी हत्या की जायगी। इस पर साहाजीने शिवाजीके नाम एक पत्र लिखा—और उसमें सब वृत्तान्त लिख कर बीजापुर आनेको लिखा। शिवाजी पिताका पत्र पाकर बहुत दुःखी हुए। शिवाजी सोचने लगे कि यदि मैं इस समय बीजापुर गया तो मृत्यु निश्चित है और यदि प्राणोंके भयसे मैं न गया तो, पांच सात

दिनमें पिताजीकी मृत्युका संबाद आ ही जायगा। निदान शिवाजी बड़े धर्म-सङ्कटमें पड़े। उन्होंने अपनी बुद्धिमती धर्म-पत्नी सईबाईसे परामर्श किया। सईबाईने शिवाजीको सम्मति दी कि यदि इस समय आप दिल्लीके मुगल-सम्राट्से मिल जायं, तो सब काम हो सकता है। सुतरां शिवाजीने एक पत्र लिख कर—रघुनाथ पन्थको दिल्ली-सम्राट्के पास भेजा। पत्रमें लिखा था कि सम्राट् यदि बीजापुरके कैदखानेसे उनके पिताको मुक्त करा दें—तो मैं उनकी सेवा करूंगा। दिल्ली-सम्राट्ने शिवाजीके शौर्य-वीर्यकी बहुत प्रशंसा सुन रखी थी। वे पत्र पाकर बहुत प्रसन्न हुए और रघुनाथ पन्थको बड़े आदरके साथ दो एक दिन अपने यहां रखा। इसके बाद यह सोच कर शिवाजीको अपना कर्मचारी बना लेनेसे दक्षिणमें मुगल-साम्राज्यका प्रसार होगा—सम्राट्ने शिवाजीको एक पत्र लिख कर '५ हजारी सेनाका सेनापति बनाया और बीजापुरके नवाबको लिख भेजा कि वे साहाजीको तुरन्त मुक्त कर दें। साहाजीको भी सम्राट्ने एक पत्र लिखा कि तुम्हारे पिछले सब अपराध क्षमा कर दिये गये। दिल्ली आने पर अपने मन्त्री-मण्डलमें तुमको एक उच्च पद दिया जायगा। यथासमय साहाजी कैदसे मुक्त कर दिये गये, परन्तु उन्हें बीजापुरमें ही रहनेकी आज्ञा दी गई।

साहाजीके कैदसे मुक्त होनेके सम्बन्धमें प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने लिखा है कि दिल्ली-सम्राट्ने प्रकाश्य-रूपसे साहाजीकी मुक्तिके सम्बन्धमें कुछ नहीं किया था। हां—सारजखां एवं रणदौला खांने बीच-बचाव करके ही साहाजीको कैदसे मुक्त करा दिया था। कुछ भी हो, साहाजी कैदसे मुक्त हो गये और किसी प्रकारकी कोई दुर्घटना नहीं होने पाई।

———

चतुर्थ-परिच्छेद ।

साधु-तुकाराम ।

—*::o::*—

साहाजीकी मुक्तिके बाद चार वर्ष तक शिवाजीने किसी और दुर्ग पर अधिकार नहीं किया। इन चार वर्षोंमें वे अपने अधिकार किये हुए दुर्गोंको सुदृढ़ और सङ्गठित करनेमें लगे रहे। एक बार शिवाजीको बन्दी करनेके लिये बाजीश्यामराजके सेनापतित्वमें बीजापुरके नवाबने दश हजार सैनिकोंको पूनाकी ओर भेजा। किन्तु शिवाजीके सैनिकोंने इनको बुरी तरहसे मार भगाया। शिवाजी निरापद रायगढ़ पहुंच गये और श्यामराज भयभीत होकर वहांसे भाग गया।

इधर साहाजी सानन्द बीजापुरमें रहते थे। परन्तु कहीं बाहर नहीं जा सकते थे। दो एक बार नवाबसे बाहर जानेकी अनुमति मांगी भी थी; परन्तु नवाबने साहाजीको बीजापुरसे बाहर जानेकी अनुमति नहीं दी। परन्तु बीचमें एक ऐसी घटना घटित हुई—जिससे साहाजीकी मनस्कामना पूर्ण हो गई। साहाजीकी अनुपस्थितिके कारण कर्नाटकमें विद्रोह हो गया था। बीजापुरके नवाबने कई बार अपनी सेना भेजी; परन्तु विद्रोह शान्त नहीं हुआ। अन्तमें नवाबकी जब कोई युक्ति काम न कर सकी, तो विवश हो नवाबने फिर वीरवर साहाजीको कर्नाटककी ओर भेजा। कर्नाटकमें पहुंच कर साहाजीने पुत्र शिवाजीको लिखा कि,—"तुम यदि मेरे पुत्र हो; तो विश्वासघातक, कापुरुष धाड़-फड़केको दण्ड देकर अपना कर्तव्य पालन

करो।" कहनेकी आवश्यकता नहीं—पितृभक्त शिवाजीने पिताकी आज्ञाका पालन किया और यथासमय घोड़फड़केको दण्ड देकर—उसके पापका प्रायश्चित्त कराया।

हम पहले बता चुके हैं कि शिवाजी धर्मपरायण एवं महान् आस्तिक पुरुष थे। पौराणिक कथाओंके सुननेका उनको बहुत शौक था। विपद् सह कर भी देवदर्शन ओर कथा श्रवण करनेसे अपनेको वंचित नहीं रखते थे। इसके सिवा शिवाजी परम साधु-भक्त थे। साधु तुकारामका शिवाजी पर गहरा प्रभाव पड़ा था। जिस समय शिवाजी बीजापुरके साथ संग्राम करनेसे विरत होकर अपनी सेना और दुर्गोंको यथावत् रूपमें सङ्गठित कर रहे थे, उस समय साधु तुकारामकी भक्तिकी ओर उनका ध्यान आकर्षित हुआ।

साधु तुकाराम—महाराष्ट्रमें एक पहुंचे हुए साधु माने जाते थे। उनका जन्म इन्द्रायनी नदी तीरवर्ती देहू ग्राममें हुआ था। देहू ग्राम पूनासे आठ-दश मील पश्चिमोत्तरमें बसा हुआ है। देहूके समीपवर्ती लोह-ग्राम निवासियोंके भक्ति प्रेम और धर्मानुरागसे आकर्षित होकर वहां तुकाराम यदाकदा कथा कहा करते और संकीर्तन किया करते थे। इसी स्थानमें सर्वप्रथम शिवाजीकी साधु तुकारामसे भेंटसे हुई थी। इसके बाद भी कई बार भेंट हुई। साधु तुकारामके त्याग-निस्पृहता तथा प्रभुभक्तिको देख कर शिवाजी उन पर बड़ी भक्ति करने लगे थे। एक दिन शिवाजीने अपने दूत द्वारा तुकारामजीसे उनके दर्शन करनेकी आज्ञा मांगी। तुकारामने शिवाजीका नाम सुना था। एवं शिवाजीको धर्मानुरागी तथा स्वदेशभक्त समझ कर साधु तुकाराम मन ही मन शिवाजी पर स्नेह रखते थे। परन्तु साधु तुकारामजीको बहुजनाकीर्ण-वाह्याडम्बर पसन्द नहीं था। त्यागी जीवन आरम्भ होते ही साधु तुकाराम निर्जनताप्रिय हो गये थे। धनी मानियोंसे

मिलने जुलनेमें परहेज करते थे और उन लोगोंकी दान-दक्षिणासे सदा दूर ही दूर रहते थे। इसीलिये साधु तुकारामने शिवाजीके दूतसे कहा,—"भाई; मैं तो पापी नराधम हूं। मेरे पास वस्त्र नहीं, मेरा शरीर जीर्ण शीर्ण है, मैं देखनेमें अत्यन्त कदाकार हूं। मैं वनों, पर्वतोंमें रह कर असभ्योंकी तरहसे जीवन व्यतीत करता हूं। शिवाजी की सभामें हो कितने ही गुणी, ज्ञानी होंगे। शिवाजीको उन्हींकी सम्वर्द्धना करनी चाहिये।" इसके बाद साधु तुकारामने शिवाजीको एक उपदेशपूर्ण पत्र लिखा। पत्र पाकर शिवाजी परम प्रसन्न हुए और सदलबल साधु तुकारामजीकी सेवामें पहुंचे। सभामें पहुंच कर शिवाजीने तुकारामजीको साष्टाङ्ग प्रणाम किया। इसके बाद स्वर्ण-मुद्राओंसे भरा हुआ एक कलश देना चाहा, किन्तु निस्पृह साधु तुका-रामने उन्हें लेनेसे इन्कार कर दिया। तब शिवाजीने वे सब स्वर्ण-मुद्रा उपस्थित अभ्यागत ब्राह्मणोंको बांट दीं। इसके बाद साधु तुकारामने शिवाजीको सम्बोधन कर कहा,—"राजपुत्र, जो हरिभक्त हैं, उनके लिये साधारण कीड़े-मकोड़े तथा राजाधिराज दोनों ही बरा-बर हैं। तुमने जो मुझे उपहार देना चाहा था, उसमें और मृत्तिकामें मेरे लिये कोई पार्थक्य नहीं। हरिभक्त होकर मैंने प्रधान बन्धन मोह और आशाका परित्याग कर दिया है। मेरे लिये तो 'विठोवा' ही सर्वस्व हैं। उनकी कृपासे मैं त्रिभुवनके ऐश्वर्यका अधिकारी हुआ हूं। विठोवा ही मेरे माता पिता हैं, उन्हींके बलसे मैं असीम बलवान् हूं। समग्र वैकुण्ठ मेरे घरमें आ गया है और सर्वत्र भगवानकी प्रभुता प्रतिष्ठित हो गई है। धन, प्रभुता, बल इन तीनोंके कारण मनुष्य सत्ताधारी राजा होता है। किन्तु विठोवाकी कृपासे मैं इन तीनों वस्तुओंसे भी श्रेष्ठ वस्तु पा गया हूं। मुझे प्रसन्न करनेकी यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मैं जिस कार्यसे आनन्दित होता हूं, तुम भी

करो। हरिके नामका गान करो। कण्ठमें तुलसीमाला धारण कर एकादशी व्रत रखो, और अपनेको हरिके चरणोंमें समर्पण कर दो, इसीसे मैं प्रसन्न हो सकता हूं।" साधु तुकारामकी भक्ति-वाणी सुन कर शिवाजी परम प्रसन्न हुए और कई दिन तक लौहगढ़में ठहर कर साधु तुकारामका भक्तिपूर्ण हरिकीर्तन सुनते रहे।

जिस समय साधु तुकाराम हरिकीर्तन करते, उनके नेत्रोंसे प्रेम विगलित होकर भक्ति धारा प्रवाहित होने लग जाती। श्रोतावृन्द भी उसी भावधारामें बहने लगते। मन्त्रमुग्ध होकर लोग संकीर्तन सुनते। शिवाजीने सोचा कि साधु तुकारामको जिस भक्तिके प्रभावसे यह सम्पद मिली है, वह देवताओंके लिये भी दुर्लभ है। मनुष्य-जन्ममें यदि इस प्रकारकी भक्ति प्राप्त न हो तो उसका जीवन ही व्यर्थ है। इस प्रकारसे भक्ति-भावनासे प्रेरित होकर शिवाजी और कुछ दिन वहां ठहर गये।

इधर शिवाजीकी राज्य-कार्यमें शिथिलता देख कर राजकर्मचारी गण बहुत घबड़ाये। उन्होंने माता जीजाबाईको लौहगढ़ भेजा। जीजाबाईने साधु तुकारामको प्रणाम कर कहा,—"महात्मन्; शिवाजी मेरा एकमात्र पुत्र है, जो आपके उपदेशोंको श्रवण कर सांसारिक-कार्योंसे उदासीन हो गया है। समस्त महाराष्ट्र-प्रदेश इसकी ओर देख रहा है। महाराष्ट्रके हिन्दू, इस गौरव-रविके शीघ्र उदित होने की आशा किये बैठे हैं। शिवाजी यदि इस प्रकारसे उदासीन होकर राजकार्यसे विरक्त हो गया, तो यह महत्कार्य —कैसे सम्पन्न होगा ? कृपा कर इसे ऐसा उपदेश दीजिये जिससे यह पुनः राष्ट्रके कार्योंमें अनुरक्त होकर अपना कर्तव्य पालन करने लगे।

जीजाबाईकी बात सुन कर साधु तुकारामने कहा,—"देवी, शिवाजी संकीर्तन सुनने आया है। मैं इस संकीर्तन द्वारा ही उसे

तैयार कर रहा हूं कि वह अपने कर्तव्यको और भी दृढ़ होकर करे।" इसके बाद शिवाजीको सम्बोधन कर साधु तुकारामने कहा,—"देखो राजकुमार, संसारमें सत्कर्म हो भवसागरसे पार उतरनेकी तरणी है। धर्म-शास्त्रोंका कथन है कि स्वधर्म-प्रतिपालन ही वास्तविक धर्म है। जो लोग अपने कर्तव्यका पालन नहीं करते, वे पतित हैं। देशकी रक्षाके लिये संग्राम करना और प्रजाका न्याय पूर्वक पालन करना ही राजाका धर्म है। सर्वसाधारण लोग जैसे अपने परिवारके लोगोंको प्रसन्न रख कर सन्तुष्ट होते है, इसी प्रकारसे राजाको समस्त प्रजाको अपना परिवार समझ कर उसकी रक्षा-सहायता और पालन करना चाहिये। इस प्रकारसे हरिस्मरण करते हुए जो लोग अपना कर्तव्य पालन करते हैं, घर बैठे ही भगवान् उन पर प्रसन्न होते हैं। उन्हें गहन-वनों और पर्वतोंमें भ्रमण करनेकी आवश्यकता नहीं है।"

शिवाजीको साधु तुकारामके सहवास एवं उपदेशसे दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ। उनके ज्ञान-चक्षु खुल गये। इसके बाद उन्होंने राजधानीको प्रस्थान किया।

इसके बाद शिवाजी संकीर्तनके इतने प्रेमी हो गये थे कि एक बार पूनासे १५ मील पर सिंहगढ़में संकीर्तन सुनने पहुंचे थे। प्रति दिन सिंहगढ़ जाते और कीर्तन सुनकर चले आते। इतिहासकारोंका कहना है कि एक बार मुसलमान सैनिकोंने सुयोग पाकर सङ्कीर्तनमें बैठे शिवाजीको बन्दी करना चाहा। शिवाजी तो निरापद भगवान्की कृपासे उन लोगोंके हाथसे बच गये, किन्तु वे सैनिक ही वहां शिवाजीके वीर सैनिकों द्वारा मारे गये।

————

पंचम-परिच्छेद ।

समर्थ-रामदास ।

—::*(:)*::—

चौथे परिच्छेदमें हम साधु तुकारामकी भगवद्भक्ति और शिवाजी पर पड़े उनके प्रभावका उल्लेख कर चुके हैं। इस परिच्छेदमें समर्थ-रामदासका परिचय देते हैं। इतिहासकारोंका कहना है कि महाराष्ट्र को रामदासके ज्ञान, तुकारामकी भक्ति और शिवाजीके बाहूबलने एकत्रित होकर उन्नतिके शिखर पर चढ़ाया था। इन ज्ञानी, भक्त और वीरकी कृपासे ही महाराष्ट्रकी गैरिक हिन्दू राजपताका भारत-वषमें फहराने लगी थी। इसमें सन्देह है कि यदि इन तीनों महा-पुरुषोंका यथासमय सम्मिलन न होता, तो बहुत सम्भव है, महा-राष्ट्रमें राष्ट्रीयताका विकास ही न होता। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता प्रो० यदूनाथ सरकारने समर्थ रामदासके सम्बन्धमें लिखा है कि—"महा-राष्ट्र प्रदेशके जाम्ब-ग्राममें १५६० शाके कीलक सम्बत्सरके चैत्र मासमें रामनवमीके दिन दोपहरके समय महापुरुष रामदासका जन्म हुआ था। पिताका नाम सूर्याजीपन्थ, माताका नाम राणुवाई था। इनसे तीन वर्ष बड़े इनके एक और भ्राता थे, नाम था गङ्गाधर। माता-पिता जिस दिन गङ्गाधरको दीक्षा देने लगे—उस दिन नारायण (रामदास स्वामीके जन्मका नाम) का चित्त चञ्चल हो उठा और प्रातः-काल ही घरबार छोड़ कर जिधरको सींग समाया, उधरको चल दिया। चलते-चलते रास्तेमें एक वेगवती नदी आ पड़ी। बालक उसमें घुस गया और छः मील तक बराबर तैर कर परले किनारे पर पहुंचा।

नदी तट पर एक परम कर्मनिष्ठ एवं परोपकारी ब्राह्मणसे भेंट हो गई। ब्राह्मणने अनाथ ब्राह्मण-बालक नारायणको पहननेके लिये वस्त्र, और यज्ञोपवीत दिया। बालक फिर उसी नदीके किनारेसे होकर चलने लगा। चलते-चलते पञ्चवटी आ पहुंची। इसी स्थान पर बैठ कर बालक नारायणने बारह वर्ष तक तपस्या की। किसी महात्माको कृपासे ध्यान-धारणा और समाधिमें नारायणको सफलता मिली। इसी समयसे नारायणका नाम रामदास पड़ गया। शिक्षा और तपस्या समाप्त कर अब रामदास देश-दशा देखनेके लिये पञ्चवटीसे उठे—और समस्त महाराष्ट्र-प्रदेशमें भ्रमण करने लगे। देशमें पर्यटन कर रामदासने जो कुछ देखा, उससे हृदय टूक टूक हो गया। रामदास स्वामीने उस समयकी देश-दशाका जो भीषण-चित्र अङ्कित किया है, उसे पढ़ कर रोमाञ्च हो जाता है। रामदासने लिखा है कि—'धन सम्पद सब चला गया, समस्त प्रदेश सुनसान और निस्तब्ध है। मनुष्योंके खानेके लिये अन्न नहीं। पहनने और ओढ़नेके लिये कपड़े नहीं। घर बनानेके लिये कोई उपादान नहीं। लोग बुरी तरहसे मर रहे हैं—क्या करें ?—किसी तरहसे भी कल्याण नहीं, "लोगोंकी दुर्दशा देख कर रामदासका हृदय निःशब्द हाहाकार करने लगा। महाराष्ट्रमें उस समय केवल अन्न वस्त्र ही का अभाव नहीं था, किन्तु अपना राज्य न होनेसे चारों ओर अपमान, चारों ओर अशान्ति, चारों ओर नारी-निर्यातन और उन पर अत्याचार हो रहा था। कोई भूखों मर रहा था, तो कोई देश छोड़ कर भाग रहा था। सुन्दरी नारियां प्रत्येक घरमें बैठी रुदन कर रही थीं। उस समय समस्त देशमें पशु-बलका ही प्राधान्य था। बुद्धि, धर्म-अधर्मसे कोई सरोकार न था। किसी बातकी कोई व्यवस्था या मर्यादा चलने न पाती थी। चारों ओर 'जिसकी लाठी, उसीकी भैंस' वाली उक्ति चरितार्थ हो

रही थी किसीको कोई नहीं सुनता था। जिसके जो में जो आता, करता था। स्वामी रामदासने लिखा है कि सब चला गया। न्याय ध्वंश हो गया, सभी लोग अपने-अपने घरोंमें प्रधान बने बैठे हैं।

"रामदास सन्यासी थे, किन्तु संसार-त्यागी नहीं। संसारके लिये, देशके लिये उन्होंने अपनेको नियोजित कर दिया था। इसी लिये संसारत्यागी-विरक्तोंकी तरहसे चुप होकर नहीं बैठे। भारतवर्ष-में लोकशिक्षाका काम सदा ही साधु-ब्राह्मणोंके हाथमें रहा है, परन्तु उस समय साधु और ब्राह्मण या तो व्यक्तिगत मोह-मायामें लिप्त होकर क्षुद्र-स्वार्थोंमें लीन हो गये थे और जो विद्वान्, महात्मा, त्यागी और लोकशिक्षक होनेके योग्य थे, वे संसारसे विरक्त होकर देशके कामको प्रपञ्च समझ कर अपने व्यक्तिगत मुक्ति-साधनमें लगे थे। या उपदेश देते थे—तो कहते थे, यह जगत् मिथ्या है, यहां सत्यका आभास नहीं मिल सकता। स्त्री, पुत्र, कन्या सब मिथ्या हैं। इनकी मोह-मायामें लिप्त होना दुःखजनक है।—ये वेदान्ती लोग भूखों मरते हुए देशवासियोंसे कहते थे, तुम्हारे सामने माता, स्त्री, पुत्र और कन्याएं भूखसे मरती हैं तो मरने दो, तुम विचलित मत हो। शान्त और समाहित होकर केवल हरिनाम स्मरण करो। अना-हारसे उठती हुई पुत्र-कलत्रोंकी करुण-क्रन्दन-ध्वनिको मृदङ्ग और कर्तल-ध्वनिमें लीन कर दो! लकड़ीकी कर्ताल भी यदि नहीं मिलती तो पत्थरोंका तो अभाव नहीं है, पत्थरोंको बजा-बजा कर हरिकीर्तन करो। उपवास! उपवासका भय मत करो। यहां उपवास करोगे तो परलोकमें इन्द्रपुरीमें वास होगा। पहननेके लिये वहां पारि-जातकी माला मिलेगी और भोजनकी जगह अमृत! इस प्रकारके उच्छृङ्खल उपदेशोंके अजीर्णसे लोग कर्तव्यविमुख एवं उद्दण्ड हो गये थे और साधु-सन्तोंको वेदान्त-महिमाके अजस्र कीर्तनसे लोगोंका

ध्यान धर्मसे हट कर अधर्मकी ओर जा लगा था। स्वामी रामदासने लोगोंको अपने प्रभावसे समझाना आरम्भ किया कि जिसे तुम लोग मोह-माया और प्रपञ्च समझते हो, वह प्रपंच नहीं है। उसकी सेवासे ही परोपकार होगा और परोपकारसे स्वर्ग-प्राप्ति। स्वामी रामदासने कहा कि देशवासियोंको शिक्षा देनी होगी, कारण कि भगवान्के महात्म्यको मूर्ख नहीं समझ सकता। कर्ताल और मृदङ्गध्वनिसे पेट नहीं भर सकता। केवल तुलसी-माला धारण करनेसे शान्ति प्राप्त नहीं होगी। देश दुर्दशाग्रस्त है। उसकी आर्थिक स्थिति ठीक करनी होगी। धर्मके साथ कर्म-महात्म्यका भी प्रचार करना होगा। इस कामके लिये गुरु रामदासने एक नवीन दल सङ्गठित किया। रामदासके शिष्य लोक-सेवाके काममें ही नियुक्त किये गये। कर्म और ज्ञान-महिमा प्रचार ही उनके जीवनका उद्देश्य हो गया। इन्हीं नवयुवक शिष्योंको लेकर रामदास स्वामीने समस्त महाराष्ट्रमें अपने कर्म-मन्दिर रूपी मठोंका जालसा बिछा दिया। स्वयं सज्जनगढ़के मठमें रहने लगे—और अन्यान्य मठोंका भार रामदास स्वामीने कल्याण स्वामी, उद्धव-स्वामी एवं देवदास, बालकराम तथा त्र्यम्बक स्वामीको दिया। समस्त महाराष्ट्र-प्रदेशमें रामदास स्वामीके कर्मयोग का प्रचार होने लगा। इन मठोंके स्वामियोंको रामदास स्वामीने उपदेश दिया कि,—'शरीर परोपकारके लिये है। सभी काम करने चाहिये। लोगोंके दुःखमें दुःखी हो और सन्तोषमें सुखी। सबसे प्रिय संभाषण करो। सहिष्णुता सीखो। आलस्यका परित्याग और परिश्रमका आलिङ्गन करो। किसीसे ईर्ष्या मत करो। जो बोया जाता है, वही काटना पड़ता है। शरीरको विपद्में डाल कर भी लोक-सेवा करो। जब तक चन्दन घिस नहीं जाता, उसकी गन्ध भी नहीं जाती। जो अपने जीवनको पवित्र रखता है, उसके उपदेशका लोगों पर प्रभाव पड़ता है। अभिमान और अहङ्कारसे किसीको नीच मत

समझो। जो कुछ कर्तव्य हो उसका तुरन्त पालन करो। भूखोंको भोजन दो, मूर्खोंको शिक्षा देकर उनकी मूर्खताका नाश करो।' इस के बाद महिलाओंको भी रामदास स्वामीने शिष्या बना कर उनसे देशका काम कराया। उनको अन्तःपुरके कारागारोंमें बन्द नहीं रखा। रामदास स्वामीके उपदेशोंके फलसे ही तलवार हाथमें लेकर समय समय पर महाराष्ट्र-वीराङ्गनाओंने वे हाथ दिखाये हैं कि दर्शक दङ्ग रह गये हैं। महाराष्ट्रकी सावित्रीबाईने, मुसलमानोंके उस समय छक्के छुड़ा दिये थे। झांसोकी प्रसिद्ध महीयसी वीराङ्गना अहल्याबाईने तो अपनी वीरताके कारण भारतके इतिहासमें ही अपना नाम अमर कर दिया है। साधु रामदास, त्यागी ब्राह्मण रामदासने रमणियोंको देश-सेवाके कार्यसे विरत नहीं किया। उनकी शिष्याओंमेंसे आमाबाई, बेनाबाईका नाम आज भी महाराष्ट्रवासियोंमें प्रसिद्ध है। अकाबाईके ऊपर भण्डारका भार दिया गया था। बेनाबाई कर्मयोगकी प्रसिद्ध प्रचारिका थीं। उन्होंने मराठीमें 'सीता-स्वयम्वर' नामक एक काव्य रचा है, जो बड़े प्रेमसे पढ़ा जाता है। इसी प्रकारसे सुकण्ठी आमाबाई के भक्ति पूर्ण कीर्तनमें लोग तल्लीन हो जाते थे। इस प्रकारसे राम-दास स्वामीने अलग अलग आदमियोंको अपने काम सौंप रखे थे। शासन-व्यवस्थाको जो लोग प्रमादवश भङ्ग करते थे, उनको रामदास स्वामी दण्ड देते थे। एक बार किसी अपराध पर रामदास स्वामीने अपने एक शिष्यको बेत लगा कर उचित दण्ड दिया था।

"देश-सेवामें रत करनेके लिये रामदास स्वामीने साहित्य-रचना भी की है। उनकी अनेक छोटी-छोटी कवितायें प्रसिद्ध हैं। 'अभङ्ग रामायण' और 'दास-बोध' तो प्रसिद्ध ही हैं। उत्तर भारतमें तुलसी-कृत रामायणको जो स्थान प्राप्त है, वही स्थान महाराष्ट्रमें 'दास-बोध' को प्राप्त है। 'दासबोध' की भाषा बिल्कुल सरल और सर्वसाधारण-

के जानने समझने योग्य होनेसे उसका समस्त महाराष्ट्रमें बहुत प्रचार हुआ है। दासबोधका अक्षर अक्षर उनके व्यक्तित्वको प्रतिफलित करता है। इसमें केवल सरलता ही गुण नहीं है। इसमें स्वदेश-प्रेम, धर्मका माहात्म्य स्थान स्थान पर कीर्तन किया गया है। इसमें लिखा है कि हरिनाम-कीर्तनकी तरहसे देश-कीर्तन भी अनिवार्य है। इसी ग्रन्थमें रामदास स्वामीने वैराग्य, परमार्थवादके स्थानमें अभिनव परमार्थवादका उल्लेख किया है। तात्पर्य यह कि महाराष्ट्रमें दासबोध को देश-प्रेमका वेद समझा जाता है।

"शिवाजी और रामदास दोनों देश-भक्त थे। दोनोंके जीवनका एक ही आदर्श था। मार्ग अलग अलग भले ही हों, परन्तु दोनोंमें इतनी साम्यता थी, जिसने दोनोंको एकके प्रति दूसरेको आकृष्ट कर दिया था। साक्षात्कार होनेपर शिवाजी रामदास स्वामी पर भक्ति करने लगे थे, क्योंकि रामदास संन्यासी, ब्राह्मण-सन्तान, वयोवृद्ध एवं तपस्वी थे। दोनों जीवनके भिन्न-भिन्न पथोंसे चले थे, मध्यमें आकर मिल गये। शिवाजीकी भक्ति और रामदास स्वामीके स्नेहने परस्परमें मिल कर—देशोद्धारके महायज्ञका उद्यापन किया।

"रामदास स्वामीने शिवाजीको उपदेश दिया था कि यवन बहुत दिनोंसे हिन्दुओं पर अत्याचार कर रहे हैं। क्या हिन्दुओंमें कोई ऐसा वीर नहीं जन्मा, जो इनको दण्ड दे सके? इन लोगोंके अत्याचारोंसे देव-मन्दिर नष्ट-भ्रष्ट हो रहे हैं, हिन्दू-तीर्थोंकी दुर्दशा हो रही है। समस्त देशमें अराजकता फैल रही है। पापियोंकी बल-वृद्धिसे पापियोंका बल बढ़ रहा है—और साधु-ब्राह्मणोंके स्थान अपवित्र हो रहे हैं। समस्त देशमें गो-हत्याका बाजार गरम हो रहा है। साधु और ब्राह्मण, तिलक और मालाको परित्याग कर मौलवी और मुल्ला बन रहे हैं। हिन्दू गौरव-लुप्त हो गया है। मुसलमान

शासक निरीह-हिन्दुओं पर रात-दिन अत्याचार कर रहे हैं। इस लिये धर्म-रक्षार्थ सब लोगोंको मिल कर आत्म-विसर्जन करना होगा। देशसे म्लेच्छ-भावको हटा कर—समस्त हिन्दू-जातिको एक हिन्दू-राजपताकाके नीचे लाना होगा। समस्त देशमें अपने शाश्वत-धर्मका प्रचार करना होगा। भगवान्‌का नाम स्मरण कर एक बार समस्त देशमें बिप्लव-वन्हि प्रज्वलित करनी होगी। सब लोग मिल-कर म्लेच्छों पर टूट पड़ो! देशद्रोहियोंको मार भगाओ। सनातन-धमकी स्थापनाके लिये और प्रान्तोंको भी अपने राज्यमें मिला लो। इस समय यदि देशवासी नहीं जागेंगे, तो शीघ्र ही इसका भयङ्कर पश्चात्ताप करना होगा।"

इस प्रकारकी शिक्षा द्वारा शिवाजीके वीर-हृदयने स्वजातीय-प्रेम से उद्‌बुद्ध होकर समस्त महाराष्ट्र जातिको एक झण्डेके नीचे एकत्र किया। इसके बाद महाराष्ट्र जातिको महान जातिके रूपमें परिणत करके, दाक्षिणात्य मुसलमान नरपतिगण तथा महाप्रतापी दिल्ली-सम्राट् के विरुद्ध खड़े होकर शिवाजीने हिन्दू-साम्राज्य-स्थापनाका उद्योग आरम्भ कर दिया।

षष्ठ-परिच्छेद ।

शिवाजीकी पत्नीकी मृत्यु ।

—:o:o:—

पहले इस बातका उल्लेख हो चुका है कि शिवाजीने और नये दुर्गों पर अधिकार तथा राज्य-विस्तारके कामको कुछ दिनोंके लिये स्थगित कर दिया था। परन्तु शिवाजीने देखा कि अब चुपचाप बैठे रहनेसे काम नही चलेगा, तो दक्षिणमें राज्य-विस्तारका उपाय सोचने लगे। बहुत कुछ सोच विचारके पश्चात् शिवाजीको दक्षिणमें राज्य-विस्तार करनेमें एक वाधा प्रतीत हुई। जावालि-प्रदेश दक्षिण-द्वार पर उपस्थित रहनेसे शिवाजीकी इच्छा पूर्ण नहीं हो सकती थी। १६ वीं शताब्दीमें मोर नामक एक मराठा-वंशको जावालिका राज्य, बीजा-पुरके सुल्तानसे प्राप्त हुआ था। इस वंशके आठ आदमियोंने सानन्द बहुत दिनों तक जावालिका राज्य किया और इस बीचमें आसपासके अनेक स्थानोंको अपने अधिकारमें कर लिया। इस राज्यके अधीन बारह हजार मावले सैनिक थे। यहांके राजाने बीजापुरके सुल्तानसे 'चन्द्रराव' की उपाधि भी प्राप्त की थी। शिवाजीने विचारा कि यदि जावालि अपने पक्ष या अधिकारमें न आया, तो समस्त महाराष्ट्र जातिको एक सूत्रमें आवद्ध न किया जा सकेगा। इसके सिवा दक्षिणमें प्रवेश भी होना कठिन है। सुतरां शिवाजी तरह तरहके उपाय सोचने लगे। इसके बाद जो घटना घटित हुई, उसके सम्बन्धमें इतिहासमें दो तरहकी घटनाओंका उल्लेख है। कोई कोई इतिहासकार कहते हैं, कि बीजापुरके सुल्तानने, जब वह किसी प्रकारसे भी शिवाजीको

अपने वशमें न कर सका तो चन्द्रगवको शिवाजीको बन्दी करनेके लिये नियुक्त किया। यह बात शिवाजीको भी किसी तरहसे मालूम हो गई। पहले तो उन्होंने चन्द्ररावको क्षमा कर दिया था, परन्तु चन्द्ररावने जब फिर देशद्रोही-घोड़फड़केके साथ मिल कर शिवाजीको कैद करनेका षड्यन्त्र रचा, तो शिवाजीने जावालि पर आक्रमण कर दिया। दूसरी तरहकी घटनाके सम्बन्धमें दूसरे इतिहासकारोंने लिखा है कि शिवाजीने सोचा कि जावालिको बिना पक्ष या अधिकारमें किये न तो महाराष्ट्र जाति एक हो सकती है-और न राज्य-विस्तार हो सकता है। इस प्रकारसे विचार कर शिवाजीने जावालिके राजा चन्द्ररावके पास अपने एक अत्यन्त कुशल दूत-रघुनाथ वल्लासको भेजा। शिवाजीने अपने इस दूत द्वारा जावालि-नरेश चन्द्ररावको कहलाया कि शिवाजी तुम्हारे साथ अपनी पुत्रीकाविवाह करना चाहते हैं। दूसरी बात यह कि शिवाजी लुप्त-गौरव महाराष्ट्रका पुनरुद्धार करना चाहते हैं, जावालि-नरेश भी हिन्दू है, मराठा है, उसे भी शिवाजीके इस कार्यमें सहयोग देना चाहिये। दूत-ने सब बातें चन्द्ररावसे जा कर कहीं। वंश-मर्यादाकी दृष्टिसे शिवाजी चन्द्ररावसे कुछ नीची जातिके थे—इसलिये उनकी पुत्रीके साथ विवाह करनेकी बात तो इसलिये नहीं मानी गई। रही राष्ट्रोद्धारमें शिवाजी से मिल कर सहयोग करनेकी बात; उसके सम्बन्धमें भी चन्द्ररावने साफ इन्कार कर दिया। उसने कहा कि बीजापुरकी कृपासे ही हम-को यह राज्य मिला है, हम बीजापुरके विरुद्ध शस्त्र नहीं उठा सकते। जब दोनों तरहसे निराशापूर्ण उत्तर मिले तो शिवाजीके दूत रघुनाथने शिवाजीको इसकी सूचना दी और लिखा कि आप सेना सहित तैयार होकर आइये। सुतरां शिवाजी सेना सहित यथास्थान पहुंच गये और उनके दूतने अगले ही दिन जावालिनरेशसे मिलनेके बहाने राजभवनमें जाकर उनको और उनके भाईको कत्ल कर डाला। शिवाजी भी

राज्य-सेना पर टूट पड़े और जावालिको अपने अधिकारमें कर लिया। चन्द्ररावके दो पुत्र एवं समस्त परिवारको बन्दी कर लिया गया। किन्तु हनुमन्तराव नामका एक राजाका कुटुम्बी किसी तरहसे भाग खड़ा हुआ। उसके पीछे शिवाजीने अपने दूत लगा दिये। जावालिसे बहुतसा धन और अस्त्र-शस्त्र प्राप्त हुए।

कुछ इतिहासकारोंने शिवाजीके इस कार्यकी तीव्र शब्दोंमें निन्दा की है। यदि पहली घटना ही ठीक हो तब तो शिवाजी निर्दोष हैं और यदि पिछली घटना ही ठीक है—तो शिवाजीको कुछ लोग दोषी कह सकते हैं। किन्तु शिवाजीको दोषी समझनेसे पहले हमें एक बात स्मरण रखनी होगी। शिवाजी जो प्रयत्न राज्य-विस्तारके लिये कर रहे थे, वह अपने व्यक्तिगत सुख एवं सांसारिक आनन्दोपभोग के लिये नहीं करते थे। उन्होंने बहुत समय तक साधारण—जीवन व्यतीत किया था। उनका एक मात्र उद्देश्य यही था कि किसी प्रकार से अत्याचारी मुसल्मानोंके हाथसे देशका पिण्ड छुड़ाया जाय। इससे भी अधिक वे धार्मिक थे, प्राण देकर भी धर्मको रक्षा करना चाहते थे। ऐसी दशामें उनके मार्गमें जो कण्टक उपस्थित होते थे, उन्हें उखाड़ फेंकना उनका कर्तव्य था। इसीलिये शिवाजीने अपने पिताकी जागीर तकको अपने हाथमें कर लिया था। इसके सिवा शिवाजी बुद्ध, ईसा अथवा चैतन्य भी नहीं थे, जो इस नीतिको ग्रहण न करते।

इधर जावालि पर अधिकार होनेसे समस्त दक्षिण प्रान्तमें शिवाजी की विजय-पताका फहराने लगी और उधर वीर मावलोंने समस्त सह्याद्रि-पर्वतमाला पर अधिकार कर लिया। इसके बाद जब जावालि पर अधिकार हो गया; तो शिवाजीने जावालिसे दो मीलकी दूरी पर 'प्रतापगढ़' नामक एक नया दुर्ग बनवाया और मन्दिर बनवा कर

अपनी आराध्या-भवानीकी मूर्तिको स्थापित किया। प्रतापगढ़में देवी-मूर्ति स्थापन करनेके सम्बन्धमें एक कहानी प्रसिद्ध है। भोंसला-परिवार सदासे ही भवानीका भक्त रहा है। सभी भोंसला वंशके आदमी वर्षमें एक बार तुलजापुर जाकर भवानीका दर्शन करते थे। परन्तु बीजापुरके साथ शत्रुता हो जानेके कारण—तुलजापुर जाना शिवाजीके लिये विपज्जनक था। इसलिये उन्होंने पहले 'रोहरी' नामक स्थानमें भवानी-मन्दिर बनानेका निश्चय किया था। परन्तु शिवाजी को एक दिन स्वप्न हुआ कि रोहरीकी अपेक्षा महाबलेश्वरमें मन्दिर बनवाना अधिक श्रेयस्कर होगा। अगले ही दिन शिवाजीने वहां जाकर भवानी-मन्दिरका स्थान निश्चय किया। यथासमय भवानीका भव्य-मन्दिर बन कर तैयार हो गया। इसके साथ ही वहां एक सुदृढ़ दुर्ग भी निर्माण किया गया। यह भवानी-मन्दिर और दुर्ग ऐसे स्थान पर बनाया गया है, जहांसे महाराष्ट्र-योद्धा मुसलमानोंकी गति-विधिको देख कर उनके आक्रमणको रोक सकते थे।

अभी तक शिवाजीने मुगल-सम्राट्के विरुद्ध अस्त्र-धारण नहीं किया था। मुगलोंकी शक्ति उस समय अपरिसीम थी। धन और सेनाका बल असीम था। शिवाजी समझते थे कि यदि किसी कारण से मुगल-सम्राट्को अप्रसन्न कर दिया तो हिन्दू-साम्राज्य स्थापित करनेका विचार स्वप्नवत् हो जायगा। शिवाजी बुद्धि-कौशलसे बीजा-पुर और दाक्षिणात्य मुगलोंकी ही शक्तिको नष्ट करनेकी चेष्टा कर रहे थे। सन् १६५३ में सम्राट् शाहजहांका प्रखर-बुद्धि पुत्र औरङ्ग-जेब दक्षिणमें प्रबल पराक्रमके साथ शासन कर रहा था। सुतरां शिवाजी और बीजापुर दोनों ही मुठभेड़ होनेसे परहेज करते थे। इसी समय बीजापुरके सुलतान महम्मदअली शाहकी मृत्यु हो जानेसे औरङ्गजेब बीजापुर पर आक्रमण करनेका आयोजन कर रहा था।

शिवाजीने सुयोग समझ कर अहमदनगरके शासनकर्ता मुल्तफातखां द्वारा औरङ्गजेबको कहला भेजा कि यदि मुगल-सम्राट् हमारी प्रार्थना स्वीकार करें—तो मैं औरङ्गजेबको सहयोग दूं। शिवाजीने औरङ्गाबादमें औरङ्गजेबके पास एक दूत भेज कर कहलाया कि यदि मुगल सम्राट् मुझे अपनी ओरसे बीजापुर और मेरे अधिकृत दुर्गों और स्थानों पर शासन करनेका अधिकार दें तो मैं बीजापुर पर आक्रमण करनेमें सहायता दूं। औरङ्गजेबने शिवाजीकी बातको स्वीकार कर लिया। इधर बीजापुरवालोंने अपनेको विपन्नावस्थामें देख कर स्वयं शिवाजीसे सहायताकी प्रार्थना की। शिवाजीने सुयोग समझ कर तीन हजार सैनिकोंको लेकर चढ़ाई कर दी और अहमदनगर तथा जूनाको परास्त करते और लूटते हुए बीजापुरकी ओर अग्रसर हुए।

इधर औरङ्गजेबको भी इसका पता लगा। औरङ्गजेबका हृदय शिवाजीके इस काण्डको देख कर दग्ध हो गया। सुनरां क्रोधोन्मत्त औरङ्गजेबने अपने सेनापतिका आज्ञा दी कि—'शिवाजी पर एक दम आक्रमण कर उनके अधिकृत स्थान छीन लिये जांय और उनको मार डाला जाय। रास्तेमें जितने ग्राम और नगर मिलें, उनको नष्ट कर दिया जाय। देव-मन्दिरों और तीर्थोंको चूर्ण-विचूर्ण कर दिया जाय। समस्त नगरोंमेंसे होकर जहांसे हमारी सेना जाय, गोहत्या की जाय।' इस प्रकारकी आज्ञा देकर औरङ्गजेबने सेनापति नसीरखां और हजारखांको तीन हजार अश्वारोही सेना देकर शिवाजीका पीछा करनेको भेजा। इस समय शिवाजी जूनामें ठहरे हुए थे। शिवाजीको जब यह बात मालूम हुई तो वे वहांसे किसी तरहसे भाग कर अहमदनगर जा पहुंचे। परन्तु इधर जूनामें शिवाजी और मुगलोंके सैनिकोंमें घोर युद्ध होने लगा। इस संग्राममें अल्पसंख्यक महाराष्ट्र सेनाको बहुत हानि उठानी पड़ी और मुगलोंको विजय प्राप्त हुई।

शिवाजीके पिता शाहाजी ।

इसके बाद औरङ्गजेबने नसीरखांको आज्ञा दी कि वह शिवाजीका पीछा करे और उनको ससैन्य मार डाले, किन्तु वर्षाऋतुका आरम्भ हो जानेके कारण नसीरखां—औरङ्गजेबकी आज्ञाका पालन न कर सका।

इसी समय मुगल-सम्राट् शाहजहां बीमार हो गया। इस बीमारी में सम्राटके परलोकवास हो जानेकी आशङ्कासे सम्राट्के पुत्र आपसमें गद्दीके लिये लड़ने भिड़ने लगे। इस बातको सुन कर सम्राट्का प्रखर-बुद्धि पुत्र औरङ्गजेब भी बीजापुरसे सन्धि करके यहांसे चलता बना और जाते समय अधिकारियोंको शिवाजी पर तीक्ष्ण दृष्टि रखनेकी आज्ञा देता गया। शिवाजीने सोचा कि यह तो बहुत बुरा हुआ। बीजापुर और मुगल-सेना मिल कर यदि उनके दुर्गों पर आक्रमण कर दें, तो आत्मरक्षा ही करनी कठिन हो जायगी। इसलिये शिवाजी ने एक और कौशलका अवलम्बन किया। औरङ्गजेबके दिल्ली-प्रस्थान करनेसे पहले ही शिवाजीने एक दूत द्वारा प्रस्ताव कर भेजा कि यदि औरङ्गजेब शिवाजीके पिछले अपराधोंको क्षमा कर दे, तो शिवाजी भविष्यमें मुगलोंके अनुकूल होकर उनको सहयोग-प्रदान कर सकते हैं। उत्तरमें औरङ्गजेबने लिखा कि, "तुमने जो अपराध किये हैं, वे क्षमा करने योग्य नहीं हैं, परन्तु जब तुम पश्चात्ताप कर रहे हो, तो मैं क्षमा करता हूं। यदि तुम अपने पिताकी समस्त जागीर और अपने अधिकृत दुर्गों पर अधिकार करना चाहते हो तो अपने सोन पण्डितको पांच सौ सैनिकोंके साथ यहां भेज दो तथा तुम स्वयं हमारे राज्यकी सीमाकी रक्षाका भार अपने ऊपर लो। सोन पण्डित को शीघ्र भेजसे ही तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार होगी।"

शिवाजीके साथ मौखिक शिष्टाचार कर औरङ्गजेब जाते समय अपने सेनापति एवं बीजापुरके अधिकारियोंको चेतावनी देता गया

शिवाजीके पिता शाहाजी ।

इसके बाद औरङ्गजेबने नसीरखांको आज्ञा दी कि वह शिवाजीका पीछा करे और उनको ससैन्य मार डाले, किन्तु वर्षाऋतुका आरम्भ हो जानेके कारण नसीरखां—औरङ्गजेबकी आज्ञाका पालन न कर सका।

इसी समय मुगल-सम्राट् शाहजहां बीमार हो गया। इस बीमारी में सम्राटके परलोकवास हो जानेकी आशङ्कासे सम्राट्के पुत्र आपसमें गद्दीके लिये लड़ने भिड़ने लगे। इस बातको सुन कर सम्राट्का प्रखर-बुद्धि पुत्र औरङ्गजेब भी बीजापुरसे सन्धि करके यहांसे चलता बना और जाते समय अधिकारियोंको शिवाजी पर तीक्ष्ण दृष्ट रखनेकी आज्ञा देता गया। शिवाजीने सोचा कि यह तो बहुत बुरा हुआ। बीजापुर और मुगल-सेना मिल कर यदि उनके दुर्गों पर आक्रमण कर दें, तो आत्मरक्षा ही करनी कठिन हो जायगी। इसलिये शिवाजी ने एक और कौशलका अवलम्बन किया। औरङ्गजेबके दिल्ली-प्रस्थान करनेसे पहले ही शिवाजीने एक दूत द्वारा प्रस्ताव कर भेजा कि यदि औरङ्गजेब शिवाजीके पिछले अपराधोंको क्षमा कर दे, तो शिवाजी भविष्यमें मुगलोंके अनुकूल होकर उनको सहयोग-प्रदान कर सकते हैं। उत्तरमें औरङ्गजेबने लिखा कि, "तुमने जो अपराध किये हैं, वे क्षमा करने योग्य नहीं हैं, परन्तु जब तुम पश्चात्ताप कर रहे हो, तो मैं क्षमा करता हूं। यदि तुम अपने पिताकी समस्त जागीर और अपने अधिकृत दुर्गों पर अधिकार करना चाहते हो तो अपने सोन पण्डितको पांच सौ सैनिकोंके साथ यहां भेज दो तथा तुम स्वयं हमारे राज्यकी सीमाकी रक्षाका भार अपने ऊपर लो। सोन पण्डित को शीघ्र भेजनेसे ही तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार होगी।"

शिवाजीके साथ मौखिक शिष्टाचार कर औरङ्गजेब जाते समय अपने सेनापति एवं बीजापुरके अधिकारियोंको चेतावनी देता गया

कि शिवाजीसे सावधान रहें। इसके बाद दो वर्ष तक औरङ्गजेबको दक्षिणमें आनेका अवसर नहीं मिला। इस समय बीजापुरकी वड़ी विधवा बेगम राजकाजका काम सम्भालती थी। यह बेगम बड़ी बुद्धि-मती थी। मुगलोंके साथ किसी प्रकारका सङ्घर्ष न देख अपने राज्यको सुदृढ़ करने लगो। इसी बीचमें बेगम ने एक दिन साहाजीको बुला कर कहा कि तुम अपने पुत्र शिवाजीको समझाओ कि वह बीजा-पुरसे विरोध करना परित्याग कर दे। इस पर साहाजीने अपनी अस-मर्थता प्रकट करते हुए कहा कि शिवाजी जो कुछ करते हैं—स्वयं करते हैं, वे मेरे अधिकारसे बाहर हैं। इस बातसे बेगमको सन्तोष नहीं हुआ। शिवाजीकी बुद्धि, साहस, रणचातुर्यकी प्रशंसा समस्त देशमें हो रही थी। बेगमने इन्हीं सब बातोंसे भयभीत होकर साहाजी-से कहा कि यदि शिवाजी तुम्हारी बात नहीं मानते, तो तुम बीजा-पुरकी सेना लेकर उन पर आक्रमण कर उनको वशमें करो। साहाजी-के इन्कार करने पर और अन्यान्य वीरोंसे शिवाजी पर आक्रमण करनेके लिये कहा गया, परन्तु अफजलखाँके अतिरिक्त किसीने बेगम-के अनुरोधको स्वीकार नहीं किया। दुःसाहसी अफजलखांने इस बातका स्वीकार कर लिया। बीजापुर और मुगलोंके संग्राममें बहुतसे सैनिक हताहत हो चुके थे। इस लिये केवल १८ हजार अश्वारोही सैनिकोंको लेकर अफजलखाँने शिवाजी पर आक्रमण किया। इस समय शिवाजीके पास साठ हजार सैनिक थे। इस लिये सम्मुख-युद्धमें प्रवृत्त होना विपज्जनक समझ कर अफजलखांने बुद्धि-कौशलसे ही काम लेना चाहा। अफजलखाँने सोचा कि शिवाजीसे बन्धु-भावसे भेंट की जाय और वहीं उनका काम तमाम भो कर दिया जाय। कुछ अङ्गरेज इतिहास-लेखकोंका मत है कि बेगमने ही यह सम्मति अफजलखाँको दी थी।

शिवाजीके विरुद्ध युद्ध-यात्रा करनेसे पहले राजसभामें ही उसने प्रतिज्ञा की कि जबतक शिवाजीको बन्दी करके नहीं ले आऊंगा घोड़ेकी पीठ परसे नहीं उतरूंगा। मूर्खोंने अफजलखांकी डींगको सुन कर उसका अभिवादन किया और जो लोग शिवाजीके वास्तविक रूपको समझ गये थे, वे इस डांग हांकने पर हंसते रहे। इसके बाद अफजलखांकी युद्ध-यात्रा आरम्भ हुई। वह देव-मन्दिरोंको नष्ट-भ्रष्ट करता और गो-हत्या करता हुआ तुलजापुर पहुंचा। तुलजापुर महाराष्ट्र जातिका पुण्य-पुनीत तीर्थ था। शिवाजीके वंशजोंकी आराध्यादेवी भवानीका मन्दिर भी यहीं था। भवानीके दर्शनोंके लिये हजारों मनुष्य प्रतिदिन तुलजापुर आते जाते रहते थे। भवानी शिवाजीकी आराध्या-देवी थी। इसलिये सबसे पहले शिवाजीके प्रति घृणा और ईर्ष्याका भाव प्रकट करनेके लिये अफजलखांने सैनिकोंको आज्ञा दी कि देवी-भवानीको मन्दिर सहित छिन्न भिन्न कर दो! किन्तु विज्ञ पुजारी लोग अफजलखाँके आनेकी सूचना पाकर देवी-प्रतिमाको पहले ही स्थानान्तर कर चुके थे, इस लिये अफजलखांकी यह साध पूरी न हुई, तब उसने एक गो की हत्या कर उसके रक्तसे भवानी-मन्दिरको सिक्त करनेकी आज्ञा दी! इसके बाद अफजलखांने कृष्णाजी नामके अपने एक दूतको शिवाजीके पास भेज कर कहलाया कि शिवाजीके पिताने बहुत दिन तक बीजापुर-राज्यके अधीन काम किया है, अतः शिवाजीको भी चाहिये कि वे भी वैर-विरोध छोड़ कर बीजापुरके अधीन रह कर काम करें। इसके अतिरिक्त यह भी कहलाया कि शिवाजी यदि अफजलखांसे आकर मिलें, तो उनके अपराध क्षमा किये जा सकते हैं और उनकी जागीर तथा उनके अधिकृत दुर्ग उनके ही पास रहने दिये जा सकते हैं। अफजलखां शिवाजीकी वीरता एवं रण-चातुर्यको देख कर बहुत प्रसन्न हुए

हैं। यदि शिवाजी इन सब बातोंको स्वीकार कर बीजापुरके किसी उच्च पदको स्वीकार कर लेंगे, तो सब झगड़ा शान्त हो जायगा।—वास्तवमें अफजलखांकी ये सभी बातें चालाकीसे भरी हुई थीं, जिससे शक्ति-सम्पन्न वीर शिवाजी किसी प्रकारसे हाथमें आ जांय।

यह कहावत प्रसिद्ध है कि विपत्ति एक साथ नहीं आती। इधर तो शिवाजीके लिये ये षड्यन्त्र रचे जा रहे थे, उधर शिवाजीके अन्तः-पुरमें सदैव छायाकी तरहसे उनके साथ रहनेवाली, उनकी सत्परामर्श-दातृ वीरपत्नी मृत्यु-शय्या पर पड़ी थी। वीर-रमणी सईबाई किसी भीषण व्याधिसे आक्रान्त होकर रोग-शय्या पर पड़ी थी। अनेक प्रकारके औषधोपचार किये गये, परन्तु सब व्यर्थ हुए। सईबाईका शरीर क्रमशः दुर्बल और अवसन्न होने लगा। शिवाजीकी महीयसी माता-जीजाबाई रात-दिन पुत्र-बधूकी शय्याके पास बैठ कर शुश्रूषा करती। परन्तु किसी बातका भी कोई फल नहीं हुआ। इसी बीचमें एक दिन शिवाजी पत्नीकी शय्याके पास बैठ कर कुशल-मङ्गल पूछने लगे। सईबाई हंस कर बोली,—"आज मेरा जन्म-दिन है—और इसी लिये मैंने सब शृङ्गार किये हैं, कहो तो महाराज, आज मैं कैसी लगती हूं?" शिवाजीने प्रेम-पूर्ण शब्दोंमें कहा,—जैसी शिवाजीकी पत्नी होनी चाहिये।—इसके बाद सईबाईने हाथ जोड़ कर कहा,—"महाराज, मेरी एक प्रार्थना है। शिशु-पुत्र सम्भाजीको आपके चरणोंमें समर्पण करके—मैं परलोककी यात्रा करती हूं!" शिवाजीने पत्नी सईबाईको सान्त्वना दी, परन्तु सान्त्वनाका वहां क्या काम था। समय समीप आ पहुंचा था। इसके बाद सईबाईने शिवाजीके चरणों-का स्पर्श किया और सदाके लिये इस लोकसे प्रस्थान किया।

शिवाजीके शिविरमें महान्-शोक छा गया। स्वयं शिवाजीको भी समस्त संसार अन्धकारमय प्रतीत होने लगा। संसारकी असारताकी

छायाने शिवाजीको संसारसे विरक्त कर दिया। शिवाजी तरह तरह की बातें सोचने लगे कि इस व्यर्थके रक्तपातसे क्या लाभ ? बीजापुरसे सन्धि कर ली जाय और मुगलोंसे भी सन्धि कर ली जाय और शेष जीवन महात्मा रामदास और साधु तुकारामकी सेवामें रह कर भगवद्भजनमें व्यतीत किया जाय।

किन्तु थोड़ी ही देरके शोकावेग और विरक्तिके पश्चात् शिवाजी मन ही मनमें सोचने लगे कि फिर इतने उद्योग और इतने परिश्रम और रक्तपातका क्या हुआ ? सब व्यर्थ गया। हा ! आज समस्त महाराष्ट्र मेरी ओर टकटकी लगाये देख रहा है। मातृ स्वरूपिणी गोमाता यवनोंकी तल्वारके घाट उतारी जा रही हैं। हिन्दुओंके मन्दिर और तीर्थ नष्ट किये जा रहे हैं। देव-मूर्तियां छिन्न भिन्न करके अपमानित की जा रही हैं। माताओं और बहनों पर घोर अत्याचार हो रहे हैं। इस प्रकारसे सोच कर शिवाजी खड़े हो गये। उनके हृदयका शोक और विरक्ति क्रोधके वेगमें प्रवाहित हो गये। शिवाजीने हाथमें तल्वार लेकर भवानीको स्मरण करते हुए प्रतिज्ञा की कि जब तक प्रतिशोध न लिया जाय और पूर्णरूपसे हिन्दू राज्य न स्थापित हो जाय, तब तक मैं मैदानमें डटा रहूंगा। इसी समय शिवाजीके सामने उनके बाल्य-बन्धु तानाजी आकर उपस्थित हुए। अभी तक माता जीजाबाईकी रुदन-ध्वनि सुनाई दे रही थी। शिवाजी ने उनको प्रणाम कर शोकावेगको संवरण करनेकी प्रार्थना की और कहा कि मरण जन्म तो लगा हुआ ही है—अपना कर्तव्य पालन करनेके लिये हमें अब अग्रसर होना चाहिये।

सप्तम-परिच्छेद ।

अफजलखां-वध ।

इससे पहले परिच्छेदमें अफजलखांकी प्रतिज्ञा और तुलजापुर पर आक्रमण एवं शिवाजीको वन्दी करनेके षड्यन्त्रका उल्लेख हो चुका है। शिवाजीको पत्नीकी मृत्युसे जो विरक्ति उत्पन्न हो गई थी और शोकावेगमें उन्होंने कुछका कुछ सोच डाला था, वह सब समय और विचारके गर्भमें लीन हो गया। शिवाजी अब नवीन उत्साहसे देशोद्धारके काममें अग्रसर हुए। शिवाजीको अपने गुप्तचरों द्वारा यह मालूम हो गया था कि अफजलखां बीजापुरकी १८ हजार सेना लेकर उन पर आक्रमण करनेको आ रहा है। शिवाजी अपने बाल्यसखा तानाजी आदिको लेकर विचार करने लगे कि अफजलखां बड़ा शक्तिशाली है। उसके साथ अठारह हजार अश्वारोही सैनिक हैं। बीजापुरसे तुलजापुर तक वह मार-मार करता चला आ रहा है, किसीने भी उसका सामना नहीं किया। इसी प्रकारकी बातों का उल्लेख करते हुए सब लोगोंने शिवाजीको अफजलखांके साथ लड़नेसे मना किया। परन्तु शिवाजी सहमत नहीं हुए। वे सोचते थे कि यदि अफजलखांसे मेल कर लिया, तो इसका परिणाम यह होगा कि यावज्जीवन बीजापुरकी गुलामी करनी होगी। हिन्दू-साम्राज्य स्थापित करनेकी बात समाप्त हो जायगी—और यदि अफजलखांसे युद्ध किया गया, तो बीजापुर और मुगल-सम्राटसे सदैवके लिये शत्रुता हो जायगी। इन शत्रुओंसे अपने राज्यकी रक्षा करनेके लिये

सदैव युद्धके लिये तैयार रहना पड़ेगा। इसी प्रकारकी विचार-तरङ्गों में लीन होकर शिवाजी अनेक प्रकारकी बातें सोचने लगें, परन्तु कोई बात स्थिर न कर सके।

शिवाजी पर देवी-भवानीकी विशेष कृपा थी। लोग उनको देवी-भवानीका वर-पुत्र तक कहते थे। शिवाजी जब कभी किसी असमञ्जसमें पड़ते तो देवी-भवानीकी अराधना करते और भक्ति-विह्वल भावमें लीन होकर अचेत हो जाते। उस अवस्थामें भवानी जो आदेश देती, उसे शिवाजी अपने शब्दोंमें बार बार दुहराते। पास बैठे कर्मचारी उन बातोंको उसी रूपमें लिख लेते और शिवाजीके होशमें आने पर उनको वह कागज दे देते, जिससे शिवाजी अपना कर्त्तव्य निश्चित करते। इस प्रकारसे भवानीके आदेशके अनुसार काम करनेसे शिवाजीको सदैव विजय प्राप्त होती रही थी। आज भी जब वे कोई कर्तव्य निश्चित न कर सके, तब उन्होंने भवानीकी अराधना की और उसी प्रकारसे अचेत होकर भवानीके आदेशका उच्चारण हुआ, जो यथानियम लिखा गया। भवानीका आदेश इस प्रकारसे हुआ,—"वत्स, किसी प्रकारकी चिन्ता न कर, अपना कर्तव्य पालन करो। मैं तुम्हारी रक्षा करूंगी और, और अफजलखां तुम्हारे हाथसे मारा जायगा!" इस प्रकारसे भवानीका आदेश सुन कर शिवाजी परम प्रसन्न हुए और उन्होंने अफजलखांके साथ युद्ध करनेका ही निश्चय स्थिर किया। शिवाजीके प्रधान कर्मचारी भी इस आदेशको सुन कर परम प्रसन्न हुए और सोत्साह-युद्धकी तैयारी में लग गये। इसी प्रकारसे भवानीके आदेशकी बात जब शिवाजीकी माताको मालूम हुई तो उन्होंने भी शिवाजीको बुला कर आशीर्वाद देते हुए कहा,—"वत्स, आज तक सभी कामोंमें देवी-भवानीकी कृपासे तुमको सफलता प्राप्त हुई है। आगे भी भवानीकी ही कृपासे

तुम्हें निश्चय विजय प्राप्त होगी और तुम अपने पुण्य कार्यों के करनेमें सदा समर्थ होगे।" शिवाजीने मातासे आशीर्वाद पाकर उनकी चरणधूलि मस्तक पर लगाई और राजदरबारमें चले गये।

इसी समय अफजलखांका दूत कृष्णाजी अफजलखांका सन्देश लेकर उपस्थित हुआ। उसने कहा कि अफजलखांने आपको साक्षात करनेके लिये बुला भेजा है और कहा है कि शिवाजीके पिता हमारे बड़े मित्र हैं। शिवाजी तो हमारे पुत्रके समान हैं। शिवाजीकी वीरता को देख कर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूं। शिवाजी यदि बीजापुरको आत्मसमर्पण कर कोई उच्च पद प्राप्त कर आनन्दोपभोग करें, तो यह प्रतिदिनका बढ़ता हुआ वैर-विरोध सदाके लिये समाप्त हो जाय।—दूतकी बात सुन कर शिवाजीने उसका बड़ा आदर सत्कार किया और उसको अपने यहां दो तीन दिन तक बड़े आदर सत्कारके साथ रखा। इसके बाद शिवाजीने बड़ी बुद्धिमानीके साथ अफजलखांके दूत कृष्णा जी भास्करको अनेक प्रकारके प्रलोभन दिये तथा हिन्दुओंकी दुर्दशा का चित्र खींच कर दिखाया और बताया कि समस्त देशमें इन लोगों के अत्याचारोंसे क्या क्या हो रहा है। हिन्दू स्त्रियोंकी इज्जत सुरक्षित नहीं। ब्राह्मणों एवं देव-मन्दिरोंका अपमान हो रहा है। समस्त देशमें गोहत्या हो रही है—और तुम ब्राह्मण होकर यवनोंको सहायता दे रहे हो! मैं जो कुछ कर रहा हूं अपने व्यक्तिगत आनन्द और सुखके लिये नहीं कर रहा हूं। मेरे सभी कार्य हिन्दूजातिको जीवित रखनेके लिये हैं। मैं चाहता हूं कि यदि पूज्य भूदेव,—यदि तुम सच्चे ब्राह्मण हो तो अपने हिन्दू-साम्राज्य स्थापनमें सहायता दो। मैं तुमसे अब यह जानना चाहता हूं कि अफजलखांके साक्षात् करनेका प्रकृत उद्देश्य क्या है? अफजलखांका दूत कृष्णाजी भास्कर शिवाजीके प्रभावपूर्ण वक्तव्यसे प्रभावित हो चुका था। सुतरां

कृष्णाजी भास्करने स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया कि—अफजलखां आप को बुरी नीयतसे बुला रहा है। बीजापुरमें वह प्रतिज्ञा करके आया है कि—मैं या तो शिवाजीको जीतेजी बन्दी कर लाऊंगा, या उनका शिर उतार लाऊंगा। परन्तु उसके पास सेना कुल १८ हजार है। आपके पास ६० हजार सैनिक हैं। सम्मुख-युद्धमें तो वह किसी प्रकारसे विजय प्राप्त कर नहीं सकता। वह चाहता है कि-छल-बलसे आपको अपने पास साक्षात्कार करनेके बहानेसे बुला कर या तो बन्दी कर ले, नहीं तो धोखेसे हत्या कर दे।

कृष्णाजी भास्करकी बात सुन कर शिवाजीने अपने मन्त्रियोंसे परामर्श कर गोपीनाथ नामक अपने विश्वस्त दूतको अफजलखांके शिविरमें भेजा। गोपीनाथने वहां पहुंच कर अफजलखांके साथियों को रिश्वत दे दे कर सब बातें पूछ लीं। इसके पश्चात् अफजलखां के मनोगत भावोंकी सूचना चुपचाप शिवाजीको भी दे दी। गोपी-नाथने अफजलखांसे निवेदन किया कि हमारे महाराज—शिवाजी आपसे भेंट करनेको तैयार हैं, परन्तु आपको भेंट प्रतापगढ़के पास चल कर करनी होगी। अफजलखांने इस बातको स्वीकार कर लिया। शिवाजीको भी यह बात मालूम हो गई। शिवाजीने बीजा-पुरकी सेनाके खाने पीनेके लिये बहुतसा खाद्य-द्रव्य भेज दिया, जिससे यवन-सेना बहुत प्रसन्न हुई। साथ ही शिवाजीने अपने दुर्ग से लेकर प्रतापगढ़ तक बन ही बनमें अपनी सेनाको छिपा दिया, जिससे आवश्यकता पड़ने पर बीजापुरकी सेनाको चारों ओरसे घेरा जा सके।

यथासमय अफजलखां प्रतापगढ़के पास पहुंचे और वहांसे थोड़ी दूरके फासले पर एक शिविर जो शिवाजीकी ओरसे डाला गया था, वहां ठहर गये। शिविर बड़े ठाट बाटसे सजाया गया था। ठीक

नियत समय पर शिवाजी शिविरमें पहुंचे । उन्होंने वहां देखा कि अफजलखांके पास प्रसिद्ध वीर बन्दाखां एवं दो और सैनिक भी मौजूद हैं । शिवाजीने उन लोगोंको यह कह कर वहांसे हटवा दिया कि खां साहबसे हमारी अकेलेमें ही भेंट होगी । इसके बाद जब वे लोग वहांसे चले गये, तो शिवाजी भीतर गये और वहां उपस्थित हो कर खांका अभिवादन किया । अफजलखांने भी मौखिक शिष्टाचार तो प्रकट किया, किन्तु साथ ही एक ऐसी बेहूदा बात भी कह दी जिससे शिवाजीने एक दम विकराल रूप धारण कर लिया । अफजलखांने शिवाजीसे मुस्कुरा कर व्यंगसे पूछा कि,—"शिवाजी, शिविर सजानेके लिये ये ऐसे बढ़िया सामान तुम्हारे जैसे जंगली जानवरने कहांसे पाये ?" उत्तरमें शिवाजीने कहा,—"क्यों बे भटियारीके लड़के, हमारे पास ये वस्तुयें न आतीं, तो किसके पास आतीं ?" शिवाजीका उत्तर सुन कर कपटी अफजलखांने शिवाजीका एक हाथ पकड़ कर उन पर तलवारका एक हाथ जमाना चाहा । शिवाजी तो पहले हीसे तैयार थे । उन्होंने अपनी गुप्त जेबमेंसे एक बहुत अधिक तीक्ष्ण कटार निकाल कर अफजलखांके पेटमें घुसेड़ दी, जिससे वह अधमरा होकर भूमि पर गिर पड़ा—और 'सहायता करो ! विश्वासघात हुआ !' कहता हुआ मूर्च्छित हो गया । अफजलखांकी चीत्कार-ध्वनि सुन कर बन्दाखां आदि पीछेसे दौड़ कर आये और युद्धके लिये शिवाजीको ललकारने लगे । परन्तु इतनेमें ही शिवाजीके दो सैनिकोंने ऐसा एक तलवारका हाथ जमाया, कि बन्दाखांका शिर धड़से अलग होकर गिर पड़ा । इसी समय अफजलखांके सैनिक घायल हुए अफजलखांको एक पालकीमें रख कर ले जाने लगे । परन्तु शिवाजीके सैनिकोंने उन पर आक्रमण कर धराशायी कर दिया और अफजलखांका शिर धड़से अलग कर

शिवाजीके हाथमें दे दिया गया। शिवाजीने खांके मस्तकको लेकर पहले तो मातृ-चरणोंमें उसे चढ़ाया, इसके बाद प्रतापगढ़ दुर्गके भवानी मन्दिरमें जाकर उसे भवानीकी भेंटमें चढ़ा दिया। इसके बाद वहीं उसको गाड़ दिया गया। आज भी वह स्थान अफजल-बुर्जके नामसे प्रसिद्ध है। अफजलखांकी तलवार भी छीन कर रख ली गई थी, जो अब तक शिवाजीके वन्शधरोंके पास बतायी जाती है।

शिवाजीने अफजलखांका काम तमाम कर अपने दुर्गमें प्रवेश किया और 'हरहर महादेव' की जय-ध्वनि कर मठमें छिपे हुए मावला सैनिकोंको बीजापुरके सैनिकोंपर आक्रमण करनेका संकेत किया गया। मावले सैनिक बीजापुरके सैनिकोंपर टूट पड़े और बात की बातमें हजारोंको मार डाला और जिन लोगोंने क्षमा मांगी—उनको उनके अस्त्र-शस्त्र छीन कर भगा दिया गया। इस युद्धमें शिवाजीके हाथ ६५ हाथी, ४ हजार घोड़े, २८ सौ ऊंट, २ हजार कपड़ेके थान एवं दस लाख रुपया लगा। अफजलखांके दो पुत्र, एक उच्चपदस्थ मुसलमान कर्मचारीको बन्दी किया गया। इसके अतिरिक्त ब्राह्मण, बच्चे, स्त्रियां और कुली-कबाड़ी आदि जो बन्दी हुए थे, उनको शिवाजीके आदेशसे उसी समय छोड़ दिया गया और अगले दिन बाकी सब कैदी भी सम्मानके साथ मुक्त कर दिये गये। इसी दौड़-धूपमें मावला सैनिकोंने पनहला-दुर्ग पर भी आक्रमण कर उसको अपने अधिकारमें कर लिया। शिवाजीके दलमें हर्ष मनाया जाने लगा और बीजापुरमें शोक-सागर उमड़ पड़ा।

अफजलखांकी हत्याका भीषण-व्यापार इतिहासका एक महत्व-पूर्ण ऐतिहासिक रहस्य है। मुसलमान-इतिहासकारोंने इस घटनाको

लेकर शिवाजीको विश्वासघाती, नरहन्ता, कपटी, क्रूर, डाकू तथा शैतानका अवतार तक लिख मारा है। कई अंगरेज लेखकोंने भी उनकी नकल की है। परन्तु जो विद्वान् अंगरेज उस समय भारतमें थे—उन लोगोंकी स्मृतियों आदिके आधार पर जो इतिहास लिखे गये हैं, उनमें मुसलमान-इतिहासकारोंकी बातोंका खण्डन किया गया है। *

इसके सिवा शिवाजीने पहले कपट नहीं किया था। स्वयं अफजलखां बीजापुरमें यह प्रतिज्ञा करके आया था कि या तो मैं शिवाजीको जीवित अवस्थामें पकड़ कर लाऊंगा—नहीं तो मार डालूंगा। परन्तु अफजलखांके पास कुल अठारह हजार सैनिक थे और शिवाजीके पास ६० हजार। अफजलखां यदि सम्मुख-युद्ध करता भी तो उसको उसकी सेना सहित नष्ट कर दिया जाता। यही सोच कर उसने सम्मुख-युद्ध न कर कपट-कौशलसे काम निकालना

---

* No careful student of history can deny that Afzal khan intended to arrest or kill Shivaji by treachery at the interview. The absolutely contemporary and impartial English factory records (Rajapur letter, 10 Oct. 1659) tell us that Afzal khan was instructed by his Government to secure Shivaji by "pertending friendship with" as he could not be resisted by armed strength, and that the latter learning of the design, made the intended treachery recoil on the Khan's head. This exactly supports the Marathi Chronicles on the point that Shivaji's spies learnt from Afzal's officers of the khan's plan to arrest him by treachery at the pretended interview and that Afzal's envoy Krishnaji Bhasker was also induced to divulge this secret of his master (J N, Sarkar's Shivaji)

चाहा और कपट-जाल बिछानेके लिये अपने दूत कृष्णाजी भास्करको शिवाजीके पास भेजा। परन्तु महा प्रतिभाशाली शिवाजीने सब ताड़ लिया और अन्तमें उसके ही दूतसे उसके कपटकी बात स्वीकार करा ली। ऐसी दशामें यदि शिवाजी अफजलखांकी हत्या न करते, तो स्वयं गिरफ्तार हो जाते या मार डाले जाते। इतिहासमें वे महामूर्ख और राजनीतिसे अनभिज्ञ लिखे जाते। इसके सिवा राजनीतिमें तो कपट-छल भरा ही हुआ है। ऐसी दशामें शिवाजीने यदि अफजल-खांकी हत्या कर आत्म-रक्षाकी तो वे कैसे नरहन्ता, डाकू, कपटी और शैतानके अवतार समझे जा सकते हैं ? हां, जिन लोगोंने आंखों पर पक्षपातका चश्मा लगा रखा है, वे उनको कपटी या धूर्त लिख सकते है। राजनीतिज्ञोंकी दृष्टिसें तो शिवाजी अपने इस कार्य से राजनीति-शिरोमणि हो गये हैं।

और एक बात है—अफजलखां तो मरनेके लिये तैयार हो कर गया था। जाते समय उसने अपनी बेगमोंकी हत्या तक कर देनेका आदेश दिया था—जिससे उसके नामको कलङ्क न लगे। * इतिहास

---

* It is said that the astrologers predicted that he would never return, and so impressed was he by their words that he set his house in order before starting and he is also said to have drowned his sixty four wives.

H. cousen's Bijapore Architecture.

At his village of Afzalpur close to Bijapur city, the gloomy legend sprang up that before starting on this fatal expedition, he had a premonition of his coming end and killed and buried all his 63 wives lest they share another's bed after his death. The peasants still point to the height from which these helpless victims of man's jealousy were hurled into a

में इसका स्पष्ट प्रमाण है। ऐसी दशामें शिवाजीको कपटी, धूर्त, शैतानका अवतार बताना, इतिहासज्ञाताको कलङ्कित करना है। अफजलखां यदि वीरतासे युद्ध करना चाहता था, तो उसे सम्मुख युद्ध करना था। ऐसा न कर उसने कपट-कौशलसे काम लेना चाहा, जिसका फल उसे हाथोंहाथ मिल गया।

---

deep pool of water, the channel through which their drowned bodies were dragged out with hooks, the place, where they were shrouded and the 63 tombs of the same shape, size, and age, standing close together in regular rows on the same platform, where they were laid in rest. Where his mansion once stood with its teaming population the traveller now beholds a lonely wilderness of tall grass, brambles and broken building, the fittest emblem of his ruined greatness $ $ $ $ other traditions tell us that ill omens dogged his steps from the every outset of his campaign against Shivaji. (JN Sirkar's Shivaji.)

अष्टम-परिच्छेद ।

गुरु रामदासका उपदेश ।

इस परिच्छेदमें हम संक्षेपमें इस बातकी आलोचना करना चाहते हैं कि भारतमें हिन्दू राज्यका पतन कैसे हुआ। मुसलमानोंके हाथमें शासन-सूत्र आने पर वे कैसे प्रमादी हो गये, उनके हाथसे भारतका उद्धार करनेके लिये गुरु रामदासके उपदेशसे शिवाजी कैसे हिन्दू-साम्राज्य स्थापन करनेमें प्रवृत हुए। गुरु रामदास पर शिवाजी, भग-वान्के समान भक्ति रखते थे और उनके भक्तिभावमें लीन होकर समस्त राज्य तक उनको दान दे चुके थे। यद्यपि गुरु रामदास सन्यासी थे, तथापि देशकी दुर्दशाको देख कर उसे स्वाधीन करनेकी विप्लव-वन्हि अहनिर्श उनके हृदयमें प्रज्वलित होती रहती थी। भारतकी स्वाधीनता एवं हिन्दू-धर्मकी रक्षाके लिये वे शिवाजीको तैय्यार कर रहे थे।

एक दिनकी बात है। शिवाजी गुरु रामदासके दर्शनार्थ उनके आश्रममें गये। शिवाजी जब कभी दर्शनार्थ जाते थे, तब दश पांच दिन तक रह कर गुरु-सेवा करते और उनकी आज्ञा पाकर फिर लौट आया करते थे। अस्तु। उस दिन प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्तमें उठ कर गुरु रामदास जब स्नान करनेके लिये नदीकी ओरसे चले तो शिवाजी भी उनकी पूजाका सामान उठा कर उनके पीछे पीछे हो लिये। गुरु रामदास आज ग्रहणान्तमें नासिक-स्नान करने जा रहे थे। गुरु राम-दास भारतोद्धारकी चिन्ता करते जा रहे थे और शिवाजी मन ही

मनमें अपने राज्यको गुरु रामदासके चरणोंमें समर्पण कर कल्पना कर रहे थे कि 'त्वदीय वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये।' शिवाजी सोचते थे कि इतना सब कुछ करके मैंने गुरुके चरणोंमें समर्पण कर दिया और निश्चिन्त हो गया। मेरे लिये संसारके दुःख सुख समान है। कोपीन धारण कर गुरु-सेवा करने, भूमि पर सोकर भगवान्‌की आराधना करनेमें जैसा आनन्द है, वैसा राज्य-भोगमें कहां? इस प्रकारसे निश्चिन्त हो जिस समय शिवाजी गुरु रामदासके पीछे-पीछे जा रहे थे, तब भी उनके हृदयको न मालूम कौनसी अज्ञात चिन्ता उद्विग्न कर रही थी। परन्तु जब गुरुदेवके मुखसे भारतकी गौरव पूर्ण अतीत कहानी सुनी तो शिवाजीको हृदयतन्त्री एक नये ही मधुर-रागसे बज उठी। शिवाजी सोचने लगे कि अभी उनके सन्यासका समय नहीं आया है। हिन्दू जाति बहुत दिनोंसे पराधीनताकी शृङ्खलामें आवद्ध होकर स्वयं अपनी शक्तिमें अविश्वास करने लगी है। जिन्होंने एक दिन सम्मुख-संग्राममें जगद्विजयी शिकन्दर तकके छक्के छुड़ा कर आश्चर्यचकित कर दिया था, जिन्होंने शक, हुण आदिकी शक्तिको ध्वंश कर दिया था, वे आज इतने कापुरुष और भीरु हो गये हैं कि मुसल्मानोंका नाम सुनते ही काँप उठते हैं। इसी संस्कारके कारण तानाजी आदि वीरगण मुझे मुगलों एवं बीजापुरसे सन्धि कर लेनेकी सम्मति देते हैं। हिन्दू भीरु और कापुरुष हैं, यह कलङ्क-मोचन करना होगा। शक्तिशाली औरङ्गजेब सोचता है कि दक्षिणमें मराठा लोग ही उसके प्रतिद्वन्दी हैं। उसके सामने गोलकुण्डा और बीजा-पुर नगण्य हैं। इसलिये मुगल-शक्तिका जब तक ध्वंश न किया जायगा, तब तक हिन्दुओंका कलङ्क-मोचन नहीं होगा। हिन्दू जाति का गौरव पूर्ण-चन्द्रकी तरहसे भारताकाशमें उदित न होगा। इसी प्रकारकी बातें सोचते हुए शिवाजी गुरु रामदासके पीछे-पीछे चले

जा रहे थे, इसी समय गुरु रामदासने शिवाजीको सम्बोधन कर पूछा--"शिवाजी, तुमने तो एक प्रकारसे दाक्षिणात्य मुसलमानोंको शक्ति-हीनसा कर दिया है। अब मुगल सम्राट्के सम्बन्धमें क्या सोचते हो ?"

उत्तरमें शिवाजीने कहा,—"गुरुदेव, इस सम्बन्धमें भी मैं उदासीन नहीं हूं। यवनोंका दासत्व करते करते हम लोग एक बार ही मनुष्यत्वहीनसे हो गये हैं। अब और अधिक सहन नहीं हो सकता। किन्तु यही सोचता हूं कि मुगलोंकी अपरिसीम शक्तिके सामने कैसे खड़ा होऊं ? सुना है बङ्गालमें इसी प्रकारसे हिन्दू वीर प्रतापादित्यने मुसलमानोंका हनन करनेके लिये शिर उठाया था, किन्तु मुगलोंने बार बार आक्रमण कर विपुल-विक्रमके साथ उनको विध्वस्त कर दिया।" शिवाजीकी बात सुन कर गुरुरामदास बोले-"शिवाजी, हिन्दू जातिका पतन कैसे हुआ, इसके कारणोंका क्या अभी अनुसन्धान किया है ? समस्त देशके हिन्दुओंकी अनैक्यता ही क्या इसका कारण नहीं है ? एक बार जरा प्राचीन इतिहास पर नजर डालो। हमारे देशमें केवल ब्राह्मण और क्षत्रिय ही स्वदेशकी चिन्ता करते हैं। छोटी जातियोंके आदमी इधर ध्यान ही नहीं देते ! वे सोचते हैं—कि हम छोटे हैं, अछूत हैं, अस्पृश्य हैं, स्वाधीनता प्राप्त होने पर भी हम लोग अपने स्थान पर ही रहेंगे। फिर क्यों उठें ? क्यों ब्राह्मण-क्षत्रियोंको स्वाधीनताके युद्धमें सहयोग दें ? हमारे लिये स्वाधीनता और पराधीनताके शब्द केवल मायाजाल हैं। इसके सिवा भारतमें हिन्दुओंके साथ मतान्तर होनेपर भी बौद्ध इतने दिनसे रहते हैं, तब भी उनका धर्म-विद्वेष अभी तक ज्योंका त्यों बना हुआ है। इनके अतिरिक्त देशमें कितनी अन्त्यज, अस्पृश्य जातियां हैं, जो घृणित जीवन व्यतीत कर रही हैं। उनके साथ हमारा सद्भाव नहीं है। इसी लिये उनसे सहायता भी नहीं मिलती।"

शिवाजी बोले,—"महाराज, इसीलिये मैं भी सोचता हूं कि मुगलोंके साथ भिड़ जानेसे क्या हमारी विजय होगी ? आप तो समस्त देशकी बात कहते हैं, पर मैं तो केवल महाराष्ट्रको भी एकताके सूत्र में आवद्ध नहीं देखता हूं। एक तो हमारी शक्ति ही कम है, फिर परस्परमें मनोमालिन्य और एकका दूसरेके प्रति विद्वेष-भाव फिर अपरिसीम शक्तिशाली मुगलोंसे मुठभेड़ ! गुरुदेव, इसका फल तो पराजय अवश्यम्भावी है।"

गुरु रामदासने कुछ सोच कर कहा,—"बेटा, तुम ठीक कहते हो। किन्तु मैं देख रहा हूं कि हिन्दू-गौरव रवि पुनः रक्तिमाभाके साथ भारताकाशको अनुरञ्जित कर उदित हो रहा है। कारण सुनो। पहली बात तो यही है कि दाक्षिणात्य मुसलमान परस्परमें ही लड़-भिड़ कर अपनी बहुत कुछ शक्ति नष्ट कर चुके हैं। दूसरे उनके रण-कौशलके शिक्षक भी तो मराठा लोग ही हैं। तीसरे मुसलमान-शासक विलास-परायण होकर मनुष्यत्व-विहीन हो रहे हैं। किन्तु हमारे सैनिकगण कठोर आत्मसंयम द्वारा क्रमागत मनुष्यत्व-प्राप्तिके पथमें अग्रसर हो रहे हैं। ये थोड़ा बहुत शाकाहार पानेसे ही सन्तुष्ट हो जाते हैं, समतल भूमि और पत्थरों पर लेट कर ही निद्रा पूरी कर लेते हैं। औरंगजेबकी सेना धन लूटनेके लिये युद्ध करती है—और हमारी सेना स्वदेश और स्वधर्मकी रक्षा करनेके लिये युद्धमें अवतीर्ण होती है। दूसरे वैसे समस्त महाराष्ट्रमें—परस्परमें भी इस समय कोई युद्ध-विग्रह नहीं है। एक महाव्रतके पालन करनेके लिये समस्त महाराष्ट्रवासी अनुप्राणित हो रहे हैं। तीसरे देशके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र अपने गुणोंके अनुसार यथायोग्य स्थान प्राप्त कर रहे हैं। एक गडरिया और खेती करनेवाला किसान भी यदि सेनापति होनेके गुण रखता हो, तो उसके सेनापति होनेमें कोई बाधा उपस्थित नहीं होती।

शिवाजी बोले,—"महाराज, इसीलिये मैं भी सोचता हूं कि मुगलोंके साथ भिड़ जानेसे क्या हमारी विजय होगी ? आप तो समस्त देशकी बात कहते हैं, पर मैं तो केवल महाराष्ट्रको भी एकताके सूत्र में आवद्ध नहीं देखता हूं। एक तो हमारी शक्ति ही कम है, फिर परस्परमें मनोमालिन्य और एकका दूसरेके प्रति विद्वेष-भाव फिर अ-परिसीम शक्तिशाली मुगलोंसे मुठभेड़ ! गुरुदेव, इसका फल तो पराजय अवश्यम्भावी है।"

गुरु रामदासने कुछ सोच कर कहा,—"बेटा, तुम ठीक कहते हो। किन्तु मैं देख रहा हूं कि हिन्दू-गौरव रवि पुनः रक्तिमाभाके साथ भारताकाशको अनुरञ्जित कर उदित हो रहा है। कारण सुनो। पहली बात तो यही है कि दाक्षिणात्य मुसलमान परस्परमें ही लड़-भिड़ कर अपनी बहुत कुछ शक्ति नष्ट कर चुके हैं। दूसरे उनके रण-कौशलके शिक्षक भी तो मराठा लोग ही हैं। तीसरे मुसलमान–शासक विलास-परायण होकर मनुष्यत्व-विहीन हो रहे हैं। किन्तु हमारे सैनिकगण कठोर आत्मसंयम द्वारा क्रमागत मनुष्यत्व-प्राप्तिके पथमें अग्रसर हो रहे हैं। ये थोड़ा बहुत शाकाहार पानेसे ही सन्तुष्ट हो जाते हैं, समतल भूमि और पत्थरों पर लेट कर ही निद्रा पूरी कर लेते हैं। औरंगजेबकी सेना धन लूटनेके लिये युद्ध करती है—और हमारी सेना स्वदेश और स्वधर्मकी रक्षा करनेके लिये युद्धमें अवतीर्ण होती है। दूसरे वैसे समस्त महाराष्ट्रमें—परस्परमें भी इस समय कोई युद्ध-विग्रह नहीं है। एक महाव्रतके पालन करनेके लिये समस्त महाराष्ट्रवासी अनुप्राणित हो रहे हैं। तीसरे देशके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र अपने गुणोंके अनुसार यथायोग्य स्थान प्राप्त कर रहे हैं। एक गड-रिया और खेती करनेवाला किसान भी यदि सेनापति होनेके गुण रखता हो, तो उसके सेनापति होनेमें कोई बाधा उपस्थित नहीं होती।

इसीलिये मैं देख रहा हूं कि समस्त देशवासी बाल-वृद्ध वनिता, सभी स्वदेश और स्वधर्मकी रक्षा करनेके लिये प्राण विसर्जन करनेको तैयार हो रहे हैं ।* यह देशात्मबोध ही जातीय अभ्युत्थानका प्रधान उपादान है । चौथी बात है नारी-शक्तिकी । मैं देख रहा हूं कि मातृजाति भी जाग उठी है । देशकी स्वाधीनताके लिये महाराष्ट्रकी देवियां भी पुरुषोंकी सहायता करनेको प्रस्तुत हो गयी हैं । समाजमें नारी-शक्ति प्रधान शक्ति है । जब तक इनको आत्म-बोध न हो, तब तक कोई देश स्वाधीनताके पथका-पथिक नहीं हो सकता । राजपूतानाकी प्रातःस्मरणीया वीर-रमणियोंकी वीरताको स्मरण करो । पति-पुत्रको अपने हाथोंसे सजा कर युद्धमें भेजतीं और अन्तःपुरमें चितानल प्रज्वलित करके रखतीं—जिससे आवश्यकता पड़ने पर नारी-जीवनके सर्वश्रेष्ठ सम्पद सतीत्वको रक्षाके लिये उसमें कूद पड़ती और क्षण भरमें भग-

---

* The relative importance of the Brahman and the Prabhu elements on one side and the Mavli and Maratha elments on the other, will be fully realised from the fact that in Grant Duff's History the name of twenty Brahman leaders and four Prabhus are mentioned as against twenty Mavli and Maratha leaders. There are about fifty Brahman and Prabhu leaders mentioned as against forty Mavli and Maratha leaders in the narrative of Chitnis's great Bakhar.

The strength of the organisation did not depend on a temporary elavation of the high classes, but it had deeper hold on the vast mass of the rural population cowherds and Shepherds, Brahmans and non-Brahmans even Musalmans felt its influence and acknowledged its power. (Ranade's Rise of the Maratha Power)

वान्‌का नाम स्मरण करती हुईं—परलोकमें पति-पुत्रसे जा मिलतीं। हिन्दू-रमणियोंकी वह गौरव-कहानी, सदा संसारके इतिहासके पृष्ठों पर स्वर्णाक्षरोंमें अङ्कित रहेगी। इस समय मैं देख रहा हूं कि वही नारी-शक्ति महाराष्ट्रमें पुनः जाग्रत हो रही है। अपनी माता जीजा-बाईकी बातको ही स्मरण करो कि उन्होंने तुम्हारे जीवनके महाव्रत-साधनमें कितनी सहायता प्रदान की है? तुम्हारी पत्नी सईबाईने ही तुमको सदा अग्रसर करनेमें उत्साह प्रदान किया है? मेरी शिष्या आकाबाई—आज महाराष्ट्रके घर घरमें जाकर महाराष्ट्रोंको स्वधर्म और स्वदेशकी रक्षाके लिये उद्बोधित कर रही है। महाराष्ट्रकी रम-णियोंने जब तक केवल घरके काम-काजको ही महत्व देकर स्वदेश और स्वधर्मकी ओर ध्यान नहीं दिया था, तभी तक चिन्ता थी कि क्या होगा? किन्तु आज महाराष्ट्रकी अन्तरालवर्तिनी वही आद्या-शक्ति प्राचीन गौरव-गरिमाकी रक्षाके लिये जाग उठी है।

"इसके सिवा महाराष्ट्रवासी केवल क्षात्रबलसे ही बलियान नहीं हैं, किन्तु वे धर्मकी शक्तिसे भी शक्तिशाली हो उठे हैं। उदारता और विश्वव्यापी प्रेम ही धर्मका लक्षण है। अनुदारता और हृदयकी सङ्की-र्णता धर्म-हीनताकी परिचायक है। विभिन्न सम्प्रदायोंमें आज कोई धार्मिक विद्वेष दृष्टिगोचर नहीं होता। तुमने शाक्त्य-भवानीके उपा-सक होकर भी मुझ रामचन्द्रके भक्त-वैष्णवका शिष्यत्व स्वीकार कर लिया है! ब्राह्मण हो चाहे अन्त्यज, महाराष्ट्रवासी उसे उसके गुण-कर्मानुसार यथायोग्य सम्मान और श्रद्धाका स्थान देनेको प्रस्तुत हैं। इस उदारताने ही हमारे व्यक्तिगत जात्याभिमानको चूर्ण-विचूर्ण कर हम सबको एक प्रेम-सूत्रमें आबद्ध कर दिया है। वृक्षको सजीव रखने के लिये जैसे उसके मूलमें जल-सिञ्चन करनेसे शाखा-प्रशाखा और पत्र पुष्प जीवित रहते हैं, उसी प्रकारसे किसी जातिको शक्तिशाली

बनानेके लिये जातीय धर्मको उन्नत करना पड़ता है। ऐसा होनेसे ही प्रकृतिके एक अचिन्तनीय दुरवगाह्य नियमके अनुसार उस जातिकी जड़ता, आलस्य, दैन्य, सङ्कीर्णता विदूरित होती है। एवं अवशेषमें वही जाति एक प्रबल शक्तिशाली होकर महागौरवसे गौरवान्वित होती है। अब तुम विचार कर देखो कि मराठा जातिका उत्थान सम्भव है कि नहीं।

"और एक बात है। समग्र ब्रह्माण्ड केवल भौतिक नियमसे ही परिचालित नहीं होता है, कारण—आद्य शक्ति ज्ञानके बिना कोई मंगल-कार्य सम्पन्न नहीं किया जा सकता। संसारके समस्त आश्चर्य पूर्ण सुश्रृङ्खल नियमोंको देख कर यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सबके मूलमें एक अध्यात्मिक शक्ति नियमित रूपसे कार्य कर रही है। इस समय मुगल जिस प्रकारसे धर्मविहीन हो रहे हैं, उससे उनके हाथोंसे शक्ति जाती रहेगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। * मुगलोंके अन्तःपुरमें कैसी निष्ठुर पैशाचिक घटनायें नित्य घटित होती हैं, वे तुमको अविदित नहीं हैं। निरपराधिनो अन्तःपुर वासिनी महिलाओंके उच्च दीर्घ निःश्वासोंसे मुगल-साम्राज्य, ध्वंशकी ओरको अग्रसर हो

---

* A more terrible fate awaited the captive ladies who survived mothers and daughters of kings, they were robbed of their religion and forced to lead the infamous life of the Mughul harem, to be the unloved plaything of their master's passion for a day or two and then to be doomed to sing out their days like bond-women, without the dignity of a wife or the joy of a mother. Sweeter for them would have been death from the hands of their dear ones than submission to a race that knew no generosity to the fallen, no chivalry to the weaker sex (Prof. J. N. Sircar's History of Aurangzib)

रहा है। जिस दिनसे महामति अकबरने इहलोक परित्याग किया है, उसी दिनसे मुगल साम्राज्य विनाशके पथकी ओरको चला जा रहा है। सम्राट् जहांगीर कैसा निष्ठुर था, स्मरण करो। वह पापी अपराधियोंको शूली (फांसी) पर चढ़ा कर अथवा भूमिमें गाड़ कर कैसे प्राण हरण करता था, उसे स्मरण कर मनुष्यताको लज्जा आती है। राज्य-लाभके लिये भ्रातृ-रक्त पान करनेमें भी उसे सङ्कोच नहीं हुआ। इसी प्रकारसे औरङ्गजेबने सिंहासनकी प्राप्तिके लिये पिता शाहजहांको एक क्षुद्र कोठरीमें कैद कर रखा है। मुसलमान लोग जब धर्मको जय करनेके लिये हिन्दुओंके हिन्दुत्वको नष्ट कर रहे हैं तब धर्म इन सब बातोंको और अधिक सहन नहीं कर सकता। इन लोगोंका पतन अनिवार्य है। मैं तो स्पष्ट देख रहा हूं कि हिन्दुओंके हाथसे और इनका निस्तार नहीं है। तुम अपनी शक्ति पर विश्वास करो और धर्मकी अजेय शक्ति पर श्रद्धा स्थापन करो। एक बार हिन्दू, शक्ति की उपासना कर शक्तिशाली हुए थे, किन्तु शक्तिका अपमान कर आज वे शक्ति-विहीन हो गये हैं। जय पराजयकी ओर लक्ष्य न कर फलाफलका भार भगवान् पर न्यस्त कर तुम कर्तव्य-कार्य करनेके लिये अग्रसर होओ! तुम्हारा राज्य जिसे मानसिक संकल्प द्वारा तुम मुझे दान कर चुके हो, मैं तुमको प्रत्यार्पण करता हूं। तुम मेरे प्रतिनिधिके रूपसे उसके भारको ग्रहण करो। अपनी इच्छा और बुद्धिके अनुसार युद्ध और सन्धि करो। परन्तु मेरी यह आन्तरिक इच्छा है कि एक बार भारताकाशमें फिर हिन्दू-गौरवकी गैरिक-राजपताका उड़ती हुई संसार देख ले।"

स्वामी रामदास इस प्रकारसे बहुमूल्य उपदेश प्रदान कर बोले,—"वत्स, इस समय तुमको जो कार्य उचित प्रतीत हो करो। मैंने हिन्दू जातिके कल्याणके लिये चिर दिन तक तपस्या की है और फिर

पण्ढरपुरके अधिष्ठातृ देवता विठोवा।

प्रतापगढ़ स्थित शिवाजीकी आराध्य देवी भवानी।
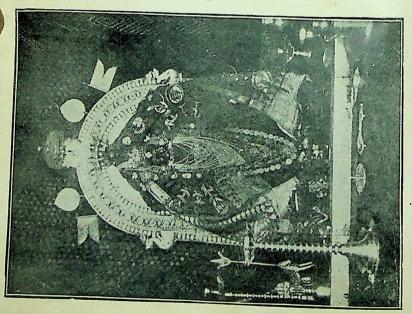
मैं उसीके लिये तीर्थ-यात्रा करता हूं। तुमको आशीर्वाद देता हूं कि तुम्हारा कल्याण हो।" * इस प्रकारसे आशीर्वाद देकर गुरु रामदास वहांसे नासिककी ओर चल पड़े और शिवाजीने भी उनकी पदधूलि मस्तक पर लगा कर सिंहगढ़की ओर प्रस्थान किया।

---

* Shivaji from a sense of gratitude to his spiritual teacher, made a gift of his kingdom and Ramdas gave it back to him as a trust to be managed in the public interest.

In token of the work of liaberation being carried on, not for personal aggrandisement but for higher purposes of service to God. (Prof J. N. Sircars Shivaji)

नवम-परिच्छेद ।

बीजापुर-संधि और पितृ-दर्शन ।

औरङ्गजेब, वृद्ध पिता सम्राट् शाहजहांको आगराके किलेमें बन्द कर स्वयं दिल्लीके मुगल-राजसिंहासन पर बैठा। औरङ्गजेब प्रखर-बुद्धि, कट्टर मुसलमान, कठोर शासक एवं सदाचारी सम्राट् था। सिंहासनासीन होते ही उसे मुसलमान-धर्मके प्रचारकी चिन्ताने धर दबाया। रात दिन उठते-बैठते वह इसी चिन्तामें मग्न रहता। कुछ इतिहासकारोंका यह भी कहना है कि—क्योंकि शाहजहां वृद्ध हो गया था और राजकाजके कार्योंमें शिथिलता पड़ गई थी और उधर शाहजहांके पुत्रोंमें राजसिंहासनके लिये झगड़ा पड़ गया था— इस-लिये कहीं राजसिंहासन औरङ्गजेबके हाथसे न निकल जाय, इसलिये उसने पहले पिताको कैद कर राजसिंहासन पर अधिकार कर लिया और प्रजा तथा राज्यके मुसलमान अधिकारी कहीं पिताको कैद कर लेनेसे नाराज होकर अशान्ति उत्पन्न न कर दें, इसके लिये वह रात दिन मुसलमान धर्मका प्रचार करने लगा। कुछ भी हो, मुसलमान-धर्म-प्रचार करनेकी धुन औरङ्गजेबके शिर पर बुरी तरहसे सवार हो गयी थी। सुतरां औरङ्गजेब समस्त भारतमें मुसलमान-धर्म प्रचार करनेका उपाय सोचने लगा। औरङ्गजेब अपने धर्ममें बहुत अधिक निष्ठा रखता था, परन्तु उस निष्ठाने आगे चल कर ऐसा भीषण रूप धारण किया कि क्रमशः देशमें उसके शत्रुओंकी संख्या बढ़ने लगी और उन शत्रुओं द्वारा मुगल साम्राज्यके ध्वंसका बीज ऐसी

गुप्त रीतिसे वपन होने लगा कि जिसकी कल्पना औरङ्गजेबको कभी स्वप्नमें भी नहीं हुई। सम्राट् अकबरने जिस उदारतासे हिन्दुओंको अपने वशमें करके अपनेको महान् प्रतापशाली बनाया था, यदि औरङ्गज़ेब भी वैसी ही बुद्धिमत्तासे कार्य करता तो उसको उसकी प्रखर बुद्धिके कारण मुगल साम्राज्यको सुदृढ़ करनेमें सबसे अधिक सफलता प्राप्त होती। सिंहासनासीन होते ही सर्व प्रथम उसने ऐसे उपाय काममें लाने आरम्भ किये, जिनसे हिन्दुओंका धर्म नष्ट हो और वे इस्लाममें प्रविष्ट हों। हिन्दुओं पर अत्याचार करनेके लिये सर्व प्रथम औरङ्गजेबने उनसे डबल 'राजकर' लेनेकी आज्ञा घोषित की, जिससे असमर्थ हिन्दू मुसलमान होकर उससे बच सकें, इसके साथ ही उसकी दृष्टि दक्षिणकी ओर आकर्षित हुई। वह उठती हुई नवीन महाराष्ट्र-शक्तिको खर्च करनेका उपाय सोचने लगा। किन्तु शिवाजीका दमन करना कठिन काम है, इस बातको औरङ्गजेब खूब समझ गया था। वह इस बातको जानता था कि शिवाजीमें एक ऐसी मोहिनी शक्ति है कि वे शत्रुको भी अपने वशमें करके एक बार उससे अपना-कार्य सिद्ध करा लेते हैं। उनके सैनिक, मद्य और गणिका-सेवक नहीं थे। बदमाश और शैतान शिवाजीसे भयभीत रहते थे और साधु जन निरापद रहते थे। शिवाजी माता पितामें अनन्य भक्ति रखते थे। पितासे मतैक्य न रहने पर भी शिवाजी भक्ति-प्रदर्शन करनेमें कभी कुण्ठित नहीं हुए। इसके अतिरिक्त शिवाजी किसी धर्म पर अत्याचार नहीं करते थे। उनके राज्यमें जैसे हिन्दू स्वाधीनता पूर्वक अपने धर्मका पालन करते थे, उसी प्रकारसे मुसलमानोंके धार्मिक कार्योंमें भी किसी प्रकारसे बाधा उपस्थित नहीं की जाती थी। किसी नगर पर आक्रमण करते समय मुसलमान शासकोंकी तरहसे शिवाजी किसी मस्जिद या पीरकी कब्रको कभी चूर्ण-विचूर्ण नहीं करते थे। मुस-

ल्मानोंका धर्मग्रन्थ कुरान मिलने पर अपने अनुयायी मुसल्मानोंको देते थे। शामको यदि किसी विशेष पर्व पर मुसल्मान लोग एकत्रित होकर नमाज़ पढ़ते, तो शिवाजी अपने प्रबन्धसे उस स्थानको सुसज्जित करवा देते। * शिवाजीकी सेनामें अनेक मुसल्मान थे। उनमेंसे कई सेनापति भी थे। उनके अनुयायी मुसल्मान भी उन पर इतने अधिक मोहित थे कि समय पड़ने पर प्राण तक देनेको तैयार हो जाते थे। मुसल्मान फकीरों पर भी शिवाजी कृपा रखते थे। उनसे कभी दुर्व्यवहार नहीं करते थे, बल्कि जरूरत होने पर उनके लिये रहनेको स्थान बनवा देते और वृत्ति नियत कर देते।*

इन्हीं सब बातों पर विचार करनेसे औरङ्गजेबको इस बातका पूर्ण विश्वास हो गया कि शिवाजी अपने गुणोंसे ही इतने लोकप्रिय एवं शक्तिशाली हो गये हैं कि उनका दमन करना साधारण बात नहीं है। परन्तु औरङ्गजेबकी शक्ति अपरिसीम थी—और शिवाजीकी अपेक्षाकृत तुच्छ। ऐसी दशामें औरङ्गजेब एक बार उदासीन होकर फिर उत्साहित हुआ और उसने सायस्ताखांको अमीर-उल-उमराको उपाधि

---

* It was his rule that wherever his men raided, they should not touch any mosque, any quoran or the honour of any person. Whenever he got hold of a quoran he kept it carefully and afterwards gave it to his Muslim followers.

(Khufi Khan' translated by Prof J.N. Sarkar)

The illumination of and food offerings to the shrines of Mahomedan saints and the Mosques of the Mahomedans were continued by state allowance according to the importance of each place. He not only granted pensions to Brahman. Scholars, versed in the vedas, astronomers and anchorites, but also,built hermitages and provided subsistance at his own cost for the holy men of Islam, notably Baba yakut of Jelsi

(J. N. Sarkar'a Shivaji)

प्रदान कर प्रधान सेनापतिकी पदवी पर आरूढ़ किया और शिवाजी-का दमन करनेके लिये उसको दक्षिणकी ओर भेजा।

इधर अफजलखांको मार कर शिवाजी और भी उत्साहित हुए और उन्होंने अपनी वीर-वाहिनी सेनाकी शक्तिसे बीजापुरके कितने ही दुर्गों पर अधिकार कर लिया। शिवाजीके इन कृत्योंको देख कर बीजापुरका द्वितीय अली आदिलशाह बहुत घबड़ाया और उसने शिवाजी पर आक्रमण करनेका विचार किया। इसी समय सिद्दीजहर नामका एक क्रीत-दास अपनी शक्तिके बलसे प्रबल पराक्रान्त हो उठा था। सिद्दीजहरको किसी प्रकारसे प्रसन्न कर आदिलशाहने मृत अफ-जलखांके पुत्र फाजिल मोहम्मदखांके साथ सेना लेकर शिवाजी पर आक्रमण करनेको भेजा। इस समय शिवाजी अपने अधिकृत अनेक दुर्गोंका समुचित प्रवन्ध कर पनहला दुर्गमें अवस्थान करते थे। बीजापुरी सेनाने इसी समय पनहला दुर्ग पर प्रचण्ड विक्रमसे आक्र-मण कर उसे घेर लिया। चार मास तक शिवाजी पनहला दुर्गमें अवरुद्ध होकर पड़े रहे। अन्तमें इस प्रकारसे मौन रह कर आतम-रक्षा होते न देख शिवाजीने एक कौशलका अवलम्बन किया। शिवाजीने गुप्त-रूपसे सिद्दीजहरके पास सन्धिका प्रस्ताव भेजा। सिद्दीने भी सोचा कि यदि इस समय मैं शिवाजीको बन्धुताके सूत्रमें आबद्ध करता हूं, तो इनकी सहायतासे बीजापुरकी पराधीनताका जूआ अपने कन्धेसे उतार फेकूंगा। इस प्रकारसे सोच कर सिद्दीने शिवाजीको पनहला दुर्गसे मुक्त करनेका विचार स्थिर किया। सुतरां अगले दिन शिवाजीने अपने दो तीन अनुचरोंको साथ लेकर सिद्दीसे भेंट की। दोनोंने परस्परमें गुप्त-सन्धि कर ली—और शिवाजी फिर पनहला-दुर्गमें जा उपस्थित हुए और बीजापुरकी सेना दुर्गको उसी प्रकारसे घेरे रही। परन्तु सिद्दीके विश्वासघातकी बात किसी प्रकारसे

आदिलशाहको भी मालूम हो गई । आदिलशाह बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने स्वयं सेना लेकर शिवाजी पर आक्रमण किया । परन्तु शिवाजी को भी यह बात मालूम हो गई और वे आदिलशाहके आनेसे पहले ही अपनी पांच हजार सेना सहित बीजापुरकी सेनाका घेरा तोड़ कर भाग खड़े हुए। बिना युद्धके ही पनहलाका किला आदिलशाहके हाथ लगा । परन्तु आदिलशाहको जब शिवाजीके पलायन करने की बात मालूम हुई, तो उसने अफजलखांके पुत्र फाजिलखां और सिद्दीके पुत्र अजीजुद्दीनको शिवाजीका पीछा करनेकी आज्ञा दी । जाते समय शिवाजी अपने वीर-सेनापति बाजीप्रभुके बहुत आग्रहसे यह स्वीकार कर गये थे कि जब वे निरापद विशालगढ़के किलेमें पहुंच जांयगे, तब पांच तोपोंके गोले छोड़ कर निरापद पहुंच जानेका संकेत कर देंगे । सुतरां जब तक शिवाजीने विशालगढ़में निरापद पहुंच कर उक्त प्रकारसे तोप-ध्वनि न करवा दी, तब तक वीर बाजीप्रभुने अपनी थोड़ीसी सेना लेकर गिरिवर्त्म संमुखस्थ प्रदेशकी रक्षा की, जिससे शत्रु शिवाजी पर आक्रमण न कर सके । बीजापुरी सेनाने प्रचण्ड-विक्रमके साथ बाजीप्रभु पर तीन बार आक्रमण किया, किन्तु तीनों बार बाजीप्रभुके घेरेको तोड़नेमें विफल ही हुई। प्रायः नौ घण्टे तक लगातार युद्ध होता रहा । दोनों ओरके अनेक वीर मारे गये । इसी समय विशालगढ़से तोप-ध्वनि हुई कि शिवाजी निरापद पहुंच गये हैं । इसी समय वीर बाजीप्रभुने असंख्य मुसलमानोंसे अमित-पराक्रम के साथ घोर युद्ध कर, क्लान्त-अवसन्न और क्षत-विक्षत हो वीर-गति प्राप्त की। मरते समय बाजीप्रभु बोले,—"प्रभु निरापद विशालगढ़-दुर्गमें पहुंच गये अतः अब मेरे लिये किसी प्रकारकी चिन्ता या उद्वेगका कारण नहीं रहा। अब मैं सानन्द निश्चिन्त हो मृत्युका आलिङ्गन करता हूं ।" धन्य स्वदेश-प्रेम, धन्य प्रभु-भक्ति ! शिवाजी

यदि बाजीप्रभु जैसे त्यागी, कर्तव्यनिष्ठ, बुद्धि-सम्पन्न साथियोंको न पाते तो कदापि इतने शक्तिशाली न हो सकते।

इस युद्धमें मराठोंको परास्त करता हुआ फाजिलखां रङ्गन तक चला गया। इसके बाद सन् १६६१ में स्वयं आदिलशाहने प्रकाण्ड सैन्य दलको साथ लेकर कुरारकी ओर यात्रा की और मदन-गढ़ दुर्ग पर अधिकार कर निकटवर्ती प्रदेशपर भी अधिकार कर लिया। अब केवल रङ्गन और विशालगढ़के किले ही शिवाजीके अधिकारमें रहे। और सब किलों पर बीजापुरका अधिकार हो गया। इसी समय वर्षा ऋतुका आरम्भ होनेके कारण आदिलशाहने बीजापुरको प्रस्थान किया। तब सुविधा देख शिवाजीने फिर रागपुर पर अधिकार कर लिया।

इधर आदिलशाहने स्वयं भी शिवाजीका पीछा करके जब देख लिया और उनका कुछ भी बना-बिगाड़ न सका, तो चिन्तासागरमें पड़ा। कारण कि मराठों और मुगलोंसे लगातार बहुत दिनोंसे संघर्ष हो रहा था—और इस संघर्षमें बीजापुरकी बहुत शक्ति नष्ट हो चुकी थी। बहुत अर्थ-व्यय और सेना-नाशके होने पर भी बीजापुरकी इष्टसिद्धि नहीं हुई थी। इसोलिये इस व्यर्थके संघर्षको समाप्त करनेके लिये आदिलशाहने अपने प्रधान प्रधान कर्मचारियोंको बुलाकर परामर्श किया कि क्या करना चाहिये। इस परामर्श-सभामें साहाजीको भी बुलाया गया। साहाजी पुत्र शिवाजीके वीरत्व और असाधारण कीर्त्ति-कलापोंको सुनकर शिवाजीको देखनेकी इच्छा कर रहे थे। अन्तमें जब परामर्श-सभामें यह निश्चय हुआ कि शिवाजीके साथ सन्धि करनेको बीजापुरकी ओरसे साहाजीको ही भेजा जाय, तब तो शाहाजी बहुत प्रसन्न हुए।

शिवाजीने एक ही उद्देश्यको लक्ष्यमें रखकर सब कार्य सफल

किये थे। मराठा जातिकी मुसलमानोंके हाथसे रक्षा करना सर्व प्रथम उद्देश्य था। इस कार्यमें शिवाजीको आशातीत सफलता भी मिली। बीजापुर आदि मुसलमान-राज्योंके हाथोंसे अनेक छोटी-छोटी मराठा शक्तियोंको शिवाजीने मुक्त कराया। इस समय शिवाजीको भी यही अभीष्ट था—कि गोलकुण्डा और बीजापुरसे सन्धि स्थापन कर किसी प्रकारसे मुगल-शक्तिको खर्व किया जाय। इसी समय जब शिवाजीने यह सुना कि बीजापुरमें सन्धि करनेके लिये स्वयं उनके पिता साहाजी आ रहे हैं, तो शिवाजी आनन्द सागरमें निमग्न हो गये।

पाठकोंको स्मरण होगा कि शिवाजीके साथ उनके पिता साहाजी भी मुसलमान राज्योंके ध्वंशकारी षड्यन्त्रमें लिप्त हैं—ऐसा कहकर बीजापुरने शिवाजीके पिता साहाजीको एक प्रकारसे नजरबन्द कर रखा था। अन्तमें शिवाजीके ही बल-विक्रम और बुद्धि-कौशलके कारण साहाजीको सन्धि-दूत बनाकर बीजापुरको शिवाजीके पास भेजना पड़ा। साहाजी बेचारे यद्यपि बड़े राजनीतिज्ञ थे, परन्तु थे बड़े धर्मनिष्ठ। उन्होंने कभी स्वप्नमें भी बीजापुरके अनिष्टकी कल्पना नहीं की थी। अन्तमें उसी धर्मनिष्ठाके कारण बीजापुरको उन पर विश्वास होकर ही रहा कि साहाजी पर वास्तवमें शिवाजीके कार्यों का उत्तरदायित्व नहीं है। इस सम्बन्धमें कई मुसलमान-इतिहासकारोंने साहाजीको निर्दोष नहीं माना है। उन लोगोंका कहना है कि कुछ भी हो, साहाजी शिवाजीके षड्यन्त्रमें लिप्त थे। परन्तु इन मुसलमान-इतिहासकारोंकी यह बात तो इसी घटनासे प्रत्यक्ष निराधार और मिथ्या प्रमाणित हो जाती है कि बीजापुर जब सब तरहसे हार गया, तो उसने किसी प्रकारसे सन्धि स्थापन करनेके लिये साहाजीको ही अपना दूत बना कर शिवाजीके पास भेजा। यदि साहाजी वास्तवमें

ऐसे विश्वासघाती होते, जैसे कि मुसलमान इतिहासकारोंने बताये हैं—तो वे कभी भी सन्धि करनेके लिये शिवाजीके पास न भेजे जाते। इसके अतिरिक्त साहाजी यदि शिवाजीके कार्यों में संश्लिष्ट होते ही तो वे फिर शिवाजीसे यह प्रतिज्ञा ही क्यों करवाते कि फिर कभी बीजापुर पर आक्रमण मत करना। खैर जो कुछ भी हो, साहाजी भी अपनी इस नियुक्तिसे प्रसन्न हुए। धर्म-भीरु साहाजीने पुत्रके कार्योंसे खिन्न होकर ही अब तक पुत्र-मुख दर्शन नहीं किया था। धर्म-रक्षाके लिये शिवाजी जैसे असाधारण गुण सम्पन्न पुत्रका त्याग करनेका दृष्टान्त मिलना बहुत कठिन है। अस्तु, साहाजी शिवाजीकी विमाता तुकाबाई एवं वैमात्रेय-भ्राता व्यङ्कोजी और कुछ राज-कर्मचारियोंको साथ लेकर शिवाजीसे भेंट करनेको चल पड़े। इधर शिवाजीने भी पिता साहाजीके प्रस्थानका सम्वाद सुन कर उनके मिलनेके लिये एक विशाल राजकीय ठाठ-बाठका स्थान निर्माण कराया। उस स्थानको नाना प्रकारके वस्त्रों एवं फूल-बूटोंसे सजाकर उसमें दीपावली की गई। द्वार पर अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे। इसके बाद शिवाजीने अपने सेनापति नेताजी पालकरको कुछ सेना सहित पिताजीकी अगवानी करनेको भेजा—और स्वयं भी माता जीजाबाई सहित कुछ दूर आगे जाकर पिताजीका स्वागत किया। साहाजीके नेत्र, पुत्र-मुख-दर्शन कर आनन्दाश्रु प्रवाहित करने लगे। साध्वी-पतिव्रता जीजाबाई बहुत समयसे एक प्रकारसे पति-परित्यक्त-जीवन व्यतीत कर रही थीं। अबतक एकाकिनी जीजाबाईने स्वयं शिशुपुत्र शिवाजीका लालन-पालन और शिक्षा-दीक्षाका प्रबन्ध किया था—और पुत्रका मुंह देख कर—उसकी कल्याण—कामनाके लिये भवानी चरणोंमें आत्म-समर्पण कर जीवन धारण कर रही थीं। इस जीवनमें स्वामी दर्शनकी आशा नहीं रही थी। परन्तु आज एकाएक

यह क्या हुआ ! जीजाबाई सोचने लगी कि यदि इस समय स्वामीके चरणोंमें मेरी मृत्यु हो जाय, तो कैसा अच्छा हो ? ऐसे कर्तव्य-परायण धार्मिक स्वामी इस संसारमें किसके हैं ? ऐसे त्यागी स्व-देशोद्धार-व्रतके व्रती महावीर और महाप्राण पुत्रकी जननी होनेका किसे सौभाग्य प्राप्त है ? तपस्विनी जीजाबाई सोचती थीं कि यदि पति और पुत्रके सामने आज प्राणान्त हो जाय, तो कठोर तपस्याका पुरस्कार प्राप्त हो जाय ।

इधर बहुत समयके पश्चात् शिवाजीने पिताके दर्शन कर भक्ति-सागरमें निमग्न होकर पिताजीकी चरण-धूलि मस्तक पर लगाई और पिता साहाजीने आनन्दाश्रु-वर्षण करते हुए पुत्र शिवाजीका आलिङ्गन कर आशीर्वाद दिया । इस आनन्दोत्सवके समय दरिद्रोंको अन्न और वस्त्र बांटे गये एवं कर्मचारियोंकी यथायोग्य पदोन्नति की गई । पश्चात् सब लोगोंने वहांसे पूनाको प्रस्थान किया । पूना वहांसे दश कोस है । साहाजी पालकीमें बैठे—और पितृ-भक्त शिवाजी पूना तक नंगे पांव पालकीके साथ पैदल चले । *

पूना पहुंच कर शिवाजीके उस स्थानमें सब लोग पहुंचे जो साहाजीके ठहरनेके लिये विशेष रूपसे सज्जित किया गया था । राजसिंहासन पर पिता साहाजीको बैठाकर शिवाजी सामने हाथ जोड़ कर खड़े हो गये और उनकी आज्ञा पालन न करके उन्होंने जो

* Then Shahaji got into a Palki and Shiva to enter it The latter respectfully declined, but walked holding the ring of the Palki. They proceeded thus for ten miles and reached Poona. In the outer palace Shahaji sat on the guddi, Shivaji stood among the servants and followers holding in his hands his father's shoes (Prof. J. N. Sircar)

बार बार बीजापुर पर आक्रमण किया था, उसके लिये क्षमा मांगने लगे। सब लोग इस अपूर्व भक्ति-भावको देखकर मोहित हो गये। उत्तरमें गद्‌गद् कण्ठ हो साहाजीने कहा,—"बेटा, जो पुत्र देशकी पराधीनताको बेड़ियोंको काटनेके लिये सतत चेष्टा करता है, उसके सहस्र सहस्र अपराध भी हों तो भी मार्जनीय हैं।" इसके बाद साहाजीने पुत्र शिवाजीको राज्य-विस्तार करनेके लिये अनेक परामर्श दिये—और व्यङ्कोजी भ्रातृ-स्नेहसे वञ्चित न रहें, इसका आदेश दिया।

इसके पश्चात् शिवाजीने पिताको वह स्थान दिखाया; जहां अफजलखांकी हत्या की गई थी। वहांसे हरिहरेश्वर-तीर्थ—स्नान करते हुए पिता और पुत्रने स्वामी रामदासके दर्शन किये—और वहांसे रायरीके लिये प्रस्थान किया। इस स्थानका वर्तमान नाम रायगढ़ है। यह स्थान इतना ऊंचा और दुर्गम है कि चारों ओर पर्वत-श्रेणी और चारों ओरसे दुरारोह है, जिसे देख कर साहाजीने शिवाजीको यहां अपना प्रधान दुर्ग निर्माण करनेका परामर्श दिया। पिताजीकी आज्ञाके अनुसार शिवाजीने उसी समय आवाजो सोन-देवको वहां दुर्ग निर्माण करनेका आदेश दिया।

यथासमय शिवाजीकी आज्ञानुसार उपरोक्त स्थान पर एक विशाल-दुर्ग और शिवाजीकी राजधानी बन कर तैय्यार हो गई। धनागार और शस्त्रागार सुदृढ़ निर्माण किये गये। माता जीजाबाईके लिये एक विशाल अट्टालिका निर्माण की गई। सब काम समाप्त हो जाने पर शिवाजीने यह जाननेके लिये कि इसके भीतर प्रवेश करनेके लिये कोई और गुप्त-मार्ग तो शेष नहीं रह गया है, यह घोषणा की कि यदि इस दुर्गमें प्रधान द्वारसे न जाकर किसी गुप्त मार्गसे कोई प्रवेश कर सके, तो उसे बहुतसी स्वर्ण-मुद्रायें पुरस्कारमें दी जायंगी।

इस घोषणाको सुन कर एक छोटी जातिके आदमीने जो सदैव दुर्गम-पर्वतमालाओंमें ही भ्रमण किया करता था—शिवाजीकी घोषणाको स्वीकार कर लिया और एक गुप्त मार्गसे भीतर घुस कर उसने प्रधान अट्टालिका पर अपना झण्डा फहरा दिया। शिवाजी बहुत विस्मित हुए और उन्होंने उस आदमीको घोषित किया हुआ पुरस्कार देकर उस गुप्त-मार्गको बन्द करा दिया। आज भी वह स्थान 'चोर-दरवाजा'के नामसे प्रसिद्ध है। इसके पश्चात् और एक घटना हुई। हीरामणि नामकी एक ग्वालिन जो प्रतिदिन किलेमें दूध देने जाया करती थी—एक दिन उसको अधिक रात्रि हो गई और दुर्गके प्रधान द्वार सब बन्द हो गये। घर पर उसका एकमात्र शिशु-पुत्र और बूढ़ी सास अकेली थी। उसने बहुत अनुनय-विनय कर किलेका कोई द्वार खुलवाना चाहा, परन्तु नियम न होनेसे नहीं खोला गया। इस प्रकारसे जितनी ही रात्रि अधिक व्यतीत होती जाती, उसके प्राण काम्पते जाते। अन्तमें विवश होकर उसने एक पर्वतकी ऊंची गुफाके सहारे नीचे खिसकना आरम्भ किया—और थोड़ी ही देरमें किलेसे बाहर हो गई! प्रातःकाल शिवाजीको भी इस घटनाका पता लगा। उन्होंने उसी दिन वहां एक सुदृढ़ बुर्ज निर्माण करा दिया—जिससे फिर उस मार्गसे कोई बाहर भीतर न जा सके। आज भी "हीरामणि बुर्ज"के नामसे वह प्रसिद्ध है। रायगढ़के इस किलेको सुदृढ़ बनाकर शिवाजी वहीं स्थायी रूपसे रहने लगे।

इधर दो मास तक पिता साहाजी शिवाजीके पास रहकर विदा होनेकी तैय्यारी करने लगे। शिवाजीने बहुत कुछ प्रार्थना की कि अब आप वृद्ध हो गये हैं, यहीं रह कर आप शासन कीजिये। मैं आपकी आज्ञाका पालन करूंगा। परन्तु साहाजीने इस बातको स्वीकार नहीं किया। अन्तमें बहुतसा धन, रत्न, मणि-माणिक्य देकर

शिवाजीने अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे विदा किया। जाते समय साहाजीने शिवाजीको आदेश किया कि अब बीजापुर पर आक्रमण मत करना। शिवाजीने भी यह कहकर उनकी आज्ञाको स्वीकार किया कि बीजापुर मेरे किसी काममें यदि बाधा नहीं पहुंचावेगा तो मैं भी उसपर आक्रमण नहीं करूंगा। इसके बाद साहाजीने शिवाजीको एक तलवार भेंट की, जिसका नाम शिवाजीने 'तुलजा' रखा।

साहाजी यहांसे विदा होकर यथासमय बीजापुर पहुंचे और वहां पहुंच कर उन्होंने वे सब बहुमूल्य वस्तुयें जो शिवाजीने उन्हें भेंटमें दी थी, बीजापुरके आदिलशाहकी भेंट कर दी और कहा कि शिवाजीसे सन्धि हो गई और शिवाजीने ये वस्तुयें आपको भेंट स्वरूप दी हैं। सुल्तान शिवाजीसे सन्धि हो जानेके कारण बहुत प्रसन्न हुआ।

इस समय शिवाजीका अधिकार कल्याणसे लेकर गोवा तक समस्त कङ्कण-प्रदेश पर हो गया था। इस समय शिवाजीके पास ५० हजार पैदल सैनिक और सात हजार अश्वारोही थे। बीजापुरके साथ सन्धि हो जानेपर शिवाजी फिर अपने अधिकृत दुर्गोंका प्रबन्ध और नवीन दुर्ग निर्माण करनेके कार्यमें लग गये। शिवाजी इस बातको अच्छी तरहसे समझते थे कि शीघ्रही मुगलोंके साथ घोर संग्राम होनेवाला है। इसीलिये शिवाजी अपने किलों और सेनाओंको सुसज्जित करनेमें लग गये।

———

दशम--परिच्छेद ।

सूरतकी लूट ।

—*::०::*—

शिवाजी बीजापुरसे सन्धि स्थापन कर मुगलोंसे देशका उद्धार करनेको प्रस्तुत हुए। नेताजी पालकर और मोरो पिङ्गलेने शिवाजी की आज्ञासे अहमदनगरसे लेकर औरङ्गाबाद तकका प्रदेश लूटना आरम्भ किया। इसी समय एक मुगल राजकर्मचारीने शिवाजीके भयसे आतङ्कित हो मुगलोंके दाक्षिणात्य सूबेदार सायस्ताखांसे आकर शिकायत की कि शिवाजीके सैनिकोंकी लूट खसोटके कारण अब लोग राजस्व वसूल करनेमें असमर्थ हैं। उक्त कर्मचारीकी बात सुन कर व्यङ्ग कर सायस्ताखांने उससे कहा—यदि तुम लोग शिवाजीसे इतने भयभीत हो गये हो तो मैं एक स्त्रीको तुम्हारी सहायताके लिये भेजता हूं।" इसके बाद सचमुच ही सायस्ताखांने एक मराठा वीर हिन्दू रमणीको इनकी सेनाको अधिनायिका बनाकर भेजा। इस वीर रमणीने मुगलोंकी सेना लेकर कई दिन तक शिवाजीके साथ घोर युद्ध किया, परन्तु इस वीर रमणीको मराठोंने पकड़ कर कैद कर लिया। इसके पश्चात सायस्ताखांने और एक मुगल सैनिकोंका दल एक राजपूतके सेनापतित्वमें शिवाजी पर आक्रमण करनेके लिये भेजा। शिवाजीने इसको भी परास्त कर दिया और स्वयं मुगलराज्यके बहुतसे प्रदेशका राजस्व वसूल करने लगे। इस बीचमें शिवाजीने कितने ही स्थानों पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया। दिल्लीके मुगल-सम्राट् औरङ्गजेबको जब यह समाचार मिला तो वह बहुत

क्रुद्ध हुआ और उसने सायस्ताखांको आज्ञा भेजी कि तुरन्त शिवाजी पर आक्रमण कर उनके अधिकृत किलों पर अधिकार कर लो। सम्राट् की आज्ञा पाकर सायस्ताखांने औरंगाबादमें मुमताजखां और जोधपुरके महाराज यशवन्तसिंहको रख कर स्वयं शिवाजी पर आक्रमण कर दिया। सायस्ताखांके साथ मुगलोंकी एक बड़ी भारी सेना थी।

सन् १६६० की २५ फरवरीको उसने अहमदनगरको परित्याग कर पूनाकी ओर प्रस्थान किया। रास्तेमें जो नगर मिलते, सायस्ताखां उनपर आक्रमण कर उनको अपने अधिकारमें करता जाता। इधर मराठा लोगोंने भी उसके साथ सम्मुख युद्ध न करके गुप्त आक्रमण करने आरम्भ कर दिये। परन्तु इसका कुछ भी परिणाम नहीं हुआ। वर्षा-ऋतुका आरम्भ हो रहा था। सायस्ताखांने वर्षा-ऋतु पूनामें व्यतीत करनेका सङ्कल्प किया, परन्तु सायस्ताखांके पूना पहुंचनेसे पहले ही मराठोंने पूना और उसके आस-पास खाद्य द्रव्यों एवं पशुओंके चारे आदिका नाश कर दिया। इससे मुगलसेनाको बड़ा कष्ट होने लगा—उधर वर्षाऋतुके कारण चारों ओरसे नदीमें भयङ्कर बाढ़ आ गई, जिससे उनका कष्ट और भी बढ़ गया। इस प्रकारसे पीड़ित होकर सायस्ताखांने पूनामें रहनेका विचार परित्याग कर दिया—और अपनी सेनाको लेकर चाकनेरके किले पर चढ़ाई कर दी। परन्तु यह किला ऐसे अच्छे ढङ्गसे सुरक्षित था कि एकाएक इस पर मुगल अधिकार नहीं कर सकते थे। वीरवर फिरंगजी नारशल्ला इस दुर्गके प्रधान रक्षक थे। फिरङ्गजीने मुगलोंका आक्रमण होता देख—उनसे मालवा सैनिकोंको भिड़ा दिया। मुगलोंने किले पर कई बार आक्रमण किये, परन्तु मावले वीर सैनिकोंने उनके पांव नहीं जमने दिये। परन्तु सायस्ताखां अपनी विशाल मुगल सेनाको लेकर किले पर भीषण गोलाबारी करने लगा। मुगलोंके पास युद्धका बहुत

अधिक सामान था—वे लगातार दो मास तक किले पर गोलाबारी करते रहे। अन्तमें फिरङ्गजीके प्रायः निशस्त्र सैनिक शिथिल होने लगे। फिरङ्गजीने अपने सैनिकोंकी ऐसी दशा देख कर एक दूत द्वारा सायस्ताखांके पास सन्देशा भेजा कि यदि वह मुझे अपने सैनिकोंके साथ निरापद किला छोड़ कर चला जाने दे, तो मैं किले परसे अधिकार उठा लूंगा। सायस्ताखांने फिरङ्गजीकी बातको स्वीकार कर लिया। सब बातें तय हो जाने पर फिरङ्गजीने सायस्ताखांसे जाते समय भेंट की। सायस्ताखां फिरङ्गीजीके अद्भुत वीरत्वको देख कर—उनपर मुग्ध हो गया था। उसने फिरङ्गजीसे शिवाजीकी तुच्छ नौकरी छोड़कर मुगल-सम्राट्का कोई उच्च पद स्वीकार करनेकी सम्मति दी। फिरंगजीने धन्यवाद पूर्वक सायस्ताखाँसे कहा,—"मैं तो शिवाजीका एक निकृष्ट कर्मचारी हूं। उनसे मुझे जो वेतन मिलता है, वह मेरे लिये बहुत पर्याप्त होता है। भोजनाच्छादनसे जो बचता है, उसे मैं देवाराधनमें व्यय कर देता हूं। इससे अधिक धनकी मुझे वास्तवमें आवश्यकता भी नहीं है।" फिरंगजीके उत्तरको सुनकर सायस्ताखां अवाक् रह गया। वह सोचने लगा कि मुगल सम्राट्के यहां नौकरी पानेके लिये लोग तरसते हैं, और फिरंगजी इस प्रकारसे उसका प्रत्याख्यान करते हैं। जरूर शिवाजीने इनको भी किसी सम्मोहिनी मन्त्रसे दीक्षित किया है। फिरंगजीकी इस निस्पृहताको देख कर आज सायस्ताखांने समझा कि वीर मराठोंको धनका लोभ देकर कर्तव्य-विमुख नहीं किया जा सकता। बडी बड़ी नौकरियों पर दरिद्र किन्तु वीर मराठे अनायास ही ठोकर मार सकते हैं। मराठा लोग स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये मतवाले हो उठे हैं। रक्तका एक विन्दू मात्र भी शेष रहनेसे ये लोग—युद्धसे पीछे नहीं हटेंगे। बिना प्राणोंका बलिदान किये ये लोग सूचिके अग्रभागके समान भी अपनी जगह किसी औरके अधिकारमें न जाने देंगे।

उक्त दुर्ग पर अधिकार कर सायस्ताखांने सेनाके अधिक भागको तो वहां रखा और स्वयं बहुतसे सैनिकोंके साथ स्वतः पूना लौट गया। पूना पहुंच कर सायस्ताखांने दादाजी कोण्डदेव-द्वारा निर्मित शिवाजीके राजमहलमें रहना स्थिर किया—और चतुर्मास तक वहीं अवस्थान करनेका निश्चय कर वहीं रहने लगा। इसी समय शिवाजी सिंहगढ़से रायगढ़ आये। सायस्ताखांको जब यह बात मालूम हुई तो उसने एक दूत द्वारा उनके पास एक पत्र भेजा, जिसमें व्यङ्ग कर लिखा था—कि लोग तुमसे व्यर्थमें ही भयभीत हैं। तुम तो जङ्गली बन्दरके समान हो, जिसे जङ्गलका वास ही शोभा देता है। उत्तरमें उसी दूत द्वारा शिवाजीने लिख भेजा कि मैं बन्दर तो अवश्य हूं, पर हूं—बन्दरोंका राजा हनुमान और हनुमानकी तरहसे ही लङ्काधिपतिका तुम्हारा नाश कर सीतारूपी देशका उद्धार करूंगा। सायस्ताखांने की थी तो हंसी—पर एक आफत खरीद ली। शिवाजीका उत्तर पाकर वह बहुत भयभीत हुआ और दिन-रात शिवाजीके आक्रमणसे भय-भीत रहने लगा। उसने अपने मराठा सैनिकोंको नौकरीसे बरखास्त कर दिया और साथ ही बिना किसी विशेष प्रयोजनके पूनामें हिंदुओं का प्रवेश निषेध कर दिया।

इधर शिवाजी भी चुप-चाप सायस्ताखांके कार्य-कलापोंको बड़ी तीक्ष्ण दृष्टिसे देखने लगे। सायस्ताखां मुंहसे चाहे जो कुछ कहता रहा हो, परन्तु मनमें वह शिवाजीसे बहुत डरता था। थोड़े दिनोंके बाद एक दिन शिवाजी एक हजार सैनिकोंको साथ लेकर पूनाकी ओर अग्रसर हुए और मोरोपन्थ एवं नेताजी पालकरको एक एक हजार सैनिक देकर मुगल सेनाके व्यूहका मोर्चा करनेका आदेश देते गये। सन्ध्याके समय शिवाजी पूनाके समीपस्थ प्रदेशमें जाकर सेना सहित बनमें जा छिपे—और ठीक अर्द्ध रात्रिके समय चार सौ

सैनिकों एवं बाबाजी, बाबूजी और चिमनजीको साथ लेकर सायस्ता-खांके वास-भवनके पास जा पहुंचे। पूनाके जिस भव्य-भवनमें शिवाजीने बाल्यकाल व्यतीत किया था, उसमें शत्रुको अवस्थान करते देख शिवाजी बड़े मर्माहत हुए। इस राज-भवनके सभी गुप्त और प्रकाश्य मार्गोंको शिवाजी अच्छी तरहसे जानते थे।

भाद्रपद मासकी घोर अन्धकारमयी रात्रि थी। बीच-बीचमें वृष्टि होती थी और रमजानके दिन थे। मुगल-सैनिकगण दिनमें उपवास करते और रात्रिको भरपेट भोजन कर सुखकी नींद सोते। इस समय प्रायः सब लोग घोर-निद्रामें सो रहे थे। हां, कुछ रसोई-दार लोग जाग रहे थे। धीरे-धीरे शिवाजी वहीं पहुंचे। रसोईदार लोगोंने भी उनको देखा—और वे चीत्कार-ध्वनि कर सब लोगोंको जगाना ही चाहते थे कि शिवाजी और उनके साथियोंने तलवारका एक ऐसा हाथ जमाया, कि क्षणभरमें उनके शिर भू-लुण्ठित होने लगे। रसोईखानेका द्वार भीतरसे बन्द था। शिवाजीने उसको अपने साथियोंकी सहायतासे उखाड़ दिया और भीतर प्रवेश किया। इस समय दो सौ सैनिक भी उनके साथ भीतर घुसे। शिवाजी क्षण भरके लिये सायस्ताखांकी शय्याके पास जाकर खड़े हुए। इसी समय कुछ दासियां जाग उठीं और चीत्कार करने लगीं, जिससे सायस्ताखां भी उठ बैठा। उसने भयभीत होकर देखा कि सामने शिवाजी खड़े हैं! वह चाहता ही था—कि पास ही खड़ी तलवारको उठा कर उन पर आक्रमण करे—कि इतनेमें ही शिवाजीने अपनी तलवारसे उसकी एक उङ्गलीको काट डाला, जिसे लेकर वह तड़फने लगा। इसी समय किसी चालाक दासीने दीपक बुझा दिया और कई दासियां मिल कर सायस्ताखांको वहांसे उठा ले गईं। इसी समय शिवाजीके बाहर खड़े शेष दोसौ सिपाहियोंने मुगल-सैनिकों पर आक्रमण कर दिया और

बाजा बजानेवाले मुगल-सैनिकोंको विवश किया कि वे बाजा बजावें। वे युद्धका बाजा बजाने लगे। सोते पड़े समस्त मुगल-सैनिक जाग उठे—और हड़बड़ा कर इधर उधर देखने लगे। परन्तु वस्तुस्थिति उनकी समझमें नहीं आई। इतनेमें ही शिवाजी भी अपने साथियों एवं सैनिकोंको लेकर वहांसे अदृश्य हो गये। इधर मुगल-सैनिक जब होशमें आये तो एकत्रित होकर शिवाजी और उनके साथियोंको तलाश करने लगे। पर वे वहां थे कहां? मुगल-सैनिक अवाक् हो इधर-उधर देखने लगे। उन लोगोंने देखा कि—बाहर दूर एक घने जङ्गलमें मशालोंकी प्रकाण्ड रोशनी हो रही है। सैनिकोंने समझा कि वहीं शिवाजी और उनके सैनिक ठहरे हुए हैं। बस, फिर देर क्या थी—लगी मशालों पर गोलाबारी होने। मुगल-सैनिक गोला-बारी करते-करते मशालोंके पास जा पहुंचे। परन्तु वहां जाकर जब उन्होंने देखा, तो उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। देखा कि वहां न सैनिक हैं, न शिवाजी! वैसे ही वृक्षोंसे बंधी हुई मशालें जल रही हैं। तब मुगलोंने समझा कि शिवाजीकी ही यह करामात है—और वही अपना जौहर दिखा कर कहीं अदृश्य हो गये हैं। सैनिक फिर राजमहलकी ओर वापस चले आये। उधर शिवाजी भी अपना कार्य सम्पन्न कर सानन्द निरापद सिंहगढ़के किलेमें जा पहुंचे। सायस्ताखां शिवाजीसे इस प्रकारसे उङ्गली कटवा कर बड़ा लज्जित हुआ। इस घटनाका सम्वाद जब मुगल-सम्राट् औरङ्गजेबके पास पहुंचा तो वह बड़ा मर्माहत हुआ। बहुतसे मुगल-राज्यके अधिकारियोंने अनुमान किया कि हो न हो जोधपुरके राजा यशवन्तसिंह गुप्त रूपसे शिवाजी से मिल गये हैं—नहीं तो यह दुर्घटना कभी भी घटित न होती। स्वयं सायस्ताखांने भी अपनी पराजयका यही बहाना लिख भेजा था। इससे उन अधिकारियोंकी धारणा और भी दृढ़ हो गई। किन्तु प्रखर

बुद्धि औरङ्गजेबने इस बात पर विश्वास नहीं किया । उसने मन ही मन शिवाजीको अद्भुत वीरताको सराहा और सायस्ताखां पर क्रोध प्रकट कर उसे और योधपुरके राजा यशवन्तसिंहको दिल्ली बुला भेजा । यथासमय सायस्ताखां राजा यशवन्तसिंहके साथ दिल्ली पहुंचा। सम्राट् औरङ्गजेब उस समय काश्मीर-यात्रा करनेके लिये तैयार हो रहा था । उसने सायस्ताखांसे भेंट भी नहीं की—और बाहरसे बाहर उसको आज्ञा लिख भेजी कि वह महाराष्ट्रमें रह कर शिवाजीके साथ मुठभेड़ करनेमें अयोग्य है—इसलिये उसे बङ्गालकी सूबेदारी पर अधिष्ठित किया जाता है । सायस्ताखां बेचारा अपनी पराजयसे लज्जित होकर बङ्गालको चल दिया और दक्षिणकी सूबेदारी शाहजादा मौअज़मको देकर राजा यशवन्तसिंहके साथ उसे दक्षिणमें भेज दिया गया ।

सायस्ताखांके साथ घटित इस घटनाको मुसलमान इतिहासकारोंने विश्वासघात बताते हुए शिवाजीको शैतानका अवतार बताया है । अंग्रेज इतिहास-लेखकोंने भी मुसलमान-इतिहासकारों की नकल की है । परन्तु हमारी समझमें यह बिलकुल पक्षपात और अन्ध परम्परा है । राजनीतिमें ऐसी घटनायें आज भी प्रतिदिन घटित होती हैं । स्वयं उन इतिहासकारोंके वन्शज आज भी निरस्त्रों पर गोलाबारी करके उनके प्राण हरण करते एवं उनके घर बारोंको लूट-खसोट लेते हैं । फिर शिवाजीको ही इसके लिये दोषी ठहराना अन्याय है ।

जिस समय शिवाजी मुगलोंके साथ युद्धमें व्यस्त थे, उसी समय उनकी पत्नीके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ । जिसका नाम शिवाजीने राजाराम रखा । उधर इसी समय शिवाजी के पिता साहाजीका शिकार खेलते समय बङ्गलौरमें देहान्त हो गया,

जबकि वे बीजापुरकी ओरसे वहांके विद्रोही जमीन्दारोंका दमन करने गये थे। साहाजीकी द्वितीय पत्नी और पुत्र साथ थे। उन लोगोंने शास्त्र-विधिके अनुसार उनका अन्त्येष्ठी संस्कार किया। शिवाजीको जब पिताजीकी मृत्युका सम्वाद मिला, तो वे बड़े मर्माहत हुए। उनकी माता जीजाबाई तो सती होनेको तैयार हो गई। परन्तु बहुत लोगोंके समझाने बुझानेसे किसी तरहसे उनको सहमरणसे विरत किया गया। इसके बाद शिवाजीने बड़े समारोहसे पिताजीका क्रियाकर्म किया। साधु तुकारामसे भेंट होनेपर उन्होंने भी शिवाजीकी विरक्तिको दूर किया। इसी समय एकबार जब शिवाजी साधु तुकारामकी कथा सुनने उनके पास गये, तो मुगलोंके एक अश्वारोही दलने उन्हें पकड़ना चाहा। परन्तु वहां पहुंचने पर उस दलको शिवाजीका कुछ भी पता नहीं लगा।

इसके बाद जब मुगल बहुत उपद्रव करने लगे तो शिवाजी बहुत क्रुद्ध हुए और प्रतिशोध लेनेकी तैयारी करने लगे। सर्वप्रथम शिवाजीने सूरत पर आक्रमण किया, सूरत उस समय भी व्यापारका केन्द्र था। जब सूरतके अधिकारियोंने सुना कि शिवाजी सूरत पर आक्रमण करने आरहे हैं, तो लोग भागने लगे। कुछ लोगोंने वहांके शासक इनायतखांके पास जाकर दुर्गमें आश्रय लिया। इनायतखां भी डरकर किलेमें ही दबक रहा और आक्रमण रोकनेकी हिम्मत नहीं की। हां कुछ धनियोंके कहने पर उसने एक दूत द्वारा शिवाजीके पास संदेश भेजा कि यदि शिवाजी कुछ रुपया लेकर पीछे लौट जायं और आक्रमण न करें, तो उनको बहुतसा धन दे सकते हैं। उत्तरमें शिवाजी ने उसी दूत द्वारा कहला भेजा कि हम इनायतखांकी तरहसे स्त्री नहीं हैं, जो नगरकी रक्षा न कर किलेमें छिपकर बैठ जांय। यदि सन्धिकी बातचीत करनी हो, तो वह स्वयं आकर हमसे वार्तालाप करे।

शिवाजीकी अभिमानपूर्ण बातको सुनकर मुगल-दूत उत्तेजित हो उठा और अपनी कमरसे एक गुप्त छुरी निकालकर शिवाजीपर आक्रमण करना चाहा। किन्तु शिवाजीके सैनिकोंने उसका आक्रमण निवारण कर उसका एक हाथ काट डाला। दूत रोता हुआ चला गया और फिर इनायतखांकी ओरसे कोई जवाब नहीं मिला। शिवाजी भी समझ गये कि बिना आक्रमणके अब और कोई उपाय नहीं है। शिवाजी चार हजार सैनिकोंको साथ लेकर पूर्वकी ओर चल पड़े। मार्गमें दो हिन्दू राजा अपनी अपनी सेना लेकर उनके साथ मिल गये। अब शिवाजी १० हजार सैनिकोंको लेकर सूरत पर चढ़ गये।

सूरत गुजरात-प्रदेशका बहुत बड़ा व्यापारी केन्द्र रहा है। दिग्विजयी राजाओंकी उसपर सदा लोलुप-दृष्टि रही है। सन् १५१२—और १५३०में दो बार पोर्चुगीजोंने सूरतको लूटा था। मोहम्मद गोरी, मोहम्मद तुगलक और स्वयं अकबर भी इस लोभको संवरण नहीं कर सके थे। इन लोगोंने भी सूरतको लूटकर अपने खज़ाने भरे थे। सन् १६१२ में फ्रेंचों और अंग्रेजोंने भी अपनी व्यापारी कोठियां निर्माण की थीं। इस समय २१० अंग्रेज सूरतमें रहते थे। वैसे दो लाख आदमियोंकी आबादी थी। परन्तु किसीकी हिम्मत नहीं हुई कि शिवाजीका सामना करें। परन्तु उन २१० अंग्रेज़ोंने हाजी सय्यद बेग नामके एक धनी मुसलमानकी विशाल अट्टालिका पर मोर्चा लगा दिया। जिस समय शिवाजीने सूरत पर आक्रमण कर लूट—खसोट जारीकी—उस समय उन लोगोंने भी शिवाजीकी सेना पर गोलाबारी करनी आरम्भ कर दी, परन्तु उनके किये कुछ भी नहीं हो सका। शिवाजीने सूरतको लूटकर वहांसे प्रस्थान किया। इस लूटमें लगभग एक करोड़ रुपया शिवाजीके हाथ लगा। इसके बाद शिवाजीने अपने राज-कोषको धनसे परिपूर्ण कर राजाकी उपाधि ग्रहण की।

मुसलमान-इतिहासकारोंने सूरतकी इस घटनाको लेकर शिवाजीकी बड़ी निन्दा की है। परन्तु वे मुसलमान—इतिहासकार जङ्गिसखां एवं तैमूरलंग आदिके निष्ठुर अत्याचारोंको भूल गये हैं। अंगरेज इतिहासकारोंने भी इस घटनाको लेकर शिवाजीकी निन्दा की है। शिवाजीको विश्वासघातक, नरहन्ता और डकैत तक लिखनेमें सङ्कोच नहीं किया। परन्तु आज भी उनके वन्शधरोंके उन कृत्यों पर विचार करते हैं तो लेखनी थर्रा जाती है—जो उनके द्वारा उपनिवेश स्थापित करते समय होते रहे हैं। आज भी वे घटनाएँ वैसे ही घटित होती हैं। फिर ऐसी दशामें शिवाजीको ही नरहन्ता और विश्वासघातक तथा डकैत लिखना अन्याय नहीं तो क्या है!

इधर औरंगजेबने जिस कार्यसिद्धिके लिये शाहजादा मौअज़मको दक्षिणका सूबेदार बनाकर भेजा, वह भी विफल-प्रयासही प्रमाणित हुआ। शाहजादा दक्षिणमें आकर विलासितामें मग्न हो गया। राजा यशवन्तसिंह भी कोण्डाना-दुर्गका अवरोध करके थक गया और विफल-प्रयास होकर पूना लौट आया। इस काण्डमें बहुतसे सैनिक मारे गये। फिर वर्षा-ऋतु आरम्भ होनेके कारण मुगलोंने कहीं आक्रमण नहीं किया और शिवाजी बराबर राज्य-विस्तार करते रहे। इसी समय शिवाजीने समुद्र उपकूल पर अधिकार प्राप्त करनेके लिये कितनेही बोट और किश्तियां तैयार कराईं। जिनका यथास्थान उल्लेख किया गया है।

एकादश-परिच्छेद ।

मुगलोंसे सन्धि ।

—::*(:)*::—

औरंगजेबको जब यह सम्वाद मिला कि शिवाजी दिन पर दिन महाशक्तिशाली होते जाते हैं और उन्होंने सूरतको लूट कर अपना राजकोष परिपूर्ण कर लिया है—तथा समुद्र-उपकूलमें अपनी शक्ति बढ़ानेके लिये नये बोट और किश्तियोंका निर्माण करा रहे हैं, तो सम्राट् औरंगजेब अत्यन्त चिन्तित हुआ। सायस्ताखां जैसे कूटनीतिज्ञ एवं यशवन्तसिंह जैसे रण-शूरकी बुद्धि और वीरता—शिवाजीकी बुद्धि एवं वीरतासे परास्त हो चुकी थी, तब सम्राट् औरंगजेबका चिन्तित होना स्वाभाविक ही था। सम्राट् औरंगजेब शिवाजीकी शक्तिको नष्ट करनेका उपाय सोचने लगा। सम्राट्ने आमेराधिपति प्रवीण योद्धा—राजा जयसिंहको इस कामके लिये चुना और अफगानी वीर दिलेरखां तथा १४ हजार सैनिकोंको साथ भेजा। सन् १६६५ की १० वीं फरवरीको राजा जयसिंह १४ हजार सैनिकों सहित औरंगाबाद पहुंचा और तीसरी मार्चको पूनामें प्रवेश किया। पूना पहुंच कर जयसिंह अपने कार्य साधनके गुरुत्व एवं काठिन्यको को सोचने लगा—जिस महत् कार्यके लिये सम्राट्ने उसे दक्षिणमें भेजा था। सबसे पहले नीति-निपुण राजा जयसिंहने बीजापुरसे सन्धि की और फिर छोटे-मोटे राजाओंको सम्मान-प्रदान कर अपने साथ मिलाने लगा। जब बहुतसे राजाओं और जमीन्दारोंका सहयोग प्राप्त हो गया, तब राजा जयसिंहने एक प्रवीण सेनापतिको बहुतसी मुगल-

सेना लेकर भेजा और पुरन्दर-दुर्गको ऐसे ढंगसे घेरनेका आदेश दिया, जिससे बाहरसेमराठा लोग भीतरके सैनिकोंको कोई सहायता न पहुंचा सकें।

इस प्रकारसे पुरन्दर-दुर्गको घिरवा कर स्वयं भी राजा जयसिंह १४ वीं मार्चको पूनाका परित्याग कर पुरन्दरकी ओर चल पड़ा। पुरन्दर-दुर्ग विशाल पर्वत-माला पर अवस्थित है। उस समय पुरन्दर कितनेही दुर्गों से रक्षित था। वज्रगढ़ नामका एक महादुर्भेद्य दुर्ग उसकी रक्षा करता था। सर्वप्रथम राजा जयसिंहने वज्रगढ़के किले पर आक्रमण कर उसे घेर लिया। अफगानी वीर दिलेरखां अनवरतरूप से वज्रगढ़ पर भीषणगोलाबारी करने लगा। उस समय मुरारजी पुरन्दर, वज्रगढ़-दुर्गके रक्षक थे। मुगल-सेनाकी अपेक्षा उनके पास सैनिक भी बहुत कम थे—और अन्यान्य युद्धके उपकरणोंका भी मुगलोंकी अपेक्षा अभाव ही था। मुरारजी लगातार कई दिनतक युद्ध करते रहे परन्तु अन्तमें उन्होंने अपनी शक्ति अधिक क्षीण होती देख युद्ध बन्द कर दिया। १४ वीं अप्रैलको वज्रगढ़के वीर मराठा सैनिकोंने आत्म-समर्पण कर दिया। बुद्धिमान् जयसिंहने उन लोगोंको निरस्त्र कर—किला छोड़ देनेको कहा—मराठोंने वैसाही किया। इन वीर सैनिकोंका जयसिंहने किसी प्रकारसे अपमान नहीं किया, बल्कि सदय-व्यवहार करनेका यत्न किया—जिससे पुरन्दरके रक्षक वीर मराठे सैनिक भी इस सदय-व्यवहारको देख द्रवित हो जांय और बिना युद्धकेही पुरन्दर दुर्ग पर अधिकार हो जाय। वज्रगढ़-दुर्गके रक्षक सैनिकोंके वीरत्व का जयसिंह और दिलेरखांने सम्मान किया और वज्रगढ़ पर अधि-कार कर पुरन्दर-दुर्ग पर आक्रमण करनेका उपाय सोचने लगे।

राजा जयसिंहने वज्रगढ़के दुर्ग पर सहजमें अधिकार जमा देख दाऊदखां आदि कई सेनापतियोंको राजगढ़, सिंहगढ़ एवं रोहरीके

क़िलों पर भी छोटी-छोटी सेनाओंके साथ भेज दिया। अगण्य मुगल-सेना जब रणवाद्य बजाती हुई, उपरोक्त स्थानोंमें पहुंची तो मराठागण भीत एवं उद्विग्न हो उठे। मुगल-सैनिकोंको राजा जयसिंहने यह आदेश दे रखा था—कि जिन जिन नगरोंमेंसे होकर हमारी सेना जाय, वहांके पशुओंका घास—और लोगोंके रहनेके स्थान नष्ट-भ्रष्ट कर दिये जांय ! दाऊदखांने रोहरी-दुर्ग तक पहुंचते पहुंचते रास्तेमें ५० नगरों और ग्रामोंको नष्ट किया। इसके अतिरिक्त राजगढ़के मार्ग में जितने स्थान आये, सब नष्ट कर दिये गये। सिंहगढ़के मार्गके स्थानोंकी भी यही दशा हुई। इसके बाद पुरन्दर-दुर्गका चारों ओरसे घेरा डालकर उस पर भीषण गोलाबारी करनी आरम्भ की गई। पुरन्दर-दुर्गस्थित वीर मराठा-सैनिकगण भी अतुल विक्रमके साथ गोलीका जवाब गोलीसे देने लगे। परन्तु मुगलोंकी अपरिसीम शक्ति के सामने पुरन्दर-दुर्गके मुट्ठी भर सैनिकोंकी शक्ति नगण्य थी। परन्तु तब भी वे बड़े बल-विक्रमके साथ मुगलोंका सामना करने लगे। वीर-मराठा सैनिक रात्रिके अन्धकारमें क़िलेसे बाहर निकल कर कभी जगलमें आग लगा देते, कभी सड़कोंको बन्द कर देते और कभी सोते हुए असंख्य मुगल-सैनिकों पर धावा बोलकर मार-काट डालते। कई दिन तक इसी प्रकारसे घोर युद्ध होता रहा। मुगलोंकी २० हजार सेना थी, जो दुर्ग पर आक्रमण कर रही थी—और पुरन्दर दुर्गमें केवल दो हजार सैनिक थे—जो मुगलोंसे भिड़ रहे थे। अन्तमें मुगलोंकी भीषण गोलाबारीसे जब पुरन्दर-दुर्गके कई अंश ध्वन्स हो हो गये—तब मराठा सैनिकोंको आत्म-रक्षा करनी कठिन हो गई। तब पुरन्दर-दुर्गके प्रधान-रक्षक मुरारजीने केवल एकसौ मराठा-सैनिक को साथ लेकर दुर्गसे बाहर दिलेरखांकी पांच हजार सेना पर भीषण आक्रमण किया। मुरारजीने कितनेही मुगल-सैनिकोंको मार-काट

डाला। मुरारजीके ४० सैनिक मारे गये। परन्तु वीरवर मुरारजी दिलेरखांकी ओर अपने बल-विक्रमके साथ बढ़तेही चले गये। मुरारजीने इस समय लगभग पांच सौ मुगल-सैनिकोंको अपनी तलवार से काट डाला। अब मुरारजीके साथी ६० सैनिक भी वीर गतिको प्राप्त हो चुके थे। वीरवर मुरारजी उन लोगोंकी ओर दृष्टिपात न कर सीधे दिलेरखांकी ओर बढ़ते गये। सेनापति दिलेरखां मुरारजीके असाधारण वीरत्वको देखकर मुग्ध हो गया। प्रसन्न होकर दिलेरखांने मुरारजीसे कहा कि—वीरवर, तुम्हारी वीरताको धन्य है। यदि तुम सम्राट्के यहां कोई उच्चपद स्वीकार करना चाहो तो युद्ध बन्द कर दो। मैं तुम्हारी सिफारिश करूंगा। दिलेरखांके प्रस्तावका घृणा-पूर्वक प्रत्याख्यान करते हुए शिवाजीके परम-भक्त वीरवर मुरारजीने दिलेरखांको मारनेके लिये जब तलवार उठाई, तो दिलेरखांने एक विषसे बुझा हुआ तीक्ष्ण-बाण निक्षेप कर उनको धराशायी कर दिया। थोड़ी देर बाद वीरवर मुरारजीका देहान्त हो गया। इस महायुद्धमें कई हजार मुगल-सैनिकोंको धराशायी कर केवल तीन सौ मराठा वीर-सैनिकोंने वीरगतिको प्राप्त किया।

इधर जब शिवाजीने देखा कि पुरन्दर-दुर्गकी रक्षाका कोई उपाय नहीं रहा, तो अपना दूत जयसिंहके पास भेज कर सन्धिस्थापन करनेका प्रस्ताव किया, परन्तु राजा जयसिंहका कुछ उत्तर नहीं मिला। तब शिवाजीने मन्त्री रघुनाथरावको जयसिंहके पास भेजकर कहलाया कि यदि तुम सन्धि नहीं करोगे तो हम बीजापुरसे मिलकर तुम्हारे ऊपर आक्रमण करेंगे। राजा जयसिंहने भी समझ लिया कि यदि ऐसा होगा तो हमारे कार्यमें बाधा उपस्थित होगी। इसलिये राजा जयसिंहने कहा कि यदि शिवाजी स्वयं उपस्थित होकर वश्यता स्वीकार करें, तो उनके अपराध क्षमा किये जा सकते हैं।

एक दिन प्रातःकाल जिस समय जयसिंह अपने सैनिक शिविरमें बैठा हुआ था, शिवाजके मन्त्री रघुनाथरावने आकर सूचना दी कि शिवाजी ६ ब्राह्मणोंके साथ–आपसे मिलने आरहे हैं। राजा जयसिंहने उठकर अपने प्रधान कर्मचारियोंको उनकी अभ्यर्थनाके लिये भेजा। इसके बाद जिस समय शिवाजी वहां पधारे तो जयसिंहने द्वार पर जाकर उनकी अभ्यर्थना की और अपने आसन पर सम्मानपूर्वक बैठाया। शिवाजीके बैठ जाने पर सन्धिके सम्बन्धमें बहुत देरतक वाद-विवाद होता रहा। अन्तमें यह तय हुआ कि शिवाजीने मुगलोंके अधिकृत खानदेश, त्रयम्बक, नासिक आदि जिन स्थानों पर अधिकार कर लिया है, उनको वे छोड़ देंगे। उनके अपने प्रदेश उन्हींके पास रहेंगे, मुगल-सम्राट् उनमें कुछभी हस्तक्षेप नहीं करेंगे। इसके अतिरिक्त शिवाजी पुरन्दर, सिंहगढ़, आदि २३ किले सम्राट् औरंगजेबको दे देंगे, किन्तु राजगढ़ आदि १२ दुर्गोंपर यथापूर्व शिवाजीकाही अधिकार रहेगा। दिल्लीमें सरकारकी ओर से शिवाजीके पुत्र सम्भाजीको पाँच हजार घोड़ोंकी मनसबदारी पर नियुक्त किया जायगा और अन्यान्यबातें स्वयं शिवाजीको दिल्ली जाकर सम्राट्से तय करनी होंगी।

राजा जयसिंह और शिवाजीने तो सन्धिको स्वीकार कर लिया परन्तु विजयका सेहरा अपने शिर पर न बंधता देख सेनापति दिलेरखां ने सन्धिको स्वीकार न किया। बुद्धिमान् राजा जयसिंह भी इस रहस्यको समझ गया। उसने अपने ५० प्रधान कर्मचारियोंको शिवाजीके साथ करके दिलेरखांके पास भेजा कि महाराष्ट्रवीर शिवाजी स्वयं सन्धि करनेको खां साहेबके पास आये हैं। उमड़े हुए खांसाहेबके होश शिवाजीको देखकर गुम हो गये। दिलेरखाँने खड़े होकर शिवाजीका सम्मान किया और कहा कि मैंने प्रतिज्ञा की है कि जब

तक पुरन्दर दुर्ग पर अधिकार न कर लूंगा, सन्धि नहीं करूंगा। दिलेरखांको बात सुनकर शिवाजीने दुर्गकी चाभियां दिलेरखांको दे दीं। अब दिलेरखांके लिये कोई बहाना न रहा। मोटी बुद्धिका मालिक दिलेरखां चाभियां पाकर मारे खुशीके उछलने लगा और उसी समय शिवाजीको प्रसन्न होकर दो बढ़िया घोड़े, एक तलवार तथा एक रत्न-जटित कटार और बहुतसे बढ़िया वस्त्र भेंटकर दिये और स्वयं शिवाजोका हाथ पकड़कर राजा जयसिंहके पास पहुंचा। राजा जयसिंहने भी बहुतसी बहुमूल्य वस्तुयें शिवाजीको भेंट स्वरूप दीं।

सन्धिका सब कार्य सम्पन्न हो जाने पर हस्ताक्षर करनेके लिये सन्धि-पत्र राजा जयसिंहने सम्राट्के पास दिल्ली भेजा। सम्राट् औरङ्गजेब सन्धि--पत्रको देख कर परम प्रसन्न हुआ। सम्राट्ने भी शिवाजीकी भेंट बहुतसी बहुमूल्य वस्तुयें भेजीं तथा अपने दूतद्वारा संदेश भेजा कि सम्राट् स्वयं आगरामें शिवाजीसे भेंट करना चाहते हैं। इससे पहले राजा जयसिंहने जब शिवाजीसे कहा था कि वे आगरा जाकर स्वयं सम्राट्से भेंट करें, तो अनेक कारण बता कर शिवाजीने इस बातको अस्वीकार कर दिया था। परन्तु जब स्वयं सम्राट्ने बुला भेजा है तो शिवाजी सोचने लगे कि अब क्या किया जाय।

इधर शिवाजीसे सन्धि-स्थापित कर राजा जयसिंह बीजापुर पर आक्रमण करनेकी तैयारी करने लगा। शिवाजीको दो लाख रुपये देकर जयसिंहने विदा कर दिया और उनसे प्रतिज्ञा करा ली कि आवश्यकता पड़ने पर यथासमय शिवाजी अपनी ९ हजार सेना लेकर हमारी सहायता करेंगे। शिवाजीके विदा होने पर राजा जयसिंहने सन् १६६५ की २० वीं नवम्बरको पुरन्दर-दुर्गसे बीजापुर पर

आक्रमण करनेके लिये कूच कर दिया। शिवाजी भी नेताजी पालकरके साथ ९ हजार सेना लेकर अग्रसर हुए। मार्गमें शिवाजीने कितने ही दुर्गों पर अधिकार किया और आगे बढ़े। परन्तु बीजापुर तक नहीं जा सके। क्योंकि बीजापुरने मुगलोंका आक्रमण देख पहले सेही अपने दुर्गमें बहुतसी सेना एकत्रित कर ली थी और दुर्ग-रक्षाके लिये प्रचुर गोला-गोली संग्रह कर लिये थे। इसके अतिरिक्त आदिलशाहने अपने अश्वारोही सैनिक जहां तहां भेज कर मुगलोंको मिलने वाले अन्न और घासको नष्ट कर दिया था और कुओंमें विष गिरवा कर जलको अपेय कर दिया था। शिवाजी तो पहले ही लौट गये थे—परन्तु राजा जयसिंहने भी जब यह दशा देखा तो वह भी पीछे लौट गया।

इसके बाद शिवाजीने पनहला दुर्ग पर आक्रमण करनेका विचार किया। राजा जयसिंहने प्रस्तावको स्वीकार कर लिया और नेताजी पालकरको भी सेना सहित शिवाजीके साथ भेज दिया। शिवाजीको इतनी दूर भेजनेका एक गूढ़ रहस्य था। क्योंकि मुगलोंके शिविरमें परस्परमें ही विरोध खड़ा हो गया था। दिलेरखांका कहना था कि शिवाजीके विश्वासघातके कारण हम बीजापुर पर आक्रमण नहीं कर सके। दिलेरखां चाहता था कि शिवाजीको बन्दी कर लिया जाय। राजा जयसिंह सहमत न हुआ। इसीलिये शिवाजीको दूर देश पनहला पर आक्रमण करनेके लिये भेजा गया। शिवाजीने नेताजी पालकरके साथ वहां जाकर पनहला पर आक्रमण किया, परन्तु पनहलाके वीर सैनिकोंके दलको पराजित कर पीछे लौट जानेको विवश किया। अन्तसे विफल-प्रयास हो शिवाजीने तो पनहलासे २५ मील पश्चिमकी ओर हट कर विशालगढ़के किलेमें आ अवस्थान किया और नेताजी पालकर बीजापुरके आदिलशाहसे जा मिले।

राजा जयसिंहको इन दोनों घटनाओंसे बड़ा दुःख हुआ। अन्तमें नेताजी पालकरको किसी प्रकारसे लोभ आदि देकर राजा जयसिंह फिर अपनी ओर ले आया।

इसके बाद राजा जयसिंहने सम्राट् औरङ्गजेबको लिखा कि "आदिलशाह और कुतुबशाह एक हो गये हैं। इस समय यदि शिवाजी फिर हमारे विपक्षमें हो गये तो हमारी पराजय निश्चित है। सुतरां यदि आप उनको निमन्त्रण देकर इस समय आगरा बुला लें तो यह विपद् टल सकती है और हम लोग निःशङ्क होकर अपना कार्य्य आरम्भ कर सकते हैं।"—सम्राट् औरङ्गजेबने इस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया और चतुर राजा जयसिंह शिवाजीको आगरा भेजनेकी चेष्टा करने लगा।

द्वादश-परिच्छेद ।

शिवाजीकी परामर्श--सभा ।

शिवाजीके सामने एक महा समस्या उपस्थित हुई । यद्यपि पुरन्दर-दुर्गकी सन्धिके समय शिवाजीने बार बार आगराकी यात्रासे इन्कार किया, तथापि राजा जयसिंहके अत्यन्त अधिक अनुरोधको टालना कठिन हो गया । शिवाजी दो कारणोंसे सम्राट् औरङ्गजेबसे भेंट करना नहीं चाहते थे । पहला कारण तो यही था कि औरङ्गजेब के भाव हिन्दू-विद्वेषसे भरे हुए थे, इसलिये भी शिवाजी औरङ्गजेबसे भेंट करनेकी इच्छा नहीं रखते थे । शिवाजी सोचते थे कि सम्राट्के दरबारमें उपस्थित होने पर उनके अन्यान्य अमीर उमराओंकी तरहसे उन्हें भी मस्तक झुकाना होगा । जो शिवाजी बाल्यकालमें ही बीजापुरकी राजसभाके सुल्तानकी चिर प्रथाके अनुसार सम्मान प्रदर्शन करनेमें कुण्ठित हुए थे, वही शिवाजी इस यौवनकालमें गौरव-मुकुट सज्जित मस्तकको धर्मद्रोही, क्रूरमति निष्ठुर औरङ्गजेबके सामने अवनत करेंगे ! दूसरा कारण यह था कि औरङ्गजेब जब इस बातको अच्छी तरहसे समझ गया है कि वास्तवमें मुगल साम्राज्य विस्तार करनेमें शिवाजी ही कण्टक स्वरूप हैं, तो उसके लिये यह असम्भव नहीं है कि वह किसी प्रकारके छल-बल एवं कौशलसे आगरा पहुंचने पर शिवाजीको वहीं पकड़ ले । इन्हीं दो कारणोंसे शिवाजी आगरा जाकर सम्राट् औरङ्गजेबसे मिलनेमें आना-कानी कर रहे थे । परन्तु सम्राट् औरङ्गजेबने जब स्वयं उनको बुला भेजा

तो शिवाजीके सामने एक विकट समस्या उपस्थित हो गई। राजा जयसिंहने भी बहुत अनुरोध कर कहा कि इसमें आपकी कुछ भी हानि नहीं है। सम्राट्से भेंट करनेसे आपको लाभ ही होगा। बहुत सम्भव है कि आपको दक्षिणका सूबेदार ही बना दें। ऐसा होने पर आप सिद्दी एवं बीजापुरसे भी 'राजस्व' वसूल कर सकेंगे। इसी प्रकारसे बहुत प्रकारके लोभ दिखाकर राजा जयसिंहने शिवाजीसे आगरा जानेका आग्रह किया।

अन्तमें शिवाजीने स्थिर किया कि इस विषयमें माता जीजाबाई एवं अन्यान्य प्रधान राज-कर्मचारियोंसे परामर्श कर जो निश्चय होगा, वही करूंगा। सुतरां रायगढ़-दुर्गमें परामर्श-सभा बैठी। माता जीजाबाई और तानाजी, मोरोपन्थ आदि अपना अपना मत व्यक्त करने लगे। कोई कोई कहने लगे कि मुगलोंके साथ जो सन्धि हुई है, वह चिरस्थायी नहीं है। कारण कि मुगल-सम्राट् गोलकुण्डा और बीजापुरको परास्त कर महाराष्ट्रोंके पीछे हाथ धोकर पड़ेगा। हां जब तक गोलकुण्डा और बीजापुर परास्त नहीं होते, तबतक हमारी सन्धि भी स्थिर रहेगी। ऐसी दशामें सन्धिको भङ्ग कर देना ही उचित है। इस प्रकारकी बातें सुन कर शिवाजीके मन्त्रीने कहा,—"हमारे अर्थ-बल एवं लोकमतका बहुत ह्रास हो चुका है—और फिर मुगलोंके पास अगणित सेना, अतुलनीय धन-सम्पद और युद्धोपयोगी उत्कृष्ट आयोजन है। ऐसी दशामें मुगलोंसे लड़ाई छेड़ना महामूर्खता है।" मन्त्रीकी बात सुन कर माता जीजाबाईने पूछा,—"मन्त्री महाशय, हमारे सैनिक क्या और युद्ध नहीं करना चाहते? हमारा कोष क्या अर्थ-शून्य हो गया है? इस युद्धके लिये ऐसी कितने धनकी जरूरत होगी?" उत्तरमें मन्त्रीने कहा,—"नहीं मां, यह बात नहीं है। हमारे सैनिक महाराजकी आज्ञा पाने पर अभी आत्म-विसर्जन कर सकते

हैं। परन्तु बिना शस्त्रोंके जयसिंहकी सुशिक्षित सशस्त्र राजपूत-सेनाके सामने कैसे ठहर सकेंगे?" मन्त्रीकी बात सुन मराठा सेनापति तानाजी गर्ज उठे और बोले,—"क्या राजपूत-राजपूत करते हैं, होने दो युद्ध। देखें—सम्मुख युद्धमें हम भी प्राण दे सकते हैं या नहीं?" तानाजीको उत्तेजित देख जीजाबाई बोली,—"वत्सगण, मैं जानती हूं—युद्ध करनेमें तुम लोगोंको प्राणोंका भय नहीं है, मैंने तो एक शिवाजीके कारण सहस्रों शिवाजी पा लिये हैं। परन्तु बात यह है कि यदि विजयकी सम्भावना न हो तो व्यर्थमें लोक-क्षय करानेकी क्या जरूरत है? युद्धसे कितने ही पितृ-हीन अनाथ शिशुओंके मर्मभेदी-क्रन्दनसे समस्त महाराष्ट्र-देश पूर्ण हो जायगा, निराश्रिता विधवाओं के अश्रुपातसे हमारी पुण्यभूमिकी मृत्तिका सिक्त हो जायगी, असहाय और गरीब किसानोंके अभिशापसे हमारी जाति क्रमागत अधोगतिको प्राप्त होगी। पहले तुम लोग अपने सैनिकोंको सङ्गठित कर शिक्षित करो, धनसे राजकोषको पूर्ण कर लो, तोप, बन्दूक आदि युद्धोपकरणोंका संग्रह करो, दुःखी किसानोंके भोजन वस्त्रका यथोचित प्रबन्ध करो, जिससे वे मनोयोग पूर्वक तुम्हारी सेनामें भर्ती होकर विजय प्राप्त कर सकें। इस प्रकारसे यदि हम बलशाली हो उठें, तो फिर सन्धि भङ्ग करने पर भी औरङ्गजेब हमारा क्या बिगाड़ सकेगा!" जीजाबाईकी बात सुन कर शिवाजी बोले,—"मां, तुम्हारी बात तो ठीक है, परन्तु धूर्त औरङ्गजेबसे साक्षात् करने जाना विपज्जनक है। जो नरपिशाच राज्यके लोभसे भाइयोंकी हत्या कर सकता और पिताको कारागारमें अवरुद्ध कर सकता है, अपने धर्म प्रचारके लिये हिन्दुओंको लाञ्छित एवं उत्पीड़ित कर सकता है, उसकी बातों पर विश्वास कर, उस शत्रुपुरीमें जाना क्या महाराजके लिये उचित है? यदि आवश्यकता पड़े तो उस अपरिसीम सेनाके बीचमेंसे हम

लोग कैसे महाराजका उद्धार कर सकते हैं ?" शेषाजीकी बात समाप्त होने पर माता जीजाबाईने शिवाजीसे कहा,—"पुत्र तुमने इस सम्बन्धमें क्या स्थिर किया है, जरा यह तो बताओ ?"

माताकी बात सुन कर शिवाजी बोले,—"माता और प्रियबन्धुगण, आप लोगोंने जो कुछ कहा है, वह सर्वथा सत्य है। परन्तु मैं इसीलिये अब तक नीरव था कि इस सम्बन्धमें माताका क्या आदेश है ? मैंने जो औरंगजेबसे भेंट करनेकी इच्छा की है, इसके कई एक कारण हैं। प्रथम तो औरंगजेब बुद्धिमान् और धर्मानुरागी है। मैं उसको यह समझानेकी चेष्टा करूंगा कि हिन्दू लोग अज्ञात समयसे अपने धर्मका पालन कर रहे हैं, उनपर अत्याचार करना धर्मसंगत कार्य नहीं है। यह सत्य है कि इस समय मुसलमान धर्मका समस्त देशमें प्रचार हो रहा है —आगे भी हो सकता है, परन्तु उसके लिये हिन्दूगण अपना धर्म परित्याग करनेके लिये क्यों वाध्य किये जांय ? दूसरे सम्राट्के राजदरबारमें अनेक गुणी, ज्ञानी देश देशान्तरोंसे आकर एकत्रित होते हैं, उनसे भेंट कर अनेक तरहकी बातें ज्ञात हो सकेंगी—और यदि उनसे बन्धुता स्थापित हो सकी तो हमारे सम्बन्धमें जो यह अपवाद फैला हुआ है कि हम नरहन्ता हैं, डाकू हैं, लुटेरे हैं, और हैं—विश्वासघातक, सो दूर हो सकेगा। इससे मुगलों की भी यह घृणित धारणा दूर हो सकती है। तीसरा कारण यह है कि उत्तर भारतके काशी, वृन्दावन आदि हिन्दुओंके पुण्य तीर्थोंके परिदर्शनकी भी मेरी बहुत दिनसे इच्छा है; वह भी पूर्ण हो जायगी। औरंगजेब धूर्त और कपटी है, किन्तु मुझे बन्दी करनेका साहस वह एकाएक न कर सकेगा। कारण कि स्वयं राजा जयसिंहने मेरी आत्म-रक्षाकी प्रतिज्ञा की है। औरंगजेब यदि सत्यका पालन नहीं करेगा, तो राजा जयसिंह मराठोंके साथ मिल जांयगे, जिससे

दिल्लीका राजसिंहासन विचलित हुए बिना न रहेगा। इसके अतिरिक्त फिर यदि मेरे जीवन-दान देनेसे ही देशोद्धार हो सके—तो इस जीवनका मुझे मोह ही क्या है? मां, तुमने तो बाल्यकालमें ही मुझे यह शिक्षा दी थी कि एक ब्राह्मणकी रक्षाके लिये कुन्तीदेवीने अपने पुत्रोंको राक्षसके कवलमें भेजनेसे सङ्कोच नहीं किया था। किन्तु आज देश और धर्मकी रक्षाके लिये औरंगजेबके पास भेजनेमें सङ्कोच करती हो? भवानीमें यदि मेरी सच्ची श्रद्धा है, तो मैं अवश्य उनकी कृपासे वहांसे निरापद लौटकर तुम्हारी चरण-वन्दना करूंगा।"

शिवाजीकी बात सुन कर जीजाबाई बोली,—"जाओ प्राणाधिक, जाओ और अपने कार्यमें सफलता प्राप्त कर लौटो! बेटा जब तुम बालक थे, तब तुमको अपने वक्षका रक्त दान कर मनुष्य बनाया था। मनुष्यत्वके पथ पर चलानेके लिये स्वयं धर्म-पथ पर चलते हुए तुमको प्राचीन शास्त्रोंमें कथित महापुरुषोंकी कथायें सुनाई थीं। स्वदेश-सेवामें तुम आत्मसमर्पण कर सको, इसीलिये स्वयं मैंने संयम स्वार्थत्याग और वैराग्यके पथ पर चल कर तुमको शिक्षा दी थी। इस समय यदि स्वदेश और स्वधर्मका रक्षा करते समय तुम्हारा जीवन विपद्में पड़े, तो अपनेको सौभाग्यवती समझूंगी। बेटा, तुम औरंगजेबको समझा कर यदि हिन्दुओं पर होते हुए प्रतिदिनके अत्याचारको बन्द करा सको, तो तुमको समस्त हिन्दू जाति आशिर्वाद देगी।" शिवाजी बोले,—"मां, मैं सांसारिक सुख-भोगके लिये तुमको कभी कष्ट नहीं दे सकता। मैं राज-सम्पदको तुम्हारे आशिर्वादसे अधिक मूल्यवान् नहीं समझता।" उत्तरमें जीजाबाई बोलीं,—"वत्स, मै यह जानती हूं,—किन्तु देश और धर्म-रक्षाके लिये मैं इस दुःखको सानन्द सहन करूंगी। पुत्रके कार्यमें प्रयोजन होने पर जननी यदि सहायक न हो सके तो उसका जननी होना वृथा है।

तुम निर्भय और निश्चिन्त हो गमन करो। जब तक इस शरीरमें रक्त-स्रोत प्रवाहित होता रहेगा, तब तक तुम्हारी प्रजाका पुत्रवत् पालन करूंगी। जिसकी भगवान् और गुरुजनोंमें ऐसी भक्ति और विश्वास है—उसका कोई क्या बिगाड़ सकता है? जाओ बेटा, जाओ! और अपना कार्य सम्पन्न कर सानन्द लौट आओ।"*

माताका आशिर्वाद पाकर शिवाजीके मनकी दुश्चिन्ता और उद्विग्नता दूर हो गई। शिवाजीको ऐसा प्रतीत होने लगा, जैसे उन्होंने आत्म-रक्षाके लिये दुर्भेद्य कवच धारण कर लिया हो। एक आश्चर्य-जनक स्वर्गीय ज्योतिसे उनकी भविष्यत् सफलताका आलोक उनके हृदयको आलोकित करने लगा। स्वयं शिवाजी और उनके साथियोंने 'जय जननी जीजाबाईकी' ध्वनि कर आकाशको गुञ्जा दिया तथा माता जीजाबाईकी चरण-धूलि मस्तकों पर लगा कर परामर्श-सभा भंग की। इस स्वर्गीय दृश्यको देख कर जीजाबाई भी अपने आनन्दाश्रुओंको न रोक सकीं।

Throughout his (Shivaji's) life she was the guiding genius and protecting deity whose approbation rewarded all toil and filled him with a courage which nothing could daunt. The religious turn of mind and the strong faith in his mission, so prominent in his character, Shivaji owed entirely to his mother, who literally fed him on the old Puranic legennds of bravery and war + + Shivaji left his kingdom in her charge when he went to Delai (Agra) and in all great crises of his life he first invoked her blessings, and she always charged him to attempt the most hazardous feats trusting in Divine protection. If ever great men owed their greatness to the inspiration of their mothers, the influence of Jijibai was a factor of prime importance in the making of Shivaji's career and the chief source of his strength.

(Ranade's rise of maratha power.)

कुछ इतिहासकारोंका कहना है कि आगरा जानेसे पहले शिवाजीने कुछ ज्योतिषियोंसे भी यात्राके सम्बन्धमें पूछा था। उन लोगोंने एकमत होकर कहा था कि शिवाजी आगरासे निरापद लौट आवेंगे।

त्रयोदश-परिच्छेद ।

आगरा-यात्रा और कैद ।

शिवाजी आगरा-यात्राकी तैयारी करने लगे। सर्वप्रथम उन्होंने अपने अधिकृत प्रदेश एवं दुर्गोंका प्रबन्ध किया, जिससे उनकी अनुपस्थितिमें कोई गड़बड़ न हो। सब दुर्गाधिपतियोंको शिवाजीने समझाया कि वे अपने दुर्गोंकी रक्षाके लिये जैसी आवश्यकता हो व्यवस्था करें। इसके अतिरिक्त शिवाजीने अपनी माता जीजाबाई और द्वितीय पुत्र राजारामको प्रतिनिधि रूपसे रखा। मोरोपन्थ, नीलोजी, सोनदेव आदिको अलग अलग प्रान्तोंका कार्यभार दिया। तात्पर्य यह है कि शिवाजीने आगराकी यात्रासे पहले ऐसा अच्छा राज्य-प्रबन्ध कर दिया कि जिससे यदि कदाचित् वे वहां बन्दी हो जांय या मारे जांय, तो एकाएक राज्य पर कोई विपत्ति न पड़े। इसके बाद सन् १६६६ मार्चके तीसरे सप्ताहमें पुत्र सम्भाजी, सात और प्रधान कर्मचारियों एवं चार हजार सैनिकोंके साथ आगराकी ओर प्रस्थान किया। मार्गव्ययके लिये मुगलोंके राजकोषसे राजा जयसिंहने एक लाख रुपया शिवाजीकी भेंट किया। साथ ही अपना हाजीबेग नामका पथ-प्रदर्शक कर्मचारी साथ भेजा। शिवाजीको मार्गमें ही सम्राट् औरंगजेबका एक पत्र मिला—जिसका आशय यह था कि मैं यह सुन कर प्रसन्न हुआ हूं कि आपने आगराके लिये प्रस्थान कर दिया है। आप सानन्द आइये। मैं आपका यथायोग्य सम्मान करूंगा और खिल्लत देकर शीघ्र ही महाराष्ट्रके लिये विदा

कर दूंगा। बुद्धिमान् शिवाजी, औरंगजेबके छल-कपटको बहुत कुछ समझते थे, परन्तु राजा जयसिंहकी प्रतिज्ञाके कारण उन्हें किसी प्रकारका सन्देह नहीं हुआ। शिवाजीका मार्गमें भी मुगलोंके राज-कर्मचारियों द्वारा स्वागत-सम्मान होता जाता था। इसी प्रकारसे चलते चलते शिवाजी आगरा जा पहुंचे। सम्राट् औरंगजेब भी शाहजहांकी मृत्युके बाद अपनी ५० वीं वर्षगांठ मनानेके लिये आगरा आया हुआ था।

जिस समय शिवाजी आगरा पहुंचे, सम्राट्की ५० वीं वर्ष-गांठके कारण सब तरहसे सजाया गया था। बड़ी बड़ी अट्टालिकायें, बन्दनवारों और फूलोंसे सजाई गई थीं। जगह जगह बाजे बज रहे थे। इस ठाठ बाठसे ऐसा प्रतीत होता था—जैसे प्रकृति स्वयं महा-राष्ट्र केसरी, हिन्दूसूर्य, वीरवर शिवाजीका स्वागत कर रही हो। समस्त आगरा नगरमें शिवाजीके सम्बन्धमें अनेक प्रकारकी बातें फैल रही थीं। इसके अतिरिक्त जिस वीरवरने दश हजार सैनिकों के सामने नीतिकुशल अफजलखांको मार डाला था, सैनिकोंसे घेरे हुए राजभवनमें पहुंच कर, जिसने सायस्ताखांकी उंगली काट उसे अपमानित किया था, हिन्दू-जातिकी गौरवपताका फिरसे फह-रानेके लिये—जिसने दक्षिणमें शङ्ख फूँक रखा था, वह आगरामें आ रहा है—उसके दर्शन करनेकी लालसा सभी आगरावासी नर-नारियोंको लगी हुई थी। इसके अतिरिक्त शिवाजीके सम्बन्धमें यह बात फैली हुई थी—कि वे पक्षीकी तरहसे उड़ सकते हैं, चालीस पचास हाथ कूद कर शत्रुको मार सकते हैं। शत्रुके मनके भावोंको जान सकते हैं। ऐसे विचित्र मनुष्यको आगराके हिन्दू-मुसलमान नर-नारी देखनेके लियेझुण्डके झुण्ड मकानों और सड़कों पर खड़े थे। प्रातःकाल शिवाजीने उठ कर स्नान और सन्ध्यासे निवृत्त

होकर भगवान्, भवानी, माता और गुरुदेवका ध्यान किया और इसके बाद सुसज्जित होकर—राजा जयसिंहके पुत्र रामसिंहके साथ सदल बलराज-भवनकी ओर चले। आगराके नर-नारी शिवाजीको देख कर तरह तरहकी समालोचना करने लगे। शिवाजी भी अपने दल बलके साथ चलते हुए दुर्ग-द्वार पर पहुंचे। दुर्ग-द्वार पर शिवाजीका एक साधारण मुगल राज-कर्मचारीने स्वागत किया।

आज आगरा-दुर्गके दीवाने-आममें दरबारका आयोजन किया गया था। समस्त दरबार सजा हुआ था। सामने जगद्विख्यात ताजमहलका अत्युच्च गुम्बज सूर्यालोकसे प्रतिविम्बित होकर रजत-गिरीकी तरहसे शोभायमान हो रहा था। ताजके नयन मुग्ध कर उद्यानसे पुष्पोंकी मन्द मन्द सुगन्ध आ रही थी। दरबारकी उच्च-निर्मित वेदीके ऊपर मयूरसिंहासन पर सम्राट् औरङ्गजेब नाना रत्ना-लङ्कारोंसे सज्जित होकर बैठा था। आस पास और सामने गलीचों पर अनेक राज-कर्मचारी अपने पदोंके अनुसार बैठे हुए थे। सम्राट्के अङ्ग-रक्षक नपूंसक-प्रहरी नंगी तलवारें लेकर इधर उधर टहल रहे थे। अनेक देश-देशान्तरोंके वणिक्, फकीर एवं गुणी लोग दरबारमें उपस्थित थे। इनके अतिरिक्त कुछ अभियुक्त भी अन्तिम पंक्तिमें स्वभाग्य-निर्णयकी आज्ञा सुननेके लिये श्रेणीबद्ध होकर खड़े थे।

सम्राट्ने आज अपने ५० वें जन्म दिनके उपलक्षमें स्वर्णका तुलादान किया था—जो फ़कीरोंको बांटा जा रहा था। अनेक भिक्षुक द्वार-देश पर खड़े होकर स्वर्ण-भिक्षा मांग रहे थे। इसी समय धीर पदाक्षेप करते हुए वीरवर शिवाजीने दरबारमें प्रवेश किया। वीरवर शिवाजी मुगल-सम्राट्के अपरिमेय ऐश्वर्यको देख कर विस्मित हुए—और हिन्दुओंके लुप्त-गौरव एवं वर्तमान हीनताको स्मरण कर दुःखी हुए। अतीत भारतका छायाचित्र उनकी आंखोंके

सामने नाचने लगा। औरङ्गजेबको मयूर सिंहासन पर बैठे देख कर वीरवर शिवाजीके मनमें भारतके एकछत्र सम्राट् अशोककी स्मृति उदित हुई। शिवाजी मन ही मन सोचने लगे कि सम्राट् अशोककी राजसभामें कितने म्लेच्छ उनकी कृपा-दृष्टि आकर्षित करनेके लिये मस्तक झुका कर बैठे रहते थे। इसके बाद सोचने लगे कि जिस हिन्दू जातिने जगद्विजयी शिकन्दर तककी गतिको अवरुद्ध कर दिया था, वह हिन्दू जाति आज कहां है? उस जातिके अर्जित अर्थ द्वारा आज मुगल सम्राट्-शक्तिशाली है, उनहीके वन्शधरोंसे सहायता लेकर दिल्लीश्वर भारतमें अजेय होनेकी कल्पना कर रहा है। इसी प्रकारसे हिन्दुओंके लुप्त-गौरव और मुगलोंके वर्तमान वैभवको देखते हुए शिवाजी सम्राट्-औरङ्गजेबके तख्ते-ताऊसके पास जा पहुंचे। शिवाजीने सम्राट्का अभिवादन किया—और एक साधारण आसन पर उनको बैठाया गया। सायस्ताखांका अपमान और अफजलखांकी हत्या करने वाले शिवाजीको मुगल-राजदरबारमें आये देख कर मुसल्मान-राज कर्मचारीदांत पीस रहे थे और घृणापूर्वक भाव-भङ्गि प्रकट करते थे। इस समय शिवाजीने औरङ्गजेबके सामने शिर झुकाया या नहीं इस सम्बन्धमें इतिहासकारोंके अलग अलग मत हैं। मुसलमान-इतिहासकारोंने तो लिखा है कि शिवाजीने तीन बार मस्तक झुका कर प्रचलित मर्यादाका पालन किया था। दूसरे इतिहासकारोंकी राय दूसरी है। उनमेंसे कई एकका कहना है कि सम्राट्-औरङ्गजेबने शिवाजीके दरबारमें प्रवेश करनेके लिये इतना छोटा दरवाजा तैय्यार कराया था, जिससे उन्हें झुक कर भीतर घुसना पड़े। परन्तु शिवाजी जब उस द्वारके सम्मुख हुए तो उन्होंने अपना शिर और भी अकड़ा लिया और छातीको फुला कर भीतर घुसे। कुछ भी हो सम्राट्-औरंगजेबकी यह इच्छा थी कि शिवाजी मेरे सामने शिर झुकावें

शिवाजीका औरङ्गजेबके दरबारमें प्रवेश।

और शिवाजी इस बातको संवरण नहीं करते थे। अस्तु—शिवाजी इन सब बातोंको लक्ष्य कर अटल भाव और अविकृत चित्तसे अपने कार्य-साधनकी चिन्तामें लगे हुए थे।

इसी समय एक कर्मचारीने सम्राट्को सूचना दी कि शिवाजी सामने उपस्थित हैं। उत्तरमें औरङ्गजेब—'आइये राजा शिवाजी' कह कर कि अपने कार्यमें लग गया। इसी समय कुमार रामसिंहने शिवाजी प्रदत्त १५ सौ मोहरें और ६ हजार रुपये भेंट स्वरूप सम्राट् औरङ्गजेबके सम्मुख रखे। इसी समय शिवाजीने जब ध्यानपूर्वक देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि उनको तृतीय श्रेणीके कर्मचारियोंके साथ बैठाया गया है। शिवाजी इस व्यवहारको देख कर बड़े क्षुब्ध हुए। जिस समयसे उन्होंने आगराकी यात्रा की थी उसी समयसे उनका मन अशान्तसा हो रहा था। राजदरबारमें उपस्थित होनेपर द्वार पर एक साधारण कर्मचारीने उनका स्वागत किया था। सम्राट्का अभिवादन करने पर भी सम्राट्की ओरसे कोई आदर-सूचक वस्तु नहीं दी गई थी और साधारण कर्मचारियोंके आसन पर बैठा कर उनका अपमान किया गया। शिवाजीने क्षुब्ध होकर कुमार रामसिंहसे पूछा तो उन्हें पता लगा कि उनको ५ हजारी मनसबदारों-की श्रेणीमें बैठाया गया है! वीरवर शिवाजी इस बातको सुन कर क्रोधसे लाल हो उठे। उन्होंने पूछा कि जो आसन मेरे पुत्र तथा कर्मचारी तानाजीको दिया गया है, वही मेरे लिये भी क्यों उपयुक्त समझा गया? मैंने सम्राट्को दक्षिणमें कितनी सहायता दी है और फिर स्वयं मुझे भेंट करनेको यहां बुला कर इस प्रकारसे अपमानित किया जा रहा है! इस प्रकार दुःखित होकर शिवाजीने पूछा कि तुम कौन हो? उत्तरमें रामसिंहने अकड़ कर कहा—"शिशोदीय वंशोद्भव रामसिंह!" रामसिंहकी बातसे और भी क्रुद्ध हो शिवाजी

बोले,—"जिन लोगोंने भयभीत होकर एक विधर्मी-सम्राट्के हाथ अपने सर्वस्वको बेच दिया है, क्या मैं उनही लोगोंकी पंक्तिमें बैठाया गया हूं ?"

इसी व्यापारको लेकर शिवाजी रामसिंहके साथ उच्च स्वरमें तर्क वितर्क करने लगे। आत्म-सम्मान ज्ञानसे कुपित हो—शिवाजी असहिष्णुसे हो गये—और इस अपमानको सहन करनेके बदलेमें आत्म-हत्या करनेकी चेष्टा करने लगे। रामसिंह—शिवाजीकी उग्र मूर्तिको देख कर—उन्हें तरह तरहसे समझाने लगा, परन्तु सब व्यर्थ हुआ। अन्तमें क्रोध और अपमानसे अधीर हो शिवाजी मूर्छित हो गिर पड़े! इस गोलमालकी ओर जब औरङ्गजेबकी दृष्टि आकर्षित हुई तो—उसने पूछा क्या बात है ? उत्तरमें रामसिंहने कहा,—"आप शेरको कैद कर लाये हैं। सुतरां यहांका उत्ताप न सहन कर मूर्छित हो गया है।" इसके बाद बोला,—"शिवाजी दाक्षिणात्य हैं—और राज-दरबारके नियमोंसे अनभिज्ञ होनेके कारण क्षमा करने योग्य हैं।" औरङ्गजेबने इसी समय शिवाजीको उठवा कर एक पासके शुश्रूषा-भवनमें भेज दिया और कहला दिया कि आज दरबारमें और आनेकी आवश्यकता नहीं है।

जिस समय शिवाजीको दरबारसे ले जाया जा रहा था, उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि सम्राट्ने अपनी प्रतिज्ञाका पालन नहीं किया। औरङ्गजेबने जब यह बात सुनी तो वह शिवाजी पर और भी क्रुद्ध एवं विरक्त हुआ। इसके बाद औरङ्गजेबने शिवाजीको राजा जय-सिंहके मकानमें रखनेकी आज्ञा दी और उनके खान पान आदिके प्रबन्धका भार रामसिंहको ही सौंपा। उस दिनके बाद शिवाजी तो फिर दरबारमें गये नहीं, हां उनके पुत्र सम्भाजी बीच बीचमें जाते रहे। इसी प्रकारसे कई दिन व्यतीत हो गये। शिवाजीने समझा

कि हमारी सब आशायें धूलमें मिल गईं—और मैं स्वयं आकर मुगलोंके हाथमें बन्दी हो गया ! इस अवस्थासे मुक्त होनेके लिये अन्तमें शिवाजीने अपने कर्मचारियोंसे परामर्श किया। सुतरां अपने साथियोंके परामर्शके अनुसार शिवाजीने सम्राट्-औरंगजेबको कहला भेजा कि यदि मुझे महाराष्ट्र लौट जानेकी अनुमति मिले, तो मैं—गोलकुण्डा और बीजापुर पर आक्रमण करते समय सम्राट्को सहायता दूंगा—यह वचन देता हूं। उत्तरमें औरंगजेबने कहला भेजा कि थोड़ी प्रतीक्षा कीजिये—शीघ्र ही आपको महाराष्ट्र लौट जानेकी आज्ञा दी जायगी। शिवाजी भी औरंगजेबके अभिप्रायको समझ गये। इसके बाद उन्होंने सम्राट्से भेंट करनेकी प्रार्थना की, किन्तु मन्त्री जफरखांके निषेध करनेके कारण सम्राट्ने भेंट करनेसे इन्कार कर दिया। इस प्रकारसे विह्वल होकर शिवाजीने मन्त्री जफरखांसे भेंट की और कहा,—"आप मुझे उपयुक्त धन और सेना देकर दक्षिणकी ओर मुगल साम्राज्य-विस्तार करनेके लिये भेजिये, मैं भरसक चेष्टा करूंगा।" जफरखांकी पत्नीने इसी बीचमें किसी भृत्य द्वारा कहला भेजा कि शिवाजीसे अधिक समय तक वार्तालाप करना विपद्जनक है। जफरखां भी भयभीत था ही—पत्नीका सन्देश मिलनेपर उसने कहा,—"अच्छी बात है आप जो कहते हैं—उसके करनेकी चेष्टा की जायगी।" इस प्रकारसे कहकर जफरखांने शिवाजीको विदा कर दिया। शिवाजी भी समझ गये कि वह कुछ चेष्टा-वेष्टा नहीं करेगा। इस प्रकारसे चारों ओरसे विफलमनोरथ होकर शिवाजी सोचने लगे कि किस प्रकारसे इन लोगोंकी कैदसे मुक्त होकर पुनः स्वाधीनता प्राप्त की जाय ? इसी समय नगरके कोतवाल फौलादखांने सम्राट्की आज्ञासे शिवाजीके घरको अपनी सेनासे घेर लिया। शिवाजी भी समझ गये कि अब मैं नियमा-

नुसार कैद कर लिया गया हूं। वे बार बार सोचने लगे कि अब स्वाधीनता कैसे प्राप्त की जाय ? परन्तु इस समय कोई भी उपाय नहीं सूझता था। इसी प्रकारसे कई दिन व्यतीत हो गये। बीच बीचमें शिवाजी, पुत्र सम्भाजीको छातीसे लगा कर कई बार निराशा और दुःखसे अवसन्न हो रो देते। इसी प्रकारसे तीन मास व्यतीत हो गये। इसी बीचमें शिवाजीने व्याकुल-क्रन्दन और कातर-प्रार्थना द्वारा भगवत् शक्ति प्राप्त की और उसके द्वारा अपने प्रत्युत्पन्नमतित्वका ऐसा दृष्टान्त उपस्थित किया, जिसका उदाहरण इतिहासमें मिलना कठिन है।

इसी प्रकारसे कई मास व्यतीत हो गये। शिवाजीने पास रहने वाले राज-कर्मचारियोंको अपने सद्व्यवहारसे अपना अनुरक्त बना लिया और उन द्वारा कैदसे मुक्त होनेका उपाय करने लगे। परन्तु अन्तमें विफल ही हुए। इसके बाद शिवाजीने सम्राट्को कहला भेजा कि मेरे साथी मराठा-कर्मचारी लगातार बहुत दिन यहां रहनेसे बीमार हो गये हैं—उन्हें लौट जानेकी अनुमति दी जाय। सम्राट्ने भी सोचा कि असली आदमी शिवाजी तो कैद है ही—फिर इतने शत्रुओंको यहां रखनेसे क्या लाभ ? सुतरां—सम्राट्ने सब लोगोंको दक्षिण लौट जानेकी अनुमति दे दी। सब लोग रो-रोकर शिवाजी से बिदा हुए। सब लोगोंको बिदा करते समय कहा, कि मैं अकेला तो किसी प्रकारसे भाग भी निकलूंगा, इतने आदमियोंको संग लेकर भागना कठिन है। इस बातसे कुछ धैर्य धारण कर शिवाजीके बहुत से कर्मचारी बिदा हुए।

इसी प्रकारसे मुगलोंकी कैदमें रहते रहते बहुत दिन व्यतीत हो गये। एक दिन शिवाजी भवानीका ध्यान कर कैदसे मुक्त होनेका उपाय सोचते सोचते अचेत होकर गिर पड़े। उन्होंने अचेतनावस्थामें

देखा कि भवानी साक्षात् खड़ी हैं और कह रहीं हैं कि,—"बेटा तुम कैदसे मुक्त होनेकी इतनी चिन्ता मत करो। तुमने जिस कामको हाथमें लिया है, वह बहुत महत्वपूर्ण है। देवता सदा तुम्हारी रक्षा करते हैं—और भविष्यमें तुम्हारा मङ्गल ही करेंगे और तुम निरापद् फिर स्वदेश पहुंच जाओगे।" सचेत होने पर उन्होंने मन ही मनमें भवानीको प्रणाम किया—और उनके मनकी दुश्चिन्ता और उद्वेगका भाव तिरोहित होगया। निराश-हृदयमें आशाका संचार हुआ। समस्त संसारके साहस, शक्ति और बुद्धिने आकर उनके अवसन्न हृदय पर अधिकार कर लिया। उसी स्फूर्ति, आशा और आनन्दकी लहरमें अपनी मुक्तिका उपाय सोच निकाला। शिवाजी अपने पास रहने वाले मुगल-कर्मचारियोंको सदा सन्तुष्ट रखते थे, यह पहलेही कहा जा चुका है। सुतरां शिवाजीने धीरे धीरे सब लोगोंको अपनी ओर आकर्षित कर लिया। सब लोग शिवाजी पर श्रद्धा करने लगे। किसीको भी उनके भागने या और किसी प्रकारका गोलमाल करनेकी सम्भावना न रही।

इधर राजा जयसिंहने शिवाजीको सम्राट् औरङ्गजेबके पास भेज तो दिया था, परन्तु इससे उनके मनको शान्ति नहीं मिली। क्योंकि वह जानता था कि औरङ्गजेब महा-कपटी और कूटनीति-परायण है। औरंगजेब शिवाजीको कहीं बन्दी न कर ले या मार ही न डाले, इस भयसे राजा जयसिंह अपने पुत्र रामसिंहके पास पत्र भेजकर सम्वाद मंगाता रहता था। राजा जयसिंहको जब शिवाजीके कैद होनेका सम्वाद मिला तो राजा जयसिंह पुत्र रामसिंहको लिख भेजा कि वह सम्राट्के इस कार्यका प्रतिवाद करे, क्योंकि मैं और तुम शिवाजीके निरापद लौट आनेके लिये प्रतिज्ञावद्ध हो चुके हैं। सम्राट्-औरंगजेब को भी एक पत्र भेजकर राजा जयसिंहने लिखा कि,—"मैंने जब देखा

कि दाक्षिणात्योंकी शक्ति हमारा विरोध करनेके लिये सम्मलित हो रही है—और ऐसी दशामें हमारा राज्य-विस्तारका कार्य सुचारु रूपसे सम्पन्न नहीं हो सकेगा, तो मैंने शिवाजीको कौशल कर बड़ी कठिनता से आपके पास भेजा। उनके स्वदेश लौटने और निरापद रहनेकी मैं उनसे प्रतिज्ञा कर चुका हूं। इसलिये कमसे कम मेरे सम्मानकी रक्षा के लियेही सही-उनको न तो कभीमार डालनेकी कलपना कीजिये और न अधिक दिन तक बन्दी ही रखिये। जाते समय शिवाजी अपने राज्य की ऐसी सुव्यवस्था कर गये हैं कि यदि वे न भी लौटकर आ सकें, तब भी उनके राज्यको कोई क्षति नहीं पहुंच सकती। यदि मराठोंको यह बात मालूम हो गई कि आपने शिवाजीको बन्दी कर लिया है, तो वे लोग बीजापुरके साथ मिलकर हमारे नाकमें दम कर देंगे, जिससे हम फिर दक्षिणमें एक दिन भी नहीं ठहर सकेंगे और यदि आप शिवाजी को भद्रताके साथ मुक्त कर देंगे, इससे एक तो मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण हो जायगी, दूसरे सदाके लिये मराठा लोग हमारे साथ बन्धुताके सूत्रमें आबद्ध हो जायंगे। इससे दक्षिणमें मुगल-साम्राज्य विस्तार करनेमें आशातीत सफलता प्राप्त होगी।"

यद्यपि राजा जयसिंह सम्राट्-औरंगजेबका एक प्रधान सेनापति और परामर्श दाता था, तथापि उसने राजा जयसिंहकी सम्मतिको नहीं माना और शिवाजीको कैदमें ही रखनेका विचार स्थिर रखा। औरङ्गजेब चाहता था कि दक्षिणमें पूर्ण रूपसे सफलता प्राप्त हो जाने पर ही शिवाजीको मुक्त किया जायगा। इसलिये रामसिंह पर शिवाजी की रक्षाका भार न्यस्त कर औरंगजेब निश्चिन्त हो गया था। किन्तु कुछ दिनोंके बाद उसे भ्रम हुआ और उसने सोचा कि हिन्दूको भार देना उचित नहीं है। क्या जाने वह जातीयताके जोशमें आकर कब क्या कर डाले। इसलिये औरंगजेबने शिवाजीको अफगानिस्तानकी

और भेजनेका संकल्प किया, किन्तु स्वयं ही औरंगजेबने न जाने क्यों उस सांकल्पका परित्याग कर दिया । इस बीचमें राजा जयसिंहने फिर एक पत्र सम्राट्को लिखकर चेतावनी दी कि यदि इस समय शिवाजीको मुक्त नहीं किया जायगा, तो दक्षिणकी अवस्था हमारे प्रतिकूल हो जायगी । परन्तु औरंगजेबने इस बार भी कुछ परवा नहीं की । हां, इस बीचमें शिवाजीके पुत्र सम्भाजीको दरबारमें बुलाकर कुशल-समाचार पूछता रहता था—जिससे महाराष्ट्रोंकी अधीरता न बढ़ जाय । उधर राजा जयसिंह चाहता था कि शिवाजी कैदसे मुक्त हो जांय—और मैं अपना काम समाप्त कर देशको लौट जाऊं । परन्तु उसकी आशा फलवती नहीं हुई और इधर शिवाजीकी मुक्तिकी आशा भी दिन पर दिन क्षीण होने लगी ।

चतुर्दश-परिच्छेद ।

मुक्ति-लाभ और स्वदेश-प्रत्यागमन ।

—०:※:०—

पहले ही कहा जा चुका है कि अपने सद्व्यवहारसे शिवाजी सम्राट्के उन कर्मचारियोंको जो उनके मकानका पहरा देते थे, आप्यायित कर चुके थे । उन लोगोंके मनमें शिवाजीके भाग जाने या और किसी प्रकारका गोलमाल करनेकी कल्पनाही नहीं होती थी । हठात एक दिन समस्त नगरमें यह अफवाह फैली कि शिवाजी बीमार हैं । राज्यकी ओरसे उनको देखनेके लिये अनेक वैद्य और हकीम आने लगे और उधर अपने धर्म-विश्वासके अनुसार शिवाजी दान पुण्य करने लगे । प्रतिदिन बड़े बड़े टोकरे भर भर कर मिठाईके साधु, ब्राह्मणों, दरिद्रों, फकीरों और मन्दिरों तथा मस्जिदोंमें जाने लगे । कुछ मिठाईके टोकरे शिवाजी मुगल-राज मन्त्रियोंको भी भेजते और वे लोग भी परिवर्तनमें उसी प्रकारसे शिष्टाचारकी रक्षा करते । पहले पहल तो प्रहरीगण उन टोकरोंकी तलाशी लेकर देखते रहे कि इनमें कहीं कोई आदमी तो बैठकर वाहर नहीं निकल जाता, परन्तु उनको जब यह विश्वास हो गया कि उनकी यह कल्पना निराधार है, तो उन्होंने उन टोकरोंकी तलाशी लेनी बन्द कर दी और उन टोकरोंका आवागमन निरन्तर वेरोक-टोक जारी रहा । १३ अगस्तको शिवाजीने उन पहरे वालोंको कहला भेजा कि हमारी तबीयत आज अधिक खराब है—इसलिये भीतर आकर हमें कोई तंग न करे । पहरे वालोंको इस प्रकारसे आदेश देकर—शिवाजीने अपनेही रंग-रूपके वैमा-

त्रेय—भ्राता हीराजीको अपनी शय्या पर लिटा दिया। हीराजी अपाद-मस्तक कपड़ा ओढ़कर पड़ गये और अपना दाहिना हाथ, शिवाजीको अंगूठी पहन कर कपड़ेसे बाहर रक्खा—जिससे पहरेवालों को किसी प्रकारका सन्देह न हो। इधर शिवाजी अपने पुत्र सम्भाजी सहित एक एक टोकरेमें छिपकर बैठ गये। सन्ध्याका समय उपस्थित होते ही शिवाजीके भवनसे फिर मिठाईके टोकरे उठने लगे। इसी अवस्थामें शिवाजी और उनके पुत्र सम्भाजी भी दो टोकरोंमें मिठाई के और टोकरोंके साथ कैदसे बाहर हो गये। पहरेवालोंने उस दिन भी किसी टोकरेकी तलाशी नहीं ली। सुतरां शिवाजी और उनके पुत्र निर्दिष्ट समय पर यथास्थान आगरा नगरसे बाहर आ उपस्थित हुए। कुली लोगोंको उनकी मजूरी देकर विदा कर दिया और शिवाजीके उन दो तीन साथियोंने ज़ो मिठाईके टोकरोंके साथ जाया करते थे—और आज भी उपस्थित थे—शिवाजी और उनके पुत्र सम्भाजीको टोकरोंमेंसे निकाल लिया। धन्य साहस और बुद्धि चातुर्य! कूट-नीति परायण प्रखर बुद्धि औरंगजेबकी बुद्धि, महाराष्ट्र केशरी शिवाजी के निकट परास्त हो गई। औरंगजेबके मनसूबे मनहीमें रह गये। शिवाजी और उनके पुत्र सम्भाजी मिठाईके टोकरोंमेंसे निकल कर रातमें ही वहांसे चल पड़े। आगरासे कुछ मीलकी दूरी पर शिवाजीके न्याय विभागके एक प्रधान कर्मचारी निराजी ठहरे हुए थे। शिवाजी पुत्र सहित रातको वहीं जा पहुंचे। निराजी पहले ही से संकेतके अनुसार शिवाजीकी प्रतीक्षा कर रहे थे। निराजीके पास शिवाजीके पास शिवाजीके और बहुतसे साथी पहले ही पहुंच चुके थे। निराजी के परामर्शके अनुसार शिवाजीके कर्मचारी दो दलोंमें विभक्त किये गये। एक दलमें स्वयं शिवाजी, उनके पुत्र सम्भाजी और तीन अन्य कर्मचारी शामिल किये गये। शिवाजीने विभूति रमाकर साधु-वेश

धारण किया, जिससे उनको और उनके साथियोंको कोई पहचान न सके। इसके बाद शिवाजीने गहन वनोंमेंसे होकर मथुराकी ओर प्रस्थान किया। क्योंकि शिवाजीको यह आन्तरिक इच्छा थी कि इस यात्रामें तीर्थ-दर्शन अवश्य करूंगा। इसके बाद शिवाजीके कर्मचारियोंका दूसरा दल महाराष्ट्रकी ओर चल पड़ा।

इधर समस्त रात्रि भर हीराजी शिवाजीकी शय्या पर पड़े सोते रहे। प्रातःकाल उठ कर पहरे वालोंने देखा कि शिवाजी अपनी शय्या पर पड़े सो रहे हैं। पहरे वालोंको किसी प्रकारका संदेह नहीं हुआ। संदेहका कोई कारण भी नहीं था। क्योंकि हीराजी अपाद मस्तक कपड़ेसे ढांप कर सोये हुए थे। केवल शिवाजीकी अंगूठी जिस हाथमें थी वह नङ्गा था, जिससे पहरे वालोंको कोई संदेह न हो। शामको लगभग तीन बजे हीराजीने उठ कर पहरेवालोंको सावधान किया कि तुम लोग हल्ला-गुल्ला मत करो—शिवाजीकी तबीयत अधिक खराब है—और वे पड़े सो रहे हैं। थोड़ी देर तक तो पहरे वाले चुप-चाप रहे, परन्तु उनके मनमें संदेह होने लगा। अन्तमें पहरे वालोंने शिवाजीके भवनका द्वार खोल कर देखा—तो अवाक् रह गये। देखा कि शिवाजीकी शय्या शून्य पड़ी है और वहां कोई भी नहीं है! पहरे वालोंने तुरन्त इसकी सूचना नगर-कोतवाल फौलादखाँको दी। कोतवाल भी घबड़ाया हुआ सम्राट्के पास पहुंचा और अपनेको निर्दोष प्रमाणित करनेके लिये बोला,—"जहांपनाह, मैं तो प्रतिदिन स्वयं राजा शिवाजीको देखने वहां जाता था और उनको सही सलामत देख कर लौट आता था। शिवाजीके भवनके चारों ओर पांच सौ सिपाहियोंका सङ्गीन पहरा रहता है। आज जाकर जब मैंने देखा तो न मालूम वे कैसे अदृश्य हो गये! आकाश में चढ़ कर कहीं उड़ गये या कहीं पृथ्वीमें समा गये, मैं कुछ नहीं

कह सकता। शिवाजी जादूगर हैं—जादूसे वे कहीं अदृश्य हो गये, मेरा इसमें कुछ भी अपराध नहीं है।" कोतवाल इस प्रकारसे अपने को निरपराध बताकर चला गया, परन्तु औरङ्गजेबको विश्वास नहीं हुआ। उसने उसी समय समस्त राज्यमें शिवाजीके भागनेकी सूचना दी और साथ ही उन्हें पकड़नेकी आज्ञा दी। इसके अतिरिक्त शिवाजीको तलाश करनेके लिये अनेक अश्वारोही सैनिक जहां तहां भेजे गये।

इसके बाद आगरामें शिवाजीकी खोज होने लगी। परन्तु शिवाजी आगरामें थे ही कहां जो मिलते। सब लोगोंने राजा जयसिंहके पुत्र रामसिंहको अपराधी बताया और स्वयं सम्राट् औरङ्गजेबने भी यही अनुमान किया कि हो न हो शिवाजीको भगानेमें रामसिंहने सहायता दी है। अपनी सम्मान-रक्षाके लिये रामसिंह ही उनको भगानेमें सहायक हुआ है और भी इसका एक प्रमाण मिला। महाराष्ट्रके बहुतसे ब्राह्मण जो आगरामें रहते थे—मुगल-कर्मचारियोंने उन्हें पकड़ कर सम्राट्के सामने ला उपस्थित किया। उन ब्राह्मणोंने भी अपना पिण्ड छुड़ानेके लिये रामसिंहको ही दोषी बताया। जब इतने प्रमाण मिल गये, तब रामसिंहको दोषी क्यों न समझा जाय? सुतरां सम्राट् रामसिंहसे बहुत रुष्ट हुआ और उसकी वृत्ति बन्द कर दी तथा जिस पद पर वह अधिष्ठित था, वह भी छीन लिया गया। ११ मास तक रामसिंहको यह सजा भुगतनी पड़ी। पिताकी मृत्युके बाद रामसिंहको चार हजारी मनसबदारी देकर आसामके युद्धमें भेज दिया गया, जहां उसकी भी मृत्यु हो गई।

औरङ्गजेबका राज्य क्या था,—'टके सेर भाजी टके सेर खाजा' वाली उक्ति चरितार्थ होती थी। कोतवाल फौलादखां तो अपने सिपाहियों सहित निरपराध समझा गया, जिसके सङ्गीन पहरेमेंसे

शिवाजी भाग गये—और निरपराध रामसिंहको दण्ड भुगतना पड़ा, जिसका उनके भागनेमें जरा भी हाथ नहीं था और यह रामसिंह भी कौन था, जिसके पिताने अनेक छल-कपट करके अपनी वीरता और बाहू-बलसे मुगल-साम्राज्य विस्तार किया था! अनेक राजपूत वीरोंने मुगल-साम्राज्य-विस्तारके लिये अपने रक्तकी नदी प्रवाहित कर दी थी। उन्हीं राजपूतोंको विश्वासघाती समझ कर कपटी औरङ्गजेब दण्ड देता था, अन्तमें इसीके फलसे मुगल-राज्यका पतन हुआ।

इधर महाराष्ट्रमें शिवाजीकी अनुपस्थितिमें माता जीजाबाई बड़ी योग्यताके साथ प्रजाका शासन करती थीं। प्रतिदिन प्रातःकाल उठ कर स्नान-सन्ध्यादिसे निवृत्त हो—दरबारमें आतीं और धनी-दरिद्र सबके भाव-अभियोग सुनतीं—तथा उनकी यथोचित व्यवस्था करतीं। जीजाबाईने एक दिन किसानसे पूछा,—"कहो भाई, तुम्हारा राजा शिवाजी तो यहां है नहीं, तुमको कोई कष्ट तो नहीं होता ? कोई तुम पर अत्याचार तो नहीं करता। अन्नाभावसे तुमको किसी प्रकारका क्लेश तो नहीं हो रहा है?" जीजाबाईकी बात सुन हाथजोड़ कर वह बोला,—"ना मां, हम लोग बड़े आनन्दसे रहते हैं। साक्षात् भवानी रूपिणी माता जीजाबाई जब हमारी रक्षा कर रही हैं, तो हमारा अनिष्ठ कौन कर सकता है ?" माता जीजाबाई किसानका उत्तर सुन कर प्रसन्न हुईं। परन्तु उनकी प्रसन्नतामें इसी समय एक दूतने आकर विघ्न डाल दिया। दूतने आकर कहा,—"माताजी, राजाको तो औरङ्गजेबने आगरामें बन्दी कर लिया है !" दूतकी बात सुन कर राज-भवनमें सनसनी फैल गई। परन्तु जीजाबाई तनिक भी विचलित नहीं हुईं। उन्होंने सब लोगोंको समझाया और कहा कि जब तक तानाजी और शिवाजी आदि वीरगण उनके साथ हैं, तब तक उन्हें कोई नहीं मार सकता है। बन्दी हैं तो छुट जावेंगे।

उनको अधिक दिन तक बन्दी रखनेकी औरङ्गजेबमें, क्षमता नहीं है। इसके बाद जीजाबाईने पूछा कि आजकल गुरुदेव कहां हैं? उत्तरमें एक दूतने कहा कि,—"गुरुदेव तो अपने आश्रममें ही हैं, परन्तु उन्होंने अपने अनेक शिष्योंको साधु, संन्यासी, पाठक, पाण्डे आदि बना कर मथुरा, वृन्दावन एवं काशी और श्रीहरिहर क्षेत्र भेजा है—मालूम नहीं क्या उद्देश्य है।" दूतको बिदा कर जीजाबाईने पहले तो दरबारियोंको समझाया, इसके बाद पुत्र-बधुओंको समझा कर कहा कि, बेटा शिवाजी विदेशमें है, उसकी अनुपस्थितिमें हमको उसके राज्यकी हर तरहसे रक्षा करनी चाहिये। व्यर्थ शोक और चिन्तासे कोई लाभ नहीं। दूसरे शिवाजीकी स्वयं भवानी रक्षा करती हैं, उनका बाल भी बांका कोई नहीं कर सकता। हमारे पास यथेष्ट सैनिक हैं जो राज्यकी रक्षा कर सकते हैं। यदि न भी हों तो मैं स्वयं दुर्ग-द्वारकी रक्षा तलवार हाथमें लेकर करूंगी—और विश्वासघाती औरंगजेबको बता दूंगी कि महाराष्ट्रकी हिन्दू-नारीको शक्ति और साहस कितना है। आवश्यकता पड़नेपर मैं स्वयं मुगलोंकी गति रोधकर उनसे प्रतिशोध लूंगी। शिवाजी मेरे ही रक्त-सिञ्चनसे इतना बड़ा हुआ है।" माता जीजाबाईकी वीर वाणी सुन कर सब लोग आनन्दित हुए और उत्साहकी एक लहरसी फैल गई।

इधर शिवाजी महाराष्ट्रकी ओर न जाकर यथा समय मथुरा जाकर उपस्थित हुए। मथुरा पहुंच कर शिवाजीने पहले यमुनामें स्नान किया और देव-दर्शन कर वहांसे काशीके लिये प्रस्थान करनेकी तैयारी करने लगे। परन्तु शिशु-पुत्र सम्भाजी लगातार कई दिन चलनेसे थक गया था। सम्भाजीको अत्यन्त क्लान्त देख शिवाजीको बड़ी चिन्ता हुई। उसी समय शिवाजीको मालूम हुआ कि मथुरामें पेशवा वंशके वंशधर काशीजी, मोरो त्रयम्बक, कृष्णाजी, विशाजी

रहते हैं। शिवाजी इन लोगोंको पहलेसेही जानते थे ये लोग भी शिवाजीके वीरता पूर्ण कार्य-कलापोंको देख-सुनकर मनमें श्रद्धा रखते थे। शिवाजी पुत्र सम्भाजीको लेकर उनके पास पहुंचे और सब दुःख कहानी कह सुनाई। पेशवा वंशधरगण बड़े दुःखी हुए और अन्तमें उन्होंने बड़ी ही निर्भीकतापूर्वक शिवाजीके शिशु-पुत्र सम्भाजीको अपने पास रख लिया। यद्यपि वे जानते थे, कि यदि सम्राट् औरङ्गजेब को यह बात किसी प्रकारसे ज्ञात हो गई तो उनपर भयंकर विपद् आ सकत है, तथापि स्वदेश और स्वधर्मके नाम पर उस विपद्का सहर्ष आलिङ्गन करनेके लिये वे तैय्यार हो गये। इसके बाद शिवाजी उसी प्रकारसे साधु-रूप धारण कर काशीकी ओर चले। कृष्णाजी काशी तक उनके साथ गये। शिवाजीने समस्त शरीर पर विभूति रमा रखी थी, और सन्यासीका एक दण्ड लेकर मणि-मुक्ता और मोहरें उसमें भर रखी थीं। इसी प्रकारसे बहु-मूल्य रत्न और स्वर्ण मुद्रायें उन्होंने अपने साथियोंके कपड़ोंमें छिपा रखी थीं। कई दिन और रात वीरवर शिवाजी पैदल चलते रहे। उनके समस्त साथी भी वैरागी वेश धारण कर तीन दलोंमें विभक्त हो आगा-पीछा कर चलने लगे। रास्तेमें एक दिन अलिकुलीखां नामके फौजदारने--सन्देह कर शिवाजी को पकड़ कर बन्दी कर लिया। परन्तु रातको जब सब लोग सो गये, तब शिवाजीने अलिकुलीखांसे भेंट कर उसको सब आत्म-कहानी कह सुनाई और रिश्वतमें एकलाख रुपयेका एक हीरा देकर वहांसे विदा हुए। इसके बाद प्रयागमें पहुंच कर त्रिवेणी-संगम पर स्नान किया और वहांसे काशीके लिये चल पड़े। रातों-रात चल कर अगले दिन शिवाजीकी मण्डली काशी पहुंची। शिवाजी और उनके साथी जिस समय काशी पहुंचे, उस समय वहां शिवाजीके भागने—और पकड़ने की डौंडी पिट रही थी। काशी-स्नान—और विश्वनाथके दर्शनसे

शीघ्रतिशीघ्र निवृत्त होकर शिवाजीने काशीसे गयाके लिये प्रस्थान किया। गया पहुंच कर उन्हें और भी अपने तीन साथी मिल गये। गयामें शिवाजीने स्नान किया और पिंड-दान कर वहांसे श्रीहरिहर-क्षेत्रकी ओर प्रस्थान किया। शिवाजी राजा थे और आगरासे भाग कर श्रीहरिहर क्षेत्र पक रात-दिन पैदल चलते रहे। भगवान्‌ने उनको आश्चर्यजनक शारीरिक शक्ति और असाधारण सहिष्णुताके साथ गढ़ा था। श्रीहरिहर-क्षेत्रमें उन्होंने एक घोड़ा खरीदा। घोड़ेके सौदागरको जब उसकी कीमतके रूपमें आशातीत अधिक मूल्य मिला, तो उसे सन्देह हुआ। क्योंकि उस समय समस्त देशमें शिवाजीके भागनेका समाचार प्रचारित हो चुका था। परन्तु शिवाजीने उस सौदागरको कुछ अधिक रुपये देकर सन्तुष्ट कर दिया और उसी समय वहांसे प्रस्थान किया। रास्तेमें हैदराबाद और बीजापुर होते हुए शिवाजी सकुशल अपने देशमें लौट आये।

छद्मवेशी शिवाजी एक दिन जब चलते चलते गोदावरी-तटके पास एक गांवमें पहुंचे तो उनकी एक किसान बुढ़ियासे भेंट हो गई। बुढ़िया बहुतसे सन्यासियोंको आया देख बहुत प्रसन्न हुई और उसने उन सब लोगोंको उस रात्रिको अपने घर पर ठहरा कर उनका यथोचित सत्कार किया। इसके बाद आंखोंसे अश्रुपात करती हुई बोली कि कुछ दिन हुए शिवाजीके एक दलने आकर उसके घरको लूट लिया है। इससे वह यथोचित आतिथ्य सत्कार नहीं कर सकी। शिवाजीने भी प्रकाश्य रूपसे उन लोगोंको भला बुरा कहा और मनही मन अपनेको धिक्कारा कि लोग उनका नाम लेकर कैसा अत्याचार करते हैं। इसके बाद शिवाजीने राजधानीमें पहुंच उस किसान बुढ़ियाको यथेष्ट अर्थदान कर सन्तुष्ट किया था। अस्तु—शिवाजी वहाँसे चलकर रायगढ़-दुर्गमें पहुंचे। वहां पहुंच कर उन्होंने राज–

मातासे भेंट करनेकी अनुमति मांगी। जीजाबाईने उन्हें राजभवनमें आनेकी अनुमति दे दी। सन्यासी वेशमें शिवाजी जब राजभवनमें पहुंचे तो माता जीजाबाईने उनको सन्यासी समझ कर प्रणाम किया। और शिवाजीने भी कौतुकवश आशीर्वाद दे दिया। परन्तु थोड़ीसी दूर आगे बढ़कर शिवाजीने जब अपना मस्तक जीजाबाईके चरणों पर रख दिया, तो संन्यासीके इस आचरणको देखकर जीजाबाई बहुत खिन्न हुईं। परन्तु उसी समय शिवाजीने कपड़ोंमेंसे निकाल कर जब शिर-स्त्राण माताके सामने रखा तो माता जीजाबाईने शिवाजीको पहचान लिया और गोदमें लेकर उनके मस्तकका चुम्बन किया।

शिवाजीके आगमनका सम्वाद वन-अग्निकी तरहसे समस्त महाराष्ट्रमें प्रचरित हो गया। घर घरमें आनन्दोत्सवका आयोजन होने लगा। महाराष्ट्र-कुल-तिलक महाराज शिवाजी, मुगल-सम्राट्के समस्त बुद्धिका बल परास्त कर स्वदेश लौट आये हैं। महाराष्ट्रवासी शिवाजी पर विश्वास रखते थे। वे समझते थे कि शिवाजीके जीवित रहते उनपर कोई अत्याचार नहीं कर सकता। वे स्वच्छन्द जीवन यापन कर सकते हैं—महाराष्ट्र-रमणियों पर कोई कुदृष्टिपात नहीं कर सकता। सुतरां समस्त महाराष्ट्रमें घर घर आनन्दोत्सव मनाया जाने लगा। माता जीजाबाईने भी अगले दिन प्रातःकाल उठकर माता भवानीका अपने हाथसे पूजन किया। हाथ जोड़ कर नेत्रोंसे अश्रु-विसर्जन करते हुए माता भवानीको प्रणाम किया। आज माता जीजाबाईके हर्षका ठिकाना नहीं था। हृदयका धन, गोदका बालक फिर गोदमें आ गया। जीजाबाई बारबार देवीकी इस कृपाके लिये देवीके चरणोंमें कृतज्ञता और भक्तिकी अञ्जलि प्रदान करने लगीं।

शिवाजी अपने समयके सर्वश्रेष्ठ बुद्धिमान् थे। छोटीसी छोटी और बड़ीसे बड़ी घटनाओंमें भी उनकी तीक्ष्ण बुद्धिकी प्रखरता दृष्टि-

गोचर होती है। रायगढ़में पहुंच कर मथुरामें छोड़े हुए पुत्र सम्भाजी की रक्षाके लिये शिवाजीने एक नये कौशलका अवलम्बन किया। शिवाजीने समस्त महाराष्ट्रमें इस सम्वादका प्रचार कर दिया कि उनके पुत्र सम्भाजोकी मृत्यु हो गई है। स्वयं भी उन्होंने शोक-चिन्ह धारण कर मुगलोंको इस बातका विश्वास दिलाया कि सचमुच सम्भाजीकी मृत्यु हो गई है। मुगलोंने शिवाजीके फैलाये इस सम्वाद पर विश्वास कर सम्भाजीकी खोज-तलाश बन्द कर दी और शिवा-जीने अपने एक दूसरे एक वैमात्रेय भाईको ब्राह्मणका वेश धारण करा कर मथुराकी ओर सम्भाजीको लिवानेके लिये भेज दिया। शिवाजीके वैमात्रेय भ्राताने यथासमय मथुरा पहुंच कर पेशवा वन्शधरोंको शिवाजीके रायगढ़में निरापद पहुंच जानेका सम्वाद जा सुनाया और सम्भाजीको लेकर काशीजीके साथ महाराष्ट्रकी यात्रा की। मार्गमें कई जगह मुगल-कर्मचारियोंने सम्भाजीके रूप-रङ्गको देख कर संदेह भी किया—परन्तु चतुर काशीजीने सम्भाजीको अपना पुत्र बता दिया। इस पर भी जब उन्हें सन्देह बना रहा तो स्वयं उसके साथ एक पात्रमें भोजन कर उनको विश्वास दिला दिया और कहा कि मैं अपनी पत्नी, माता और पुत्र सहित प्रयाग-यात्राके लिये गया था—वहां माता और पत्नीका तो देहान्त हो गया—अब इस शिशु-निरीह पुत्रको लेकर देश लौट रहा हूं। इस प्रकारसे मुगल राज-कर्मचारियोंकी आंखोंमें धूल झोंकते हुए काशीजी और शिवाजीके भ्राता, पुत्र सम्भा-जीको लेकर यथासमय रायगढ़ पहुंच गये। बड़े समारोहसे उनका वहां स्वागत किया गया। मुगलोंको जब इस बातका पता लगा तो वे दांत पीसते रह गये और अपनी मूर्खताको कोसने लगे।

इधर राजा जयसिंहको जब आगरासे पलायन करनेका सम्वाद मिला तो वह अपनेको नाना प्रकारसे विपन्न समझने लगा। इस समय

मुगलोंका बीजापुरसे युद्ध हो रहा था। परन्तु फल कुछ भी नहीं होता था। इसका प्रधान कारण यह था कि बीजापुरको संकटमें पड़ा देख कर गोलकुण्डाने भी ६ हजार अश्वारोही एवं २५ हजार पदातिक सैनिक भेज दिये थे। आगरामें पुत्र रामसिंह सम्राट्का कोप-भाजन होकर दिन काट रहा था। इधर जब शिवाजी पुत्र सहित रायगढ़में आ उपस्थित हुए तब राजा जयसिंह और भी भयभीत हुआ। वह सोचने लगा कि यदि शिवाजी बीजापुरसे मिल गये तो बड़ी विपद् उपस्थित होगी। इसके अतिरिक्त राजा जयसिंह शिवाजीसे डरता भी था कि कहीं अफजलखांकी तरहसे मेरा भी काम तमाम न कर दें* इसी भयसे जयसिंह शिवाजीकी गुप्त-रूपसे हत्या तक करनेको तैयार हो गया था, जैसा कि उसके पत्रसे मालूम होता है जो उसने मुगल-सम्राट्के प्रधान मन्त्री जफरखांको लिखा था।

I have not failed nor will I do so in future to exert myself against Bijapur, Goloconda and Shiva in every possible way......I am trying to arrange matters in such a way that the wicked wretch Shiva will come to see me once, and that in the course of his journey or return (our) clever men may get a favourable opportunity (of disposing of) that luckless fellow in his unguarded moment at that place. This slave of the court, for furthering the Emperor's affairs, is prepared to go so far—regardless of praise or blame by other people—that if the Emperor sanctions it I shall set on foot a proposal for a match with his family and settle the marriage of my son with his daughter—though the pedigree and caste of Shiva are notoriously low and men like me do not eat food touched by his hand (not to speak of entering into a matrimonial connection with him) and in case this wretch's daughter is captured I shall not condescend to keep her in my harem. As he is of low birth, he will very likely swallow this bait and be hooked. But great care should be taken to keep this plan secret. Send me quickly a reply to enable me to act accordingly, (Prof. J. N. Sircar's Shivaji)

———

पंचदश-परिच्छेद ।

सिंहगढ़ अधिकार, तानाजीकी मृत्यु ।

—*—

शिवाजी मुगलोंकी कैदसे छुटकारा पाकर जब स्वदेश लौटे तो उन्होंने देखा कि दक्षिणमें मुगलोंका वह प्रभाव नहीं रहा । महाराज जयसिंह वार्द्धक्य, अतिरिक्त परिश्रम, मानसिक चिन्ता और सम्राट् द्वारा मान-सम्भ्रम नाश होनेके कारण सदा दुःखित रहने लगे । अन्त में राजा जयसिंहको शिथिल देखकर सम्राट्ने वापस बुला लिया—और उनकी जगह दक्षिणका सूबेदार शाहजादा मौअज़मको बना कर भेज दिया । राजा जयसिंह दुःख और चिन्तासे पाराक्रान्त होकर स्वदेश लौट पड़े, परन्तु रास्तेमें ही राजा जयसिंहकी २ री जुलाईको बरानपुरमें मृत्यु हो गई । शिवाजीकी गुप्त-हत्या करनेकी लालसाको मनमें ही लेकर मुगल सम्राटका यह वन्दा इस लोकसे बिदा हुआ ।

शाहजादा मोअज़म दक्षिणमें आ पहुंचा । वह बड़ा भारी विलासिता प्रिय था । शासन और राज्य-विस्तारकी चिन्ताओंको त्याग कर वह सदा मदिरा-पान और विषय-वासनाओंमें लिप्त रहता । मौअज़मकी इस विलासिताको देखकर शिवाजीके मनका रहा सहा भय भी दूर हो गया । किन्तु हिन्दुओंका चिर-शत्रु दुर्जेय बीर दिलेरखां मौअज़मका नायब था । दिलेरखां बड़ा साहसी आदमी था । वह अपनी इच्छाके अनुसार सब काम करता था । शाहजादा मौअज़म उसे इस प्रकारसे स्वेच्छाचारिता करते देखकर उससे विरक्त हो गया । अन्तमें इस विरक्तिने द्वेषका रूप धारण किया । शाहजादा मौअ-

हुआ। सम्राट् औरङ्गजेबको जब इस मैत्रीकी बात मालूम हुई तो उसे बड़ा सन्देह हुआ। वह सोचने लगा कि बहुत सम्भव है—शाहज़ादा शिवाजीके साथ मिल कर मुझे राज-च्युत न कर दे और स्वयं मेरी तरहसे सिंहासनासीन हो जाय। इस प्रकारकी बातें सोच कर औरङ्गजेब फिरसे शिवाजीको बन्दी करनेका उपाय सोचने लगा। इसी समय सम्राट् औरङ्गजेबको किसी कारणसे बाध्य होकर दक्षिण में अपनी सेनाकी संख्या ह्रास करनी पड़ी। जो लोग मुगल-सेनासे हटाये गये, उन्हें शिवाजीने अपनी सेनामें रख लिया। इसी समय शाहज़ादा मौअज़म द्वारा प्रदत्त बेरारकी कुछ जागीर पर सम्राट् औरङ्गजेबकी आज्ञासे मुगलोंने अधिकार कर लिया, जिससे शिवाजी अप्रसन्न हो गये—और उन्होंने मुगलोंकी सहायताके लिये भेजी हुई अपनी सेना औरङ्गाबादसे वापस बुला ली। इसके बाद सन् १६६९ में सम्राट् औरङ्गजेबने जब काशीके विश्वनाथ-मन्दिरको ध्वंश करनेकी आज्ञा दी, तो शिवाजीको भी इसका सम्बाद मिला। वे क्रोधसे लाल हो गये—और उन्होंने ऐसे धर्म-द्रोही सम्राट्से की हुई सन्धि तोड़ दी। औरङ्गजेबको भी इस बातका पता लगा। उसने शाहज़ादा मौअज़मकी सहायतार्थ सेनापति दाऊदखां एवं अन्यान्य कर्मचारियोंको दक्षिणमें भेजा। इधर शिवाजीने अपनी शक्ति संग्रहीत कर इस बीचमें मुगलोंको दिये हुए अपने २१ किले तथा और नये ६ किले छीन लिये।

इन दुर्गों पर अधिकार करते समय कण्डाना-दुर्ग पर अधिकार करनेमें बड़ा द्वन्द्व-युद्ध और कौशलका अवलम्बन करना पड़ा था। इसके सम्बन्धमें एक स्मरणीय घटना घटित हुई थी। इतिहासमें लिखा है कि कण्डाना-दुर्गको सन्धिके अनुसार मुगलोंके हाथमें देकर शिवाजी और उनसे भी बढ़ कर उनकी माता जीजाबाईको बड़ा दुःख

ज़मने औरङ्गजेबके पास भी दिलेरखांकी शिकायत लिख कर भेजी। इस पारस्परिक द्वेषके कारण मुगल तो अपने झगड़ोंमें लिप्त रहे और प्रखर बुद्धि वीरवर शिवाजी अपनी सेनाओंके सङ्गठन एवं क़िलोंके दृढ़ करनेके काममें लग गये। शिवाजीने अपनी उन सेनाओंका सङ्गठन ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया कि उसकी आज तक प्रशंसा होती है। कई राष्ट्र तो उनके उस समयके सेना सङ्गठनके अनुसार अब तक अपनी सेनाओंका सङ्गठन कर रहे हैं।

सब तरहसे तैयार होकर सन् १६६७ के अप्रैल मासमें सम्राट् औरङ्गजेबको शिवाजीने एक पत्र भेज कर लिखा कि यद्यपि सम्राट्ने उनको आगरामें बन्दी कर अच्छा काम नहीं किया था, तथापि मैं सम्राट्की वश्यता स्वीकार करता हूं। मुगल यदि दक्षिणको विजय करनेके लिये चढ़ाई करेंगे, तो मैं भी अपने पुत्रको सेना लेकर उनकी सहायताके लिये भेज दूंगा। सम्राट् औरङ्गजेबने इस पत्रका जब कोई उत्तर न दिया तो शिवाजीने राजा यशवन्तसिंहको मध्यस्थता स्वीकार करनेको लिखा। राजा यशवन्तसिंह उस समय शाहजादा मौअज़मके साथ दक्षिणमें थे। उन्होंने मौअज़मसे परामर्श कर सम्राट्के पास शिवाजीके प्रस्तावका अनुमोदन कर लिख भेजा। इस पर सम्राट्ने भी शिवाजीके प्रस्तावको स्वीकार कर लिया और उत्तरमें शिवाजीको राजाकी उपाधिसे विभूषित किया।

शिवाजीने सन्धिके अनुसार पुत्र सम्भाजीको एक हजार सैनिकों एवं प्रतापराव गुज्जरके साथ अहमदाबाद भेज दिया। शाहजादा मौअज़मने शिवाजीके पुत्र सम्भाजीका बड़े समारोहसे स्वागत किया और फिरसे पांच हजारी मनसबदारी प्रदान करते हुए एक हस्ती एवं एक रत्नजटित तलवार भेंट की तथा बेरारकी जागीर भेंट की। इस प्रकारसे शिवाजीके साथ शाहजादा मौअज़मकी मैत्रीका सुत्रपात

हुआ । सम्राट् औरङ्गजेवको जब इस मैत्रीकी बात मालूम हुई तो उसे बड़ा सन्देह हुआ । वह सोचने लगा कि बहुत सम्भव है—शाहज़ादा शिवाजीके साथ मिल कर मुझे राज-च्युत न कर दे और स्वयं मेरी तरहसे सिंहासनासीन हो जाय । इस प्रकारकी बातें सोच कर औरङ्गजेब फिरसे शिवाजीको बन्दी करनेका उपाय सोचने लगा । इसी समय सम्राट् औरङ्गजेवको किसी कारणसे वाध्य होकर दक्षिण में अपनी सेनाकी संख्या ह्रास करनी पड़ी । जो लोग मुगल-सेनासे हटाये गये, उन्हें शिवाजीने अपनी सेनामें रख लिया । इसी समय शाहजादा मौअज़म द्वारा प्रदत्त बेरारकी कुछ जागीर पर सम्राट् औरङ्गजेबकी आज्ञासे मुगलोंने अधिकार कर लिया, जिससे शिवाजी अप्रसन्न हो गये—और उन्होंने मुगलोंकी सहायताके लिये भेजी हुई अपनी सेना औरङ्गाबादसे वापस बुला ली । इसके बाद सन् १६६९ में सम्राट् औरङ्गजेबने जब काशीके विश्वनाथ-मन्दिरको ध्वंश करनेकी आज्ञा दी, तो शिवाजीको भी इसका सम्बाद मिला । वे क्रोधसे लाल हो गये—और उन्होंने ऐसे धर्म-द्रोही सम्राट्से की हुई सन्धि तोड़ दी । औरङ्गजेबको भी इस बातका पता लगा । उसने शाहजादा मौअज़मकी सहायतार्थ सेनापति दाऊदखां एवं अन्यान्य कर्मचारियोंको दक्षिणमें भेजा । इधर शिवाजीने अपनी शक्ति संग्रहीत कर इस बीचमें मुगलोंको दिये हुए अपने २१ किले तथा और नये ६ किले छीन लिये ।

इन दुर्गों पर अधिकार करते समय कण्डाना-दुर्ग पर अधिकार करनेमें बड़ा द्वन्द्-युद्ध और कौशलका अवलम्बन करना पड़ा था । इसके सम्बन्धमें एक स्मरणीय घटना घटित हुई थी । इतिहासमें लिखा है कि कण्डाना-दुर्गको सन्धिके अनुसार मुगलोंके हाथमें देकर शिवाजी और उनसे भी बढ़ कर उनकी माता जोजाबाईको बड़ा दुःख

हुआ था। इस समयकी बात है कि एक दिन प्रातःकाल माता जीजाबाई जब स्नानादिसे निवृत्त हो सूर्यको अर्घ्य दे रही थीं—तब उन्होंने पूर्वकी ओर सूर्यालोकसे चमकती हुई कण्डाना-दुर्गकी अट्टालिकाको देखा। माता जीजाबाईके हृदयमें छिपी हुई दुःखाग्नि धक् धक् कर प्रज्वलित हो उठी। जीजाबाईने उसी समय शिवाजीको बुला भेजा। शिवाजीने आकर माताको प्रणाम किया। जीजाबाईने शिवाजीको आशीर्वाद देकर कहा,—"मैंने द्यूत-क्रीड़ा करनेको तुमको बुलाया है।" शिवाजीने कहा;—"माता, मेरा यह अपराध और धृष्टता होगी यदि मैं तुमसे द्यूत-क्रीड़ा करूंगा, क्योंकि मैं तुम्हारा पुत्र हूं।" परन्तु माता जीजाबाईके अत्यन्त आग्रहपूर्ण आदेशके कारण शिवाजीको द्यूत-क्रीड़ामें प्रवृत्त होना पड़ा। अन्तमें शिवाजीकी हार हुई और उन्होंने प्रथाके अनुसार मातासे पूछा कि वे कौनसा किला लेना चाहती हैं? जीजाबाईने कहा,—"बेटा, मैं चाहती हूं कि कण्डाना-दुर्ग पर हमारा फिरसे अधिकार हो जाय।" सन्धिके समय भी शिवाजीने कण्डाना-दुर्गको बड़े दुःखके साथ मुगलोंको दिया था। इस समय मुगल-सम्राट्की ओरसे कण्डाना-दुर्गका किलेदार, राजपूत-कुल-कलङ्क उदयभान था। उदयभान बड़ा दुराचारी और औरङ्गजेबका आज्ञाकारी कर्मचारी था। दुर्गमें मुगलोंकी सेना भी रहती थी। उदयभान मुंहफट बड़ा काइयां आदमी था और हिन्दू जननीके गर्भसे जन्म लेकर भी एक प्रकारसे वह अपने हिन्दुत्वको नष्ट कर चुका था। इसलिये एकाएक कण्डाना-दुर्ग पर अधिकार करना सरल कार्य नहीं था। शिवाजी कई दिन तक चिन्तासागरमें पड़े कण्डाना दुर्गोद्धारका उपाय सोचते रहे। अन्तमें बाल्य-बन्धु तानाजीका स्मरण हुआ। शिवाजीने इसी समय तानाजीके पास दूत भेज कर सन्देश भेजा कि तानाजी अपनी १२ हजार सेना सहित

तीन दिनके भीतर रायगढ़ पहुंच जायं। जिस समय दूत तानाजीके घर पहुंचा, उस समय तानाजीके पुत्रके विवाहका आयोजन हो रहा था। परन्तु शिवाजीका आदेश पाकर यथासमय तानाजी रायगढ़ पहुंचे। शिवाजीने धन्यवादपूर्वक तानाजीकी अभ्यर्थना की। किन्तु तानाजी पुत्रके विवाहको छोड़ कर आनेके कारण कुछ विरक्तसे हो रहे थे। शिवाजी तानाजीके वाल्य-वन्धु थे, सुतरां उन्होंने शिवाजीसे सरलतासे पूछा कि उनके पुत्रके विवाहके आयोजनको नष्ट करके उनको क्यों बुलाया गया है? उत्तरमें शिवाजीने अप्रतिभ हो कहा,—"उनकी माताने उनको बुलाया है।" इसी समय माता जीजावाई भी वहां उपस्थित हुईं और प्रथाके अनुसार प्रदीप-प्रज्वलित कर तानाजी के ललाटको स्पर्श किया। तानाजीने भी महाराष्ट्रकी प्रथाके अनुसार उङ्गलीके शब्द द्वारा प्रकाश किया कि उन्होंने उनका सब भार ग्रहण करना स्वीकार किया। माताजीजाबाईके इस मातृ-स्नेहसे मुग्ध होकर तानाजीने अपना शिर-त्राण शिरसे उतार कर माता जीजाबाईके चरणोंपर रख दिया। तब माता जीजाबाई बोलीं,-"बेटा, मुझे कण्डाना दुर्ग पर अधिकार करना है, यदि तू इस कार्यमें सफल हुआ, तो मैं तुझे आजसे शिवाजीके कनिष्ठ भ्राताके स्थान पर अधिष्ठित करूंगी।" तानाजीने माताकी बात सुन कर उनके आदेश-पालनको स्वीकृति दे दी। इसके बाद माता जीजाबाईने तानाजी और उनके सैनिकोंको भोजन वस्त्र देकर आप्यायित किया।

इसके बाद एक दिन माघ मासकी प्रचण्ड शीत—कृष्णपक्षकी रात्रिको, जब चारों दिशायें निस्तब्ध थीं, कहीं किसी प्रकारका शब्द नहीं सुनाई देता था। सब लोग गम्भीर निद्रामें सो रहे थे, तानाजीने तीन सौ मावला-सैनिकोंको लेकर कण्डाना दुर्ग पर घेरा डाल दिया। सामने अत्युच्च दुर्ग-प्राचीर मेघमालाको भेद कर खड़ी थी। तानाजीने

एक सुशिक्षित गोहके कटि प्रदेशमें रज्जु बांध कर उसे छोड़ दिया। गोहने धीरे-धीरे दुर्ग पर आरोहण कर अपने लौह-शृङ्खलाके समान पञ्जे दुर्गकी अट्टालिका पर गाड़ दिये। तानाजी इसी रज्जुके सहारे दुर्ग पर चढ़ गये। इसके बाद तीनसौ सैनिक चुपचाप उसी रज्जुके सहारेसे दुर्ग पर चढ़ गये। पश्चात् सब लोगोंने चुप-चाप दुर्गमें प्रवेश किया। इस समय सब लोग गाढ़ निद्रामें सो रहे थे। थोड़ी देरमें ही सब लोग जाग पड़े और अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्धके लिये तैयार हो गये। किन्तु इसी समय मावला-सैनिक गण 'हर-हर महादेव' की ध्वनिसे गगन-विकम्पित कर दुर्ग-रक्षक सैनिकोंको मारने लगे। इसी समय युद्ध करते हुए वीरवर तानाजी राजपूत-कुल-कलङ्क उदयभानके पास जा पहुंचे। उदयभान भी एक तेज तल्वार लेकर तानाजीके साथ जूझ पड़ा। तानाजी जिस समय अनेक दुर्ग रक्षक सैनिकोंको मार कर उदयभानके साथ युद्धमें प्रवृत्त हुए, उस समय उनके नेत्रोंसे अग्निस्फूलिङ्ग निर्गत हो रहे थे। रणोन्मत्तताने उनके हृदय पर अधिकार कर रखा था। रक्ताक्त शरीरकी ओर उनका तनिक भी ध्यान नहीं था। उनके हृदयमें एक ही भाव था। मराठोंकी शक्तिका कलङ्क-मोचन करना ही होगा, कण्डाना-सिंहगढ़-दुर्गपर अधिकार करना ही होगा। इसी समय उदयभानने अपनी दीर्घ-तल्वारसे तानाजीके बाम-हस्तको काट डाला और तानाजीने भी एक तल्वारका ऐसा हाथ जमाया कि उदयभान भूमि पर लोट कर तड़फड़ाने लगा और क्षण भरमें अपने पापों का प्रायश्चित कर इस लोकसे बिदा हुआ। थोड़ी देर बाद तानाजी भी भूलुण्ठित हो गये और युद्धमें ही उन्होंने वीरगतिको प्राप्त किया। सेनापति तानाजीको निहत हुआ देख वीर मावला-सैनिकगण भीत होकर पलायन करने लगे, किन्तु इसी समय तानाजीके वीर-भ्राता सूर्याजीने आगे बढ़ कर कहा,—"कापुरुषो, क्या यही तुम्हारी वीरता

है ? शिवाजीकी सेना युद्ध-क्षेत्रसे पलायन कर गई—इस कलङ्कसे भारतका इतिहास कलुषित होगा। लो मैं इस रज्जुको काट कर तुम्हारे भागनेके मार्गको बन्द करता हूं ! आओ, आगे बढ़ो और वीरतापूर्वक युद्ध करके विजय प्राप्त करो—या मृत्यु-मुखमें पतित होकर वीरगतिको प्राप्त होओ !"

सूर्याजीके इन अग्निमय वाक्योंने सैनिकोंकी धमनियोंमें प्रबल वेगसे रक्त-स्रोत प्रवाहित कर दिया। उनका भय और निराशा अन्तर्हित हो गई। वे 'हर-हर महादेव' के जयघोषसे आकाशको प्रतिध्वनि करते हुए सूर्याजीका अनुसरण करने लगे। मुगल सैनिक, मावलोंका पुनरागमन देख भीत हो आत्म-रक्षाके लिये प्रचण्ड तेजके साथ युद्ध करने लगे। किन्तु सागरगामिनी स्रोत-स्वतीकी तरहसे मावला-गण—प्रबल वेगसे प्रतिरोध करनेमें समक्ष हुए। कण्डाना-दुर्ग पुनः मराठोंके हाथमें आ गया। इस युद्धमें प्रायः बारह सौ मुगल-सैनिक मारे गये। आत्म-रक्षाके लिये जिन लोगोंने पलायन किया था, उनमेंसे भी बहुतसे सैनिक मारे गये। इसके अनन्तर सूर्याजीने दुर्गकी अट्टालिका पर अग्नि-प्रज्वलित कर सिंहगढ़-विजय—होनेका संकेत शिवाजीको किया। शिवाजी वहांसे नौ मीलकी दूरी पर रायगढ़के किलेमें विजय-सिंहनादके संकेतकी प्रतीक्षा कर रहे थे। अगले दिन प्रातःकाल होने पर सूर्याजीके दूत द्वारा जब शिवाजीने सिंहगढ़ विजय और तानाजीकी मृत्युका सम्वाद सुना तो वे बड़े व्यथित हुए—और बोले,—"सिंहगढ़ तो हस्तगत हुआ, पर हाय ! मेरा सिंह कहां गया ?" इसके बाद शिवाजीने सिंहगढ़—दुर्गके अध्यक्षके पद पर सूर्याजीको अधिष्ठित किया और सैनिकोंको पुरस्कार प्रदान कर सन्तुष्ट किया—तथा राजदूत-बन्दीजनोंको मुक्त कर स्वदेश लौट जानेकी अनुमति प्रदान की। मुगल इस सम्वादको सुन कर भीत

हुए और इस घटनासे शिवाजीको फिर कार्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ समझ बड़ी उद्विग्नता एवं चिन्तासे दिन व्यतीत करने लगे।

इसी वर्षके मार्च मासमें पुरन्दर-दुर्ग पर और दिसम्बरमें माहुली दुर्ग पर शिवाजीने अधिकार किया। इसीवर्षमें शिवाजीने अहमद-नगर, जूना और पुरन्दर सन्निकटस्थ इकावन ग्रामों और नगरोंको लूट कर बहुत धन-सम्पत्ति अर्जित की। मुगल सेनापति दाऊदखां जब मराठोंके दमनके लिये इधर आया—तो मराठा सैनिक वहांसे चले गये। दिलेरखां और शाहज़ादा मौअज़ममें बहुत मनोमालिन्य रहता था, इसका उल्लेख यथास्थान किया जा चुका है। शिवाजीके वार वार सन्धि-भङ्ग करने पर शाहज़ादा मौअज़मने सम्राट्को लिख भेजा कि दिलेरखां योग्य व्यक्ति नहीं है, यह सम्राट्के मान-सम्भ्रमकी रक्षा नहीं कर सकता। उधर दिलेरखांने भी सम्राट्को लिख भेजा कि शाहज़ादा मौअज़म शिवाजीसे षड्यन्त्र कर—दिल्लीके राज-सिंहासनको प्राप्त करनेकी चेष्टा कर रहा है। सम्राट् औरंगजेबको भी दिलेरखांकी बातसे कुछ सन्देह हो गया था। वह सोचने लगा कि जैसे मैंने पिता शाहजहांको कैद कर सिंहासन पाया है, बहुत सम्भव है—शाहज़ादा मौअज़म भी मेरा अनुकरण करनेकी चेष्टा करता हो। इसीलिये इन सब बातोंका अनुसन्धान करनेके लिये सम्राट्ने वजीर-खांको—औरंगाबाद भेजा। परन्तु इसका भी कुछ फल नहीं हुआ। बल्कि गृह-विच्छेदके दारुण फलसे मुगल साम्राज्य अधःपतनकी ओर ही अग्रसर होने लगा। इधर शिवाजी भी ऐसा अच्छा सुयोग पाकर अपनी शक्ति बढ़ाने लगे।

बहुत दिनोंके बाद सन् १६७० के एप्रिल मासमें फिर चारों ओर यह सम्वाद प्रचरित हुआ कि शिवाजी बहुत बड़ी सेना लेकर फिर सूरत लूटने जा रहे हैं। मुगल-सेनापति दाऊदखां इस सम्वादको

पाकर ५ हज़ार अश्वारोही सैनिकोंको साथ लेकर सूरतकी रक्षा करनेके लिये सूरतको ओर चल पड़ा। दूसरी अक्तूबरको सूरतमें यह समाचार पहुंचा कि शिवाजी १५ हज़ार अश्वारोही सैनिकोंके साथ सूरतसे २० मीलके फासलेपर पहुंच गये हैं। इस सम्बादसे भीत होकर अनेक नगर-निवासी सूरतसे पलायन करने लगे। तीसरी अक्तूबरको शिवाजीने सूरत पर आक्रमण किया। सूरतस्थित अङ्ग-रेजों और फ्रांसीसोंके कल-कारखानोंको छोड़कर समस्त सूरत नगर-को शिवाजोने खूब लूटा। फ्रांसीसोंने तो बहुमूल्य रत्न आदि उप-हारमें देकर शिवाजीसे परित्राण पाया। इन वणिकोंको शिवाजीने पहले ही से यह सन्देश भेज दिया था कि यदि वे मेरे कार्यमें कोई बाधा उपस्थित नहीं करेंगे, तो योरोपियन निरापद रहेंगे। नगरको लूटते हुए जब मराठा-सैनिकगण अङ्गरेजोंके कारखानेके पास पहुंचे, तब अङ्गरेज बहुत भयभीत हुए। पहली लूटके समय इन्हीं अङ्गरेजोंने मकानों पर मोर्चा लगा कर शिवाजोके कुछ सैनिकोंको मार डाला था। उसीका प्रतिशोध लेनेके लिये जब आज मराठा-सैनिक वहां उपस्थित हुए, तब शिवाजीने इन निरीह विदेशियों पर आक्रमण करनेसे निषेध कर दिया। शिवाजीकी अभयवाणी सुनकर वहांके उन अङ्गरेजोंने शिवा-जीके सामने बहुतसे उपहार प्रस्तुत किये, जिन्हें उन्होंने स्वीकार कर लिया और उन्हें निरापद निवास करनेका आदेश किया। * ५ वीं अक्तूबरको शिवाजीने ससैन्य प्रस्थान किया। प्रस्थान करते समय शिवाजीने सूरतके प्रधान वणिकों और राज कर्मचारियोंको चेतावनी

The Maratha King received them in a very kind manner, telling them that the English and he were good friends, and putting his hand into their hands, he told them that he would do the English no wrong" (Prof J. N. Sircars Shivaji)

दी कि यदि सूरतवासी प्रतिवर्ष १२ लक्ष मुद्रा राजस्वके रूपमें दें तो ठीक है—नहीं तो आगामी वर्ष फिर इसी प्रकारसे सूरत पर आक्रमण किया जायगा। इसके बाद शिवाजी जब सूरतसे चले गये, तब वहां दरिद्र लोगोंने नागरिकों पर लूटका धावा बोल दिया और इन लोगोंने कुछ थोड़ेसे बड़े बड़े महलोंको छोड़ कर समस्त सूरत नगरको भूमिसात् कर दिया। अंगरेजी-जहाजोंके नाविकोंने भी अर्थोपार्जनके इस सुयोगका परित्याग नहीं किया। भुक्खड़ोंमें शामिल होकर उन लोगोंने भी लूट-पाटमें भाग लिया।

सूरतकी दूसरी बारकी लूटमें योरोपियन-वणिकोंने शिवाजीके कार्योंमें बाधा उपस्थित नहीं की थी, इसलिये शिवाजीने भी उन लोगों पर आक्रमण नहीं किया, इस सम्बादको सुन कर सम्राट्-औरंगजेबके पेटमें चूहे कूदने लगे। औरंगजेबने अनुमान किया कि इस बार विदेशी-वणिकोंको कुछ भेंट-उपहार नहीं दिया गया, इसीलिये वे लोग भी शिवाजीके मैत्रि-सूत्रमें आबद्ध हो गये हैं। इधर शिवाजीके सूरतसे प्रस्थान करने पर सूरतवासी भी सदा सशङ्कित रहने लगे। शिवाजीके पुनः सूरत आगमनका यदि कभी जनरव उठता, तो सूरतवासी नगर-परित्याग कर भागने लग जाते।

इधर जब शाहजादा मौअज़मको सूरतकी लूटका सम्बाद मिला, तो वह बड़ा चिन्तित हुआ। ५ हजार अश्वारोही सैनिकोंके साथ वह पहले ही दाऊदखांको भेज चुका था। परन्तु वह सूरत उस समय पहुंचा, जब कि शिवाजी अपना कार्य समाप्त करके सूरतसे प्रस्थान कर चुके थे। सुतरां दाऊदखांने शिवाजीका पीछा किया। चण्डौर-दुर्गके पास मुगल सेनापति दाऊदखांकी शिवाजीके सेनापति प्रतापराव गुज्जरसे मुठभेड़ हो गई। प्रतापरावके साथ १० हजार सैनिक थे। खूब भीषण युद्ध हुआ। इसके बाद निर्विघ्न मराठा-सैनिकोंने अपने

कङ्कण-प्रदेशमें पदार्पण किया। उधर सेनापति प्रतापरावने दाऊदखांकी मुगल-सेनाको परास्त किया। मराठा लोग विजयोल्लास आनन्द मनाने लगे और भग्नोत्साह मुगल-सैनिकोंने भाग कर आश्रय लिया। मुगल-सेनापति नासिकमें ठहर कर शिवाजीकी गतिविधिको देखने लगा।

सन् १६७० में सेनापति प्रतापरावने खान देश पर आक्रमण किया। और वीर व्यवसायी एवं समृद्धिशाली नगर करिञ्जाको लूटकर लगभग एक करोड़ मुद्रा प्राप्त की। करिञ्जासे प्रस्थान कर मार्गके बहुतसे नगरों एवं ग्रामोंको लूट कर बहुतसा धन प्राप्त किया। कितने ही स्थानोंसे चतुर्थान्श राजस्व देनेके प्रतिज्ञा-पत्र लिखाये। इसी समय पूर्व खानदेशको लूट कर आते समय त्र्यम्बक पिंगलेसे प्रताप-रावकी भेंट हुई। दोनों सेनापतियोंने शिलहरि-दुर्ग पर आक्रमण कर अपने अधिकारमें कर लिया। दुर्गाध्यक्ष फतुल्लुखां युद्धमें मारा गया और उसके सालेने आकर दुर्गका अधिकार मराठोंके हाथमें सौंपा।

षोड़श-परिच्छेद ।

कार्य-तत्परता और अंतर्विप्लव ।

—*::०::*—

सम्राट् औरंगजेब, सूरतकी लूट और जगह-जगह मुगलोंके पराजित होनेका सम्बाद सुनकर दक्षिणके सम्बन्धमें निराशसा हो गया, परन्तु यह सोच कर कि दक्षिणके एक साधारण जागीरदारका लड़का, हमारी शक्तिको इस प्रकारसे खर्व कर रहा है, उसके क्रोधका ठिकाना न रहा। उसने शिवाजीके राज्यको चूर्ण-विचूर्ण करनेका दृढ़ संकल्प किया और मोहब्बतखां नामके एक सेनापतिको चालीस हजार सैनिक देकर दक्षिणकी ओर भेजा। मोहब्बतखांको दक्षिणकी सूबेदारी प्रदान कर औरंगजेबने बहादुर खां और दिलेरखांको उसके अधीन काम करनेका आदेश दिया। इसके सिवा क्रोधोन्मत्त हो उसने यहां तक कह डाला कि यदि इसबार भी शिवाजीका दमन न हुआ तो मैं स्वयं शस्त्र धारण कर दक्षिण पर आक्रमण करूंगा। सुतरां सन् १६७१ ई० की तीसरी जनवरीको मोहब्बतखां, राजा यशवन्तसिंह तथा चालीस हजार सेनाको साथ लेकर बरानपुरसे चला और १० जनवरी को औरङ्गाबाद जा पहुंचा। जनवरीके अन्तिम सप्ताहमें मोहब्बतखां ने चण्डौरमें सेनापति दाऊदखांसे भेंट की। परन्तु किसी बातको लेकर दोनोंमें मतभेद हो गया और मोहब्बतखां नासिक होता हुआ पारनिर पहुंचा। इसके बाद सेनापति मोहब्बतखांने नव-उद्यमसे शिवाजीके विरुद्ध आक्रमण करना आरम्भ किया। सर्व प्रथम इसने शिवाजीके अन्ध और पट्ट नामके दुर्गों पर अधिकार किया। पश्चात्

शिलहरी-दुर्गपर आक्रमण कर घेरा डाल दिया। मोरोपंथ पिङ्गलेने एक हजार अश्वारोहियोंको लेकर दुर्गकी रक्षाके लिये युद्ध आरम्भ किया, परन्तु सेनापति मोहब्बतखांकी चालीस हजार सेनाने एक हजार मराठोंको युद्धमें मार डाला। इस पर शिवाजीने प्रतापराव पिङ्गलेको दोनों ओर से आक्रमण करनेका आदेश दिया। तदनुसार प्रतापराव पश्चिमसे और मोरोपन्थने पूर्वसे मुगल सेना पर आक्रमण कर दिया। मुगलोंको भी इस बातका पता लगा। मुगल सेनापति इगलासखां सेना लेकर बीचमें ही ठहर गया, जिससे मराठोंके दोनों सेनादल परस्परमें न मिल सकें। दोनों ओरसे भीषण युद्ध आरम्भ हुआ। दो घण्टेके लगा-तार युद्धके बाद दोनों मराठा-दल सम्मिलित हो गये और प्रचण्ड-विक्रमके साथ मुगलों पर आक्रमण करने लगे। थोड़ी देरके युद्धके बाद मुगलोंके पांव उखड़ गये और वे भागने लगे। इगलासखाँ और उसके सहकारी बहलोलखांने दो हजार सैनिकोंके साथ पलायन कर आत्म-रक्षा की। इस युद्धमें मुगलोंके बीस हजार सैनिक मारे गये और बन्दी हुए। शिवाजीको इस विजयसे ६ हजार घोड़े, १२५ हाथी तथा बहुतसा धन प्राप्त हुआ। ऐसी अवस्थामें मोहब्बतखां भी शिल-हरि-दुर्ग परित्याग कर औरङ्गाबाद जा पहुंचा। इस महायुद्धके बाद अनेक मुगल और बीजापुरी सैनिक शिवाजीकी सेनामें भर्ती हुए।

औरङ्गजेबको जब इस पराजयका पता लगा तो वह मोहब्बतखांसे नाराज हुआ और उसने दिलेरखां तथा बहादुरखांको दक्षिणमें भेजा। इन दोनों सेनापतियोंने शिलहरि-दुर्गको कुछ कर्मचारियोंको सौंप कर स्वयं अहमदनगरकी ओर प्रस्थान किया। इसके बाद नरपिशाच दिलेरखांने पूना पर अधिकार किया—और ९ वर्षसे ऊपरकी आयुके सभी निर्दोष नर-नारियोंको मार डाला। बहादुरखांने पूनामें ही सुना कि शिवाजीने एक विशाल सेना लेकर शिवहरि-दुर्गको अपने अधि-

कारमें कर लिया तथा इगलासखां सेनापति और मुगल सेनाको बन्दी कर लिया। इस सम्बादको सुनकर उसने पूनाका परित्याग किया और सेना लेकर शिलहरिकी ओर अग्रसर हुआ। इस बीचमें शिवाजी ने पुलमुहिर-दुर्ग पर अधिकार कर उसमें गोला-गोलीका प्रचुर प्रबन्ध किया और स्वयं कङ्कण प्रदेश लौट आये। शिवाजीकी शक्तिका इस प्रकारसे बढ़ती देखकर दिलेरखां और बहादुरखां बहुत लज्जित हुए! इसके पश्चात् सेनापति बहादुरखां तो अहमदनगर लौट आया और मोहब्बतखांको सम्राट्‌ने वापस बुला भेजा था, इसलिये वह दिल्लीकी ओर चला। सन् १६७१ में शाहजादा मौअज़मकी मृत्यु हो जानेके कारण बहादुरखांको अस्थायी रूपसे दक्षिणका सूबेदार बनाया गया।

इधर वीर मराठोंने इगलासखांको परास्त कर एवं बहादुरखांको और दिलेरखांको पूनासे भगा कर जोव्हरको लूटना आरम्भ किया। इस लूटमें प्रायः २१ लाख रुपये प्राप्त हुए। यहांसे मराठा सैनिक राम-नगर वर्तमान धर्मपुरकी ओर अग्रसर हुए। यहांका राजा मराठोंके आगमनकी बात सुनकर स्वयं अपने परिवार सहित वहांसे भाग खड़ा हुआ। इसी समय मराठोंने सुना कि दिलेरखां बहुत बड़ी सेना लेकर मराठों पर आक्रमण करने आ रहा है, तो मराठा सैनिक वहांसे चल दिये। इसके बाद रामनगर अधिकारकी बात शीतकालके कारण कुछ दिन तो स्थगित रही। अन्तमें मोरोपन्थने १५हज़ार सैनिकोंको लेकर इसपर आक्रमण किया और सरलतासे अधिकार कर लिया। जोव्हर और रामनगर पर अधिकार होनेके कारण सूरतका मार्ग सहज—और निकट हो गया। परन्तु सूरतवासी इससे बड़े सशङ्कित रहने लगे। मराठा सेनापति मोरोपन्थने सूरतवासियोंके पास तीन पत्र भेज कर लिखा कि या तो हमको चार लाख रुपये दो—नहीं तो हम सूरत पर आक्रमण करेंगे। सूरतवासियोंको इन पत्रोंमें यह भी लिखा गया था

कि तुम्हारे सम्राट्ने हमको इतनी अधिक सेनाका व्यय-भार सहन करनेके लिये वाध्य किया है, इसलिये आयका यह चतुर्थांश हमें मिलना चाहिये । इस पर पहले तो मुगलोंके प्रधान नगर-रक्षकने सब लोगोंसे परामर्श कर आत्मरक्षा करने पर जोर दिया और इस कामके लिये ४५ हजार रुपये भी लोगोंसे एकत्रित किये, परन्तु जब आत्म-रक्षा करनेके लिये कोई भी स्वयसेवक-दलमें भर्ती न हुआ, तो नगर रक्षकने कहा—कि ६० हजार रुपया और दो तो सब मिला कर शिवाजीको दे दिया जाय, जिससे वे फिर आक्रमण न करें। परन्तु नगरवासियोंने नगर-रक्षकको प्रवञ्चक समझ कर ऐसा करनेसे इन्कार कर दिया और जब तब करके—सूरतसे भागने लगे, परन्तु नगर-रक्षकने प्रधान द्वारको बन्द कर उन्हें वाहर भागनेसे भी रोक दिया।

इधर रामनगरसे मोरो त्र्यम्बकने नासिक पर आक्रमण कर उसे अधिकारमें कर लिया। इससे यहाँके प्रधान कर्मचारी यादव राव पर सेनापति बहादुरखां बहुत अप्रसन्न हुआ और उसकी भर्त्सना की। इसी प्रकारसे मराठोंका और एक स्थान पर अधिकार होनेके कारण वहांके कोतवाल सिदीहलाल पर भी सेनापतिने अत्यन्त अधिक कोप प्रकट किया—जिसके कारण यादवराव और सिदी मुगलोंसे विरक्त हो गये और शिवाजीसे जा मिले। इन दोनोंकी सेनायें भी शिवाजीकी सेनामें भर्ती हो गईं। इनकी देखा देखी और भी कितने मुगल कर्म-चारी मुगलोंसे विरक्त होकर शिवाजीसे जा मिलनेका भय दिखाने लगे। इससे मुगल सेनापतिको गुजरातकी रक्षाकी चिन्ता पड़ी। इसी समय २५ अक्तूबरको शिवाजीने अपना एक दल टेलिङ्गाना लूटनेके लिये भेजा। सेनापति बहादुरखांने इस सेना दलका पीछा किया। शिवाजीका एक सैनिक दल जिस समय एक गांवको लूट कर भाग रहा था—उस समय दिलेरखां और बहादुरखांने इस पर पीछेसे आक्र-

मण कर इस दलको परास्त किया तथा पूर्व खानदेश और बरारकी रक्षा करनेमें लग गये ।

इधर मराठोंने फिर पूना पर अधिकार कर लिया, तो बहादुरखां को पता लगा । बहादुरखांने वहां सदल-बल पहुंच कर मराठोंको परास्त किया और फिरसे पूना पर अधिकार कर लिया । इसके बाद पेडगांवमें बहादुरखांने सम्राट्की आज्ञासे सैनिक-शिविर स्थापित किया और उसका नाम बहादुरगढ़ रखा, परन्तु एक विश्वासघाती मुगल-कर्मचारी पर विश्वास करनेके कारण शिवाजीको हानि उठानी पड़ी । शिवनेरी-दुर्ग शिवाजीका जन्मस्थान था । शिवाजीके लिये यह स्थान गौरवमय था । किन्तु इसके मुगलोंके हाथमें चले जानेके कारण शिवाजी बहुत व्यथित हुए । अब्दुल अजीजखां नामका एक पतित मनुष्य इसका शासन-कर्ता था । पहले वह ब्राह्मण था—और इसने मुसलमान-धर्म ग्रहण कर लिया था । शिवाजीसे इसने यह प्रतिज्ञा की थी कि यदि शिवाजी एक हजार सैनिक लेकर इस दुर्ग पर आक्रमण करें और मुझे इतना रुपया दें तो मैं इस दुर्गको दे दूंगा । इधर उस विश्वासघातीने सेनापति बहादुरखांको इसकी गुप्त-सूचना देकर बुला भेजा, जिससे शिवाजीकी सेनासे भयंकर मुठभेड़ हो गई । इस युद्धमें अल्पसंख्यक मराठोंको बहुत हानि उठानी पड़ी ।

सन् १६७२ में बीजापुरके अलि आदिलशाह द्वितीयकी मृत्यु हो जानेसे बीजापुरमें अन्तर्विप्लव उपस्थित हुआ । बीजापुरका एक दल चाहता था कि शिवाजीको सहयोग देकर दक्षिणसे मुगलोंको भगा दिया जाय और दूसरा दल इसके विरुद्ध था । शिवाजीने इससे लाभ उठाकर फिर पनहला-दुर्ग पर अधिकार कर लिया ।

सन् १६७३ में २५ हजार सेना लेकर शिवाजीने बीजापुर-राज्य में प्रवेश किया और बीजापुर-राज्यको कई दिन तक लूट कर बहुतसा

धन प्राप्त किया। इसके बाद कनारामें प्रवेश किया, परन्तु मुगलोंकी एक वहुत बड़ी मुहिमने आकर शिवाजोको रोका जिसके कारण यहां सफलता प्राप्त नहीं हुई।

इसके वाद शिवाजीका उत्तरीय-पथ अवरुद्ध करनेकेलिये वल्लोल-खां १२ हजार सैनिकोंको लेकर अग्रसर हुआ। शिवाजीके सेनापति प्रतापरावने मुगल-सेनासे युद्ध कर बल्लोलखां और उसकी सेनाको परास्त कर बन्दी कर लिया। परन्तु बल्लोलखांके वहुत अनुनय-विनय करने पर इन लोगोंको छोड़ दिया। क्योंकि बल्लोलखांने शिवाजीके विरुद्ध शस्त्र न उठानेकी शपथ ले ली थी। परन्तु बन्धनसे मुक्त होते ही अधिक सेना वुलाकर इसने मराठों पर चढ़ाई की। शिवाजीको जब इस वातका पता लगा तो वे अप्रसन्न हुए और उन्होंने प्रतापरावको मुगलोंपर आक्रमण करनेका आदेश दिया। प्रताव-रावने आवेशमें आकर बिना सोचे-समझे मुगल-सेनाको घास-पातकी तरह काटना शुरू किया। अन्तमें बिना सहायताके इसी युद्धमें वीर प्रतापरावने वीरगति प्राप्त की। इसके बाद शिवाजीने हंसाजीको मुगलों पर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। वीरवीर हंसाजीने अपने अतुल-विक्रम और अद्भुत शौर्य-वीर्यसे मुगलोंको परास्त किया। शिवाजीने प्रसन्न होकर हंसाजीको 'हमीरराव' की उपाधिसे विभूषित किया। मुगलोंके शिवरमें शोक छा गया। इसके वाद शिवाजीने प्रता-परावकी कन्याके साथ अपने पुत्र राजारामका विवाह किया और प्रतापरावके कुटुम्बियोंको वहुतसा धन देकर सम्मानित किया।

इसके बाद सन् १६७४ तक कई छोटे-मोटे युद्ध हुए—जिनमें वीरवर हंसाजीने अपनी वीरता दिखा कर मुगलोंको कई बार परास्त किया और मुगल-राज्यान्तर्गत अनेक ग्रामों और नगरोंको लूट कर लाखों रुपया पाया। इस वर्षके अन्तमें दिलेरखांसे भी शिवाजीकी

मुठभेड़ हुई, जिसमें एक हजार मुगल-सैनिक और पांचसौ मराठा सैनिक मारे गये। इसके बाद बीजापुर और मुगलोंसे शिवाजीकी छोटी-छोटी लड़ाइयां होती रहीं। लगातार कितने ही वर्ष तक युद्ध करनेके कारण दोनों दल शक्ति-हीन और अवसन्नसे हो गये थे। दूसरे शीतकालमें भीषण वृष्टिपात होनेके कारण समस्त देशमें महा-मारी फैल गई थी। शिवाजी भी अपने सैनिकोंको विश्राम दे रहे थे। इसी समय भारतके उत्तर-पश्चिम सीमान्तमें अफगानोंने विद्रोह कर दिया था, जिसे दबानेके लिये स्वयं सम्राट् औरङ्गजेबको सेना-सहित खैबर-घाटी तक जाना पड़ा था। सेनापति दिलेरखांको भी सम्राट्ने वहां बुला लिया था। दक्षिणमें केवल सेनापति बहादुरखां, मुगल-राज्यका कार्य-परिचालन कर रहा था। इसी कारणसे दक्षिणमें मुगल-शक्ति दिन पर दिन क्षीण होती जाती थी। मुगल-शक्तिकी दुर्बलता एवं बीजापुरके अन्तर्विप्लवके कारण युद्ध-विग्रह बन्दसा हो गया था। इसी समय शिवाजी और उनके प्रधान कर्मचारी शिवाजीके राज्याभिषेककी तैयारी करने लगे।

सप्तदश-परिच्छेद ।

—::*(:)*::—

शिवाजीका राज्याभिषेक ।

शिवाजी और उनके मन्त्रीवर्ग बहुत दिनोंसे सोच रहे थे कि शिवाजीका राज्याभिषेक होना चाहिये । शिवाजीने अनेक राज्यों और दुर्गों पर अधिकार किया था । जल और स्थलमें उनकी अपरिसीम शक्ति बढ़ रही थी । बीजापुर और गोलकुण्डा, शिवाजीकी वीरताके सामने शिर झुकाते थे । मुगल-सम्राट् दक्षिणमें साम्राज्य-विस्तार करनेमें अपनी समस्त शक्ति लगाकर भी निराश हो चुका था, तब भी सर्वसाधारण लोगोंकी दृष्टिमें शिवाजी साधारण आदमी थे । मुगल उनको एक साधारण जमीन्दार, बीजापुर एक जागीरदारका विद्रोही पुत्र, समझते थे । उनके राज्यमें उन्हीं द्वारा शासित होनेवाली प्रजा भी उनको प्रकृत राजा नहीं समझती थी । इसके साथ ही भोंसला-वन्शके इस असाधारण अभ्युत्थानको देख कर दूसरे मराठा-क्षत्रिय सरदार शिवाजीसे ईर्ष्या करने लगे थे । इसी प्रकारकी प्रति-हिंसा, द्वेष और अवहेलनाको समाप्त करनेके लिये शिवाजी और उनके मन्त्रियोंने राज्याभिषेकका परामर्श किया । परन्तु इसमें भी एक बाधा उपस्थित हुई । वह यह कि भारतवर्षमें क्षत्रिय जातिको छोड़ कर और कोई जाति कभी राजपद पर अभिषिक्त नहीं हुई थी । शिवाजीके वन्शके सम्बन्धने मराठोंकी धारणा अच्छी नहीं थी । वे लोग उनको शुद्र अथवा बहुत निकृष्ट श्रेणीका क्षत्रिय समझते थे और अपने आपको उच्चकुलोद्भव क्षत्रिय । इसी बातको लेकर एक दिन एक भोजमें जो

शिवाजीकी ओरसे मराठा सर्दारोंको दिया गया था, एक अप्रिय काण्ड उपस्थित हुआ। मराठा सर्दारोंने शिवाजीके साथ एक पंक्तिमें बैठनेसे इन्कार कर दिया। शिवाजी पर इस घटनाका बड़ा प्रभाव पड़ा। अन्तमें शिवाजी और उनके प्रधान कर्मचारियोंने परामर्श कर यह निश्चय किया कि शिवाजीका राज्याभिषेक किया जाय। परन्तु सर्व प्रथम शिवाजीके क्षत्रिय होनेकी पण्डितोंसे व्यवस्था ली जाय। इस समय भी काशीके पण्डितोंकी धर्म-व्यवस्थाको भारतके समस्त हिंदू मानते थे। शिवाजीने अपने कई कर्मचारियोंको काशी भेजा। इस समय काशीमें सर्व प्रधान पण्डित गागाभट्ट समझे जाते थे। समस्त भारतवर्ष उनकी व्यवस्थाको मानता था। सुतरां शिवाजीके कर्मचारियोंने पण्डित गागाभट्टको शिवाजीकी वन्शावलि और उनके वन्शका सप्रमाण इतिहास बतायी। पं० गागाभट्टने अनुसन्धान कर शिवाजीके भोंसला वन्शको उच्च सिसोदिया क्षत्रिय बताया और कहा कि शिवाजीका आदि उद्भव स्थान उदयपुरके महाराणाका विशुद्ध क्षत्रिय वन्श है। इसके सिवा शिवाजीने अपने क्षात्रतेजसे हिन्दू जातिकी रक्षा कर अपने क्षत्रियत्वका पूर्ण परिचय भी दे दिया है। बस फिर क्या था, पं० गागाभट्टको शिवाजीका राज्याभिषेक करानेके लिये रायगढ़ लाया गया। शिवाजी और उनके प्रधान कर्मचारियोंने सतारामें जाकर पं० गागाभट्टका बड़े समारोहसे स्वागत किया।

अभिषेकका कार्य तो बहुत पहलेसे ही आरम्भ हो चुका था। पं० गागाभट्टके परामर्शके अनुसार शिवाजीके कई प्रधान कर्मचारी राज्याभिषेककी रीति नीति जाननेके लिये जयपुर और उदयपुर भेजे गये। राज्याभिषेकके उपलक्ष्यमें शिवाजीने समस्त भारतवर्षके ब्राह्मणोंको निमन्त्रण भेजा, जिनमेंसे अनेक ब्राह्मण अपने परिवारों सहित उत्सवमें सम्मिलित हुए। इस प्रकारसे समागत ब्राह्मणोंकी

संख्या उनके बालकों आदिको लेकर पचास हजारके लगभग हो गई थी। शिवाजीकी ओरसे ब्राह्मणोंका यथोचित सम्मान किया गया। ब्राह्मणोंके अतिरिक्त हजारों साधु-फकीर एवं वणिक भी इस असाधारण उत्सव-समारोहको देखनेके लिये रायगढ़ आये थे। शिवाजीने सबका सादर सम्मान किया और उनके रहने और खाने पीनेका समुचित प्रबन्ध किया। इसके बाद शिवाजीने अपने राज्यान्तर्गत समस्त देव-मन्दिरोंमें जाकर देव-दर्शन किया। प्रतापगढ़के भवानी मन्दिरमें जाकर भवानीकी विशेष समारोहसे पूजा की और सवा मन सोनेका छत्र चढ़ाया।

राज्याभिषेक होनेसे पहले शिवाजीने यथाविधि उपवास आदि किये और पं० गागाभट्टने तारीख २८ मईको शिवाजीको एक महायज्ञ मण्डप रचकर यज्ञोपवीत दिया। क्योंकि क्षत्रियोंको उस समय राज्यारोहणसे पहले यज्ञोपवीत नहीं दिया जाता था। यज्ञोपवीत-क्रिया समाप्त हो जाने पर शिवाजीने प० गागाभट्टसे आज्ञा मांगी कि अब मैं वैदिक-मन्त्र उच्चारण कर सकता हूं या नहीं। परन्तु इस समय समस्त महाराष्ट्र-ब्राह्मण इस बातका तीव्र विरोध करने लगे, जिससे पं० गागाभट्टको साहस न हुआ कि वे शिवाजीको वैदिक-मन्त्र उच्चारण करनेका अधिकार दें। अगले दिन शिवाजीने इच्छाकृत एवं अनिच्छाकृत पापोंका प्रायश्चित किया। क्रमशः स्वर्ण, रजत, ताम्र, जस्ता, पीतल, शीशा, लौह आदिका तुलादान किया गया। इसके पश्चात् वस्त्र, शर्करा आदि खाद्य पदार्थोंका तुलादान हुआ। इस तुलादानमें प्रायः पांच लाख रुपये खर्च हुए। सब वस्तुयें ब्राह्मणोंको दे दी गईं। इसके पश्चात् ब्राह्मणोंने कहा कि शिवाजीने अनेक नगरोंको ध्वंश किया है—और उस समय अनेक ब्राह्मणों एवं उनके बालक-स्त्रियों तथा गौओंकी हत्या हुई है, उसके लिये भी ८ हजार

रुपये दानमें देने होंगे । शिवाजीने तुरन्त ब्राह्मणोंकी आज्ञाका पालन किया । इस घटनाको लेकर कितने ही ब्राह्मण द्वेषी महाराष्ट्र-इतिहास लेखकोंने ब्राह्मणोंपर व्यंग-बाण वर्षा करते हुए उन्हें विश्व-भुक् तककी उपाधि दे डाली है । परन्तु व्यङ्ग-वाण वर्षा करते हुए ये लेखक ब्राह्मणोंकी तपश्चर्या एवं उनके त्यागको भूल गये हैं । ब्राह्मण गुरु रामदास या ब्राह्मण साधु तुकाराम न होते तो हमें तो सन्देह है कि शिवाजीका इतना विकास होता या नहीं और यही क्यों यदि पं० गागाभट्ट शिवाजीके क्षत्रिय होनेकी व्यवस्था देनेमें कुण्ठित होते तो बहुत सम्भव है शिवाजीका राज्याभिषेक भी अधूरा ही रहता । देशके लोग उनका राज्याभिषेक होनेपर भी राजा मानते या नहीं ।

६ ठी जून सन् १६७४ को राज्याभिषेकका दिन निर्दिष्ट हुआ । इस दिन प्रातःकाल स्नानादिसे निवृत्त हो शिवाजीने गृह-देवताओंकी पूजा की और पं० गागाभट्टको २५ हजार रुपये प्रणाम कर दक्षिणामें दिये । अन्यान्य समागत ब्राह्मणोंको भी एकसौ करके स्वर्णमुद्रा दक्षिणामें दीं । इसके बाद शिवाजीने शुभ्रवसन, पुष्पमाला तथा स्वर्णालङ्कारोंसे सज्जित हो अभिषेक-स्थानमें गमन किया । उनके वाम-पार्श्वमें उनकी पत्नी सोराबाईको ग्रन्थि-बन्धन कर बैठाया गया । उनके पीछे युवराज सम्भाजीको बैठाया गया । इसके बाद शिवाजीके आठ प्रधान कर्मचारियोंने गङ्गाजलसे शिवाजीको अभिसिक्त कराना आरम्भ किया और पुरोहितगण वेद-मन्त्र उच्चारण करने लगे तथा चारों दिशायें सुमधुर वेद-मन्त्रोंके निनादसे निनादित हो उठीं । इसके बाद १६ सौभाग्यवती ब्राह्मणियोंने पञ्च-प्रदीप लेकर सद्यस्नात शिवाजीकी आरती उतारी । इस प्रकारसे माङ्गलिक कार्योंसे निवृत्त हो शिवाजीने नवीन वस्त्र धारण कर सभा-गृहमें प्रवेश किया ।

महाराष्ट्रमें जबसे हिन्दुओंका गौरव-लुप्त हुआ था, तबसे राज्या-

भिषेककी प्रथा भी बन्द हो गई थी। सुतरां आज फिर उस महत्वपूर्ण कार्यको देखनेके लिये महाराष्ट्रके सहस्रों नर-नारी रायगढ़में उपस्थित हुए। सभी समागत नर-नारियोंके मुख-मण्डल आज हर्षसे प्रफुल्लित दृष्टिगोचर होते थे। महाराष्ट्र बहुत दिनोंसे म्लेच्छ-पीड़ित हो रहा था। महाराष्ट्रके नर-नारी भय और दुःखसे दिन काट रहे थे, किन्तु आज बिधाताकी कृपासे वीर-केशरी शिवाजीने समस्त महाराष्ट्र-जातिके हृदयमें वीरत्वका भाव जाग्रत कर दिया था। मुसलमान पद-दलित जातिकी पराधीनताकी बेड़ियोंको काट कर महाराष्ट्रके गगन-मण्डलमें हिन्दुओंकी गैरिक राज-पताका फहरा रही थी। आज विहङ्गमगण स्वाधीन भावसे अपने अपने स्वरोंमें सङ्गीत गा-गा कर रायगढ़के दुर्गको मुखरित कर रहे थे। देवालयोंमें सस्वर वेद-पाठ कर ब्राह्मगगग भगवान्‌को सन्तुष्ट कर रहे थे। रायगढ़के समस्त हाट-बाजार सजाये गये थे। कहीं पहलवानोंका मल्ल-युद्ध हो रहा था और कहीं राक्षस तथा बानरोंका रूप धारण कर ताण्डव-नृत्य हो रहा था। रायगढ़की उच्च अट्टालिका पर बैठ कर चोबदार नगाड़ोंके भीषण रवसे दाक्षिणात्य मुसलमानोंको भयभीत कर रहे थे। इसी समय भिक्षुकगण वस्त्र पाकर शिवाजीको आशीर्वाद देने लगे। चारों ओर आनन्द-कोलाहल और आनन्द-संगीतकी ध्वनि होने लगी। जीजाबाईके आनन्दका आज ठिकाना नहीं था। आज उनके पुत्र राज-सिंहासनपर आरूढ़ होंगे, आज महाराष्ट्र जातिका मस्तक गौरव-मण्डित होगा। किन्तु हाय! न जाने आज बिधाताके किस अनिर्वचनीय निगूढ़ अभिप्रायसे इस आनन्दको देखनेके लिये शिवाजीके पिता साहाजी और पत्नी सईबाई संसारमें नहीं हैं। आज इस दृश्यको देख कर उनके हर्षका पारावार न रहता।

आज ज्येष्ठ मासकी शुक्ला-त्रयोदशी है। सभी लोग रायगढ़

दुर्गकी ओर अग्रसर हो रहे हैं। राज-सभा-गृहने आज अपूर्व शोभा धारण की है। सुप्रशस्त सभागृहके ठीक मध्यमें १४ लक्ष मुद्राओंके मूल्यका स्वर्ण-सिंहासन रखा गया है। राजसिंहासनको व्याघ्र-चर्म और मखमलसे सुसज्जित किया गया है। यथा समय शिवाजीने सभा-गृहमें मङ्गल-गान वाद्यके साथ प्रवेश किया और प्रधान पुरोहित-की आज्ञासे उस पर आरूढ़ हुए। पूर्ववत् १६ सौभाग्यवती ब्राह्मणियों ने पञ्च-प्रदीप लेकर उनकी आरती उतारी और साथ ही साथ वेद मन्त्रोच्चारण द्वारा ब्राह्मणोंने आशीर्वाद दिया। उपस्थित जन-मण्डलीने 'जय शिवाजी महाराजकी जय' से रायगढ़-दुर्गको गुञ्जा दिया। चारों ओर बाजे बजने लगे तथा समस्त अधिकृत दुर्गोंसे भीषण तोपोंकी ध्वनि होने लगी—जिससे दाक्षिणात्य मुसलमानोंके हृदय कांप उठे। इसके पश्चात् प्रधान पुरोहित पण्डित गागाभट्टने आगे बढ़ कर—महाराज शिवाजीको 'छत्रपति' की उपाधि प्रदान कर अभि-नन्दन किया। इसके साथ ही सहस्रों ब्राह्मणोंकी आशीर्वाद-ध्वनिसे सभागृह गूञ्जने लगा। ब्राह्मणों, साधुओं और भिक्षुकोंको लाखों रुपया दान देकर शिवाजीने विदा किया। इसके बाद सामन्त-जागीरदारों, मराठा सरदारों तथा प्रधान राजकर्मचारियोंने अमूल्य वस्तुयें भेंट स्वरूप देकर शिवाजीकी वश्यता स्वीकार की और शिवा-जीने भी सम्मान पूर्वक सबको यथायोग्य उपहार प्रदान कर उनको नई हिन्दुओंकी उपाधियोंसे विभूषित किया।

इसके बाद राज-दरबार लगा। युवराज सम्भाजी, प्रधान पण्डित पं० गागाभट्ट, प्रधानमन्त्री मोरो त्र्यम्बक, शिवाजीके दाहिने और बायें उपविष्ट हुए और अन्यान्य कर्मचारी यथानिर्दिष्ट स्थानों पर बैठे। इसी समय नरोजोपन्थके साथ—अंग्रेज राजदूत मि० हेनरी अक्सडनने राज-दरबारमें प्रवेश किया। मि० हेनरीने महाराज शिवा-

जीको मस्तक झुका कर अभिवादन किया और एक बहुमूल्य हीरेकी अंगूठी अंग्रेज सरकारकी ओरसे भेंट दी। उत्तरमें शिवाजीने इस राजदूतको पास बुला कर सानन्द अभिनन्दन किया और उपहार स्वरूप एक खिलत प्रदान की।

शिवाजीके राज्याभिषेक होनेके दिनसे प्रायः एक मास पहलेसे अंग्रेज राजदूत मि० हेनरी अपने दो और साथियोंके साथ ठहरे हुए थे। दुर्गके पास ही एक भव्य भवनमें शिवाजीकी ओरसे उनके रहनेका प्रबन्ध किया गया था। शिवाजीके आदर और सम्मान-प्रदर्शनसे तीनों अंग्रेज शिवाजीको श्रद्धाकी दृष्टिसे देखने लगे थे। जिस दिन शिवाजी राजसिंहासन पर बैठ कर प्रार्थियोंकी कल्पतरुकी तरहसे इच्छा पूर्ण करने लगे, उसी दिन राजनीतिज्ञ मि० हेनरीने अंग्रेजोंकी उस समयकी सरकार इस्ट-इण्डिया कम्पनीकी ओरसे उपस्थित होकर बीस मांगें उपस्थित की, जिनमेंसे मुख्य ये हैं,—(१) अंग्रेज २॥ सैकड़ा राजस्व देकर शिवाजीके राज्यमें अपना व्यापार कर सकें। (२) राजपुर, कल्याण आदिमें स्वाधीन भावसे व्यापारी कोठियां खोल कर व्यापार कर सकें। इसमें बाधा न डाली जाय। (३) शिवाजीके राज्यमें हमारा और हमारे यहां शिवाजीका सिक्का चल सके। (४) शिवाजी द्वारा अधिकृत—समुद्र-उपकूलमें भग्न अंग्रेजी-जहाज पुनः प्राप्त हो जांय। (५) हुबली एवं राजपुरमें जो अंग्रेजोंकी हानि हुई है, उसकी क्षति-पूर्ति की जाय।

शिवाजीने अंग्रेज राजदूतकी और प्रायः सभी प्रार्थनाओंको तो स्वीकार कर लिया, केवल हुबली आदिकी क्षतिपूर्तिकी प्रार्थना-को स्वीकार नहीं किया। अंग्रेज राजदूत जब अपने अन्य साथियों सहित अपना कार्य समाप्त कर रायगढ़से बम्बईके लिये बिदा होने लगा तो एक कौतुक पूर्ण घटना घटित हुई। महाराज शिवाजीकी

आज्ञासे जो लोग उन तीनों अंग्रेजोंके लिये मांस भेजते थे, उन्होंने महाराज शिवाजीसे उन तीनों अंग्रेजोंके दर्शन करनेकी अनुमति मांगी। अनुमति मिलने पर वे लोग विस्मित हो आंखें फाड़-फाड़ कर तीनों अंग्रेजोंको देखने लगे। जब इसका कारण पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि एक मासमें जितना मांस ये तीन आदमी उदरस्थ कर गये हैं, इतना तो समस्त नगरके लोगोंने भी नहीं खाया। उपस्थित लोग इस बातको सुन कर हंस पड़े—और वे तीनों अंग्रेज भी मुस्कराते हुए विदा हुए। इसके बाद एक विशाल हस्ती पर आरोहण कर शिवाजीने अपने कर्मचारियों सहित रायगढ़ नगरकी परिक्रमा की। नगर निवासियोंने दुर्वा एवं पुष्प-वर्षा कर शिवाजीका अभिनन्दन किया। परिक्रमा समाप्त होने पर समागत नर-नारी प्रसन्न हो अपने अपने घरोंको लौटने लगे। इसी समय शिवाजीने एक और विवाह किया।

अभिषेकका कार्य समाप्त होने पर शिवाजी अपने राजकाजमें लग गये और योग्यतापूर्वक अपना कार्य सञ्चालन करने लगे। महीयसी जीजाबाई पुत्र शिवाजीके इस शौर्यवीर्य एवं यश-प्रतिष्ठाको देख कर परम प्रसन्न हुईं। समर्थ गुरु रामदास भी अपने मन्त्र दीक्षित शिष्यको सफलकाम देख अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। महाराष्ट्रके गगनमण्डलमें फहराती हुई हिन्दू-राजपताकाको देख कर महाराष्ट्रोंके आनन्दका ठिकाना न रहा। जब इस प्रकारसे समस्त महाराष्ट्रमें आनन्द छा रहा था, तब एक ऐसी घटना घटित हुई जिससे समस्त महाराष्ट्र शोक-सागरमें निमग्न हो गया। घटना यह हुई कि इसी समय राजमाता जीजाबाईका देहान्त हो गया। माताके परलोक गमनसे शिवाजी भी बहुत दुःखी हुए और एक मास तक शोकमें उन्होंने कार्य नहीं किया।

राज्याभिषेकमें शिवाजीके ६ करोड़ २० लाख रुपये खर्च हो गये थे। इससे शिवाजीका राजकीय-कोष खाली हो गया, तब शिवाजी-को बड़ी चिन्ता हुई। परन्तु प्रत्युत्पन्नमति शिवाजीने एक कौशलका अवलम्बन किया। मुगल सेनापति उस समय पेडगांवमें सेना सहित शिविर स्थापित कर रहता था। दिलेरखां आगरा चला गया था। इसी बीचमें सेनापति बहादुरखांको सम्बाद मिला कि पेडगांवसे ५० मीलकी दूरी पर मुगल राज्यमें शिवाजीकी अश्वारोही-सेना लूट-खसोट कर रही है। वह यह सम्बाद पाकर सेना सहित उधर गया—और इधर शिवाजीने उसके शिविरको आकर लूट लिया। इस आक्रमणमें शिवाजीको एक करोड़ रुपया और दो सौ घोड़े मिले। इसके बाद मराठोंने सूरत पर आक्रमण करना चाहा, परन्तु कई हजार भीलोंके बीचमें पड़ जानेसे सफलमनोरथ नहीं हो सके। पश्चात् मराठा सैनिकोंने कोल्हापुर और कल्याणसे बहुत सा धन प्राप्त किया। साथ ही मार्गमें कुतुबुद्दीनको सेना सहित मार भगाया।

शिवाजीने राज्य-शासन प्रणालीका समुचित प्रबन्ध कर अर्थ और सैन्य द्वारा अपनेको सबल बनानेके लिये एक नये कौशलका अवलम्बन किया। बराबर युद्धमें लिप्त रहनेके कारण शक्ति-सञ्चय करनेमें बाधा उपस्थित होती थी। सुतरां शिवाजीने मुगल-सेनापति बहादुरखांके पास अपना एक दूत सन्धिका सन्देश लेकर भेजा। सम्राट् औरङ्गजेबने सेनापति बहादुरखांको बड़ी आशासे दक्षिणमें भेजा था। परन्तु शिवाजीकी प्रखर-बुद्धिके कारण उसे तनिक भी सफलता न मिली और शिवाजी बराबर सफल होते चले गये। इसके सिवा सदा युद्धमें लिप्त रहनेके कारण बहादुरखां क्लान्त हो उठा था तथा उसको इसमें भी सन्देह हो गया था कि शक्तिशाली शिवाजी मुगलोंकी वश्यता कभी स्वीकार करेंगे। बहादुरखां अब तक अगण्य

सैन्य और अन्यान्य युद्धके उपकरणों तथा असंख्य धनसे हाथ धो बैठा था। सम्राट् औरंगजेब भी बहादुरखांको विफल-प्रयास देख विरक्त हो रहा था। सुतरां बहादुरखां मन ही मनमें सोचता था कि यदि किसी प्रकारसे शिवाजीको सन्धिके सूत्रमें आबद्ध कर सकूं, तो बीजापुरको तो सहजमें ही सम्राट्के वशीभूत किया जा सकता है। इसी प्रकारकी बातोंको सोचकर बहादुरखांने शिवाजीके सन्धिके प्रस्तावको सादर स्वीकार कर लिया। किन्तु प्रतिभाशाली शिवाजीने क्यों शक्ति और सम्पद्के पूर्ण मध्यान्हमें सन्धिका प्रस्ताव कर भेजा था, बहादुरखां इस रहस्यको नहीं समझ सका।

सन्धिकी शर्तें इस प्रकारसे स्थिर हुईं कि १७ दुर्ग शिवाजी सम्राट्को दे देंगे एवं उनके पुत्र सम्भाजी मुगल-सेनापतिके अधीन रह कर काम करेंगे। शर्तें सम्राट्के पास भेजी गईं। सम्राट्ने सहर्ष स्वीकार कर लीं और शिवाजीके पुत्र सम्भाजीको ६ हजार घोड़ोंका मनसबदारी-पद प्रदान किया तथा भीमा नदीकादक्षिण तीरवर्ती स्थान शिवाजीको दे दिया। बहादुरखांने सम्राट्की स्वीकृति आने पर शिवाजीके पास अपना दूत भेज कर कहला भेजा कि सम्राट्का स्वीकृति-पत्र लेने और १७ किलोंको समर्पण करनेके लिये शिवाजी हमारे शिविरमें आवें। शिवाजीने जिस समय सन्धिका प्रस्ताव मुगल-सेनापतिके पास भेजा था, उसी समय उनकी मराठी-सेनाने पण्डा नामक मुगलोंके स्थान पर आक्रमण करके घेरा डाल दिया था। सम्राट्की स्वीकृति आनेमें तीन मास व्यतीत हो गये। इस बीचमें शिवाजीके सैनिकोंने पण्डा नामक स्थानको अपने अधिकारमें कर लिया था। सुतरां जब बहादुरखांका दूत शिवाजीके पास पहुचा, तो उन्होंने उसे कह दिया कि हमने तो सन्धिका प्रस्ताव ही नहीं किया था। बहादुरखां इस सम्बादको पाकर बड़ा लज्जित हुआ

और अपनी बुद्धिको धिक्कारने लगा और शिवाजीको इसका दण्ड देनेके लिये बहादुरखांने बीजापुरके प्रधान मन्त्री अब्बासखांको अपने साथ मिला लिया। दोनों आदमियोंने स्थिर किया कि दोनों ओरसे दोनोंकी सेनायें शिवाजी पर आक्रमण करेंगी। सम्राट्-औरङ्गजेबने भी इसके लिये अपनी स्वीकृति दे दी। किन्तु भीतर ही भीतर बीजापुरकी सेनापर मुगलोंके शत्रु बहलोलखांने अधिकार कर रखा था, इसलिये बहादुरखांकी यह युक्ति कार्यमें परिणत न हो सकी। अन्तमें बहादुरखांने अपनी सेना लेकर नवम्बर मासमें उत्तर कङ्कण-प्रदेश पर आक्रमण किया। सन् १६७६ जनवरीसे लेकर मार्च तक सितारामें शिवाजी बीमार पड़े रहे। मार्चके अन्तिम सप्ताहमें आरोग्यता लाभ कर शिवाजी कार्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। सर्वप्रथम शिवाजीको सेनाने बीजापुरसे ४३ मीलके फासले पर अवस्थित अथनी नामक स्थान पर आक्रमण किया। इस समय बीजापुरमें भीषण अन्तर्विप्लव हो रहा था। शिवाजीने उससे लाभ उठानेके लिये अपने चार हजार अश्वारोही सैनिक बीजापुर भी भेज दिये थे। इसी समय मुगल-सेनापति बहादुरखांने एक प्रकाण्ड सेना लेकर बीजापुर पर आक्रमण किया और बहलोलखांको वहांसे मार भगाया। बहलोलखांने गोलकुण्डाके प्रधान मन्त्री मदन्नापन्थकी सहायतासे शिवाजीकी शरण ली और यह तय हुआ कि बीजापुर ३ लाख रुपया इस समय देगा और ५ लाख वार्षिक दिया करेगा। इसके परिवर्तनमें शिवाजी मुगलोंसे बीजापुरकी रक्षा करेंगे। किन्तु यह सन्धि भी दीर्घकाल तक न ठहर सकी। कारण कि बीजापुरमें ऐसा घोर अन्तर्विप्लव हो रहा था कि जिससे किसी प्रस्तावका यथोचित पालन होना कठिन था। किन्तु शिवाजी इससे दुःखित नहीं हुए और एक महा आक्रमणका आयोजन करने लगे।

अष्टादश-परिच्छेद ।

शिवाजीकी जल-शक्ति ।

——*(:)*——

हम इससे पहले परिच्छेदोंमें महाराष्ट्र-प्रधानवर्ती दक्षिण-प्रदेशमें शिवाजी द्वारा किये गये कार्य-कलापोंका उल्लेख कर चुके हैं। क्योंकि दक्षिणमें मुगलों और बीजापुरका आधिपत्य था, उसे ही नष्ट करनेके लिये शिवाजीने बराबर प्रयत्न किया था और इस काममें शिवाजीको जो सफलता प्राप्त हुई थी, उसका उल्लेख पहले परिच्छेदोंमें ही किया जा चुका है। इस परिच्छेदमें हम पश्चिम-उपकूलके विस्तीर्ण प्रदेशमें किये गये—शिवाजीके कार्योंका उल्लेख करते हैं और साथ ही शिवाजीकी जल-शक्तिका जो इतिहासमें वर्णन है—उसका उल्लेख करते हैं।

जिस समय राजा जयसिंह और दिलेरखां असंख्य मुगल-सेना लेकर शिवाजी पर आक्रमण कर रहे थे, उसी समय बीजापुर भी अफजलखांकी हत्यासे प्रतिहिंसापरायण होकर प्रचण्ड तेजके साथ शिवाजीको ध्वस्त करनेकी चेष्टा कर रहा था। उसी सङ्कटकालमें वीर केशरी शिवाजीने अपनी आश्चर्य-बुद्धि, असाधारण परिश्रम और कार्य-कुशलतासे पश्चिम उपकूलस्थ कनारासे लेकर कङ्कण-प्रदेश तक अपने राज्य-विस्तारकी चेष्टा की थी।

कनारा—एक विस्तीर्ण भू-भागका नाम है। समुद्र-उपकूलमें बहुत दूर तक समान भावसे इसका विस्तार है। परन्तु यह प्रदेश अनेक भागोंमें विभक्त था। इस प्रदेशके विभिन्न भागों पर अनेक

राजाओंका प्रभुत्व था। उत्तर कनारा पर बीजापुरका प्रभुत्व था। बीजापुरके दक्षिण पश्चिमांश पर एक और मुसलमानका अधिकार था। इस मुसलमान शासकको 'रुस्तमी जमान' की उपाधि वन्श परम्परासे प्राप्त थी। पनहला दुर्ग इसी प्रदेशमें प्रतिष्ठित था। उत्तरमें राजापुर और दक्षिणमें मालाबार तक इसी शासकका शासन था। भिन्न-भिन्न स्थानोंसे इन ही बन्दरों पर अनेक जहाज आते और अनेक प्रकारके द्रव्य ले जाते। पश्चिम भारतमें उत्पन्न होनेवाली मनसिल, सह्याद्रि पूर्ववर्ती हुबली एवं उसके आस पासके स्थानोंमें अधिकतासे उत्पन्न होती थी। इसी स्थानसे अंग्रेजोंकी इस्ट-इण्डिया कम्पनी, पांच हजार मजूरों द्वारा मनसिल प्रस्तुत करके योरोप भेजती थी।

अफजलखांकी मृत्युके बाद रुस्तमी जामानने तीन हजार सैनिक लेकर शिवाजी पर आक्रमण किया। परन्तु बीजापुरके राजदूतसे मनोमालिन्य होनेके कारण रुस्तमी जमानने शिवाजीसे मेल कर लिया। पाठकोंको स्मरण होगा कि अफजलखांकी हत्या करनेके बाद शिवाजीने पनहला-दुर्ग पर अधिकार कर लिया था। इसके बाद शिवाजीने रत्नागिरिमें प्रवेश कर—रत्नागिरि एवं उसके मध्यस्थित अन्यान्य प्रदेशों पर भी अधिकार कर लिया। भयभीत होकर यहांके छोटे-छोटे राजा लोग रुस्तमी जमानको शिवाजीका मित्र समझ कर उसकी शरणमें पहुंचे। इसी समय शिवाजीकी फाजिलखांसे मुठभेड़ हो गई। रुस्तमीजमान ऊपरसे तो बीजापुरके साथ रहा, परन्तु वास्तवमें उसने शिवाजीसे युद्ध नहीं किया। अन्तमें शिवाजीने फाजिलखांको बुरी तरहसे पराजित कर भगा दिया।

अभीतक अंग्रेजोंसे शिवाजीका किसी प्रकारका विरोध नहीं था। किन्तु नीचे लिखी घटनाके कारण—शत्रुताका सूत्रपात हुआ। एक मराठा दलालने रुस्तमीजमानको कुछ ऋण दे रखा था। रुस्तमी-

जमानने एक जाली हुण्डी इस्ट-इण्डिया कम्पनीके नाम काट कर मराठा दलालको दे दा। परन्तु इसी समय उस मराठा दलालको मालूम हुआ कि रुस्तमोजमान—जहाजपर चढ़ कर राजापुरसे पलायन करनेकी चेष्टा कर रहा है और हुण्डी जाली है, तो उसने इस्ट-इण्डिया कम्पनीके प्रधान कर्मचारी मि० रेविङ्गटनसे अनुरोध किया कि उसका रुपया रुस्तमीजमानसे दिलवादे। मि० रेविङ्गटनने अपना 'डायमण्ड' जहाज भेज कर रुस्तमीको भागते हुए रोक लिया। तब लाचार हो रुस्तमीने ऋणके कुछ अंशका परिशोध कर दिया। इसी समय मराठा सैनिकोंने अंग्रेजांसे रुस्तमीका जहाज मांगा। अंग्रेजोंने ऐसा करनेसे इन्कार कर दिया। इसपर रुस्तमीने अंग्रेजोंको अपने अनुकूल देख और दो जहाजोंपर अधिकार करनेका अनुरोध किया। अंग्रेजोंने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर लिया। इस मराठा सेनापति डोराजीने अंग्रेजोंके दलाल वागजी और पालजीको बन्दी कर खारमदनके किलेमें कैद कर लिया और जब अङ्गरेजोंकी ओरसे मि० फिलिमगाइफोर्डको मराठा-शिविरमें भेजा गया और उसने उन दलालोंकी मुक्तिके लिये प्रार्थना की, तो उसे भी उसके दो साथियों सहित मराठोंने बन्दी करके कैदमें डाल दिया। मि० गाइफोर्डने शिवाजीके पास पत्र भेज कर मुक्तिके लिये प्रार्थना की और बचन दिया कि पण्डा, राजपुरी पर आक्रमण करते समय हम शिवाजीकी सहायता करेंगे। शिवाजीने तुरन्त तीनों आदमियोंको छोड़ देनेकी आज्ञा दी। परन्तु सेनापतिने दोनों दलालोंको तो छोड़ दिया, मि० गाइडफोर्डको नहीं छोड़ा। शिवाजीको जब इसका पता लगा तो उन्होंने डोराजीको नोकरीसे बरखास्त कर दिया और उसका सामान नगर-वासी गरीबोंको दे दिया। इसी समय डोराजीके भक्त कुछ सैनिक, कैदी, मि० गाइफोर्डको वहांसे हटा कर किसी दूसरे स्थान

पर ले चले। इसी समय अङ्गरेजोंको भी इस बातका पता लग गया। उन्होंने रास्तेमें ही सैनिकोंपर छापा मार कर मि० गाइफोर्डको छुड़ा लिया।

अङ्गरेजोंसे अप्रसन्न होनेका और भी एक कारण हो गया था। जिस समय शिवाजी पनहला-दुर्ग पर आक्रमण कर रहे थे, उस समय सिद्दीजहर बीजापुरकी ओरसे शिवाजी पर आक्रमण कर रहा था और अंगरेज लोग गोला-गोली देकर उसकी सहायता कर रहे थे। अंगरेजोंके इस सन्धि-भङ्गके कार्यसे असन्तुष्ट होकर शिवाजीने तीन अंगरेजोंको बन्दी कर लिया था और तीन वर्षके बाद बहुत अनुनय-विनय करने पर मुक्त किया था।

इसके बाद शिवाजीके साथ अनेक छोटे-मोटे राजाओं और मुगलों तथा बीजापुरसे कई छोटे-मोटे युद्ध हुए, जिनमें किसीमें तो शिवाजी हारे और किसीमें जीते। परन्तु शिवाजी बराबर अपनी शक्तिको बढ़ा कर राज्य-विस्तार करनेमें संलग्न रहे। इन छोटे-छोटे युद्धोंका यहां उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इन युद्धोंमें कोई महत्वपूर्ण घटना-घटित नहीं हुई।

राज्याभिषेके दो-तीन वर्ष बाद शिवाजी सोचने लगे कि उनकी स्थल-शक्ति तो बहुत कुछ पर्याप्त हो गई है, परन्तु जबतक जल-शक्ति भी न हो जाय, तबतक राज्यको सुदृढ़ नहीं समझा जा सकता। अन्तमें शिवाजीने कितने ही अर्णपोत निर्माण कराकर समुद्र उपकूल स्थित बन्दरों पर अधिकार करना आरम्भ किया। इस समय अङ्गरेज, फरांसीसी, डच और पोर्चूगीज वणिक लोग युरोपसे आकर पश्चिम उपकूलमें वास करने लगे थे। एवं अपने वाणिज्यविस्तार द्वारा इन लोगोंने बीजापुर और मुगलों तथा शिवाजीकी दृष्टिको अपनी ओर आकर्षित करना आरम्भ किया था। पहले तो इन विदेशी-

वणिकोंके कार्य-कलापोंको कोई महत्व नहीं दिया जाता था, परन्तु पीछे लक्षणोंसे ऐसा प्रतीत होने लगा था कि आज जिनको साधारण वणिक-वृत्ति परायण समझा जाता है, वे निकट भविष्यमें भारतमें महान् गौरव प्राप्त करेंगे। किन्तु यह मालूम नहीं था कि भारतके पश्चिमाकाशमें जो एक क्षुद्र कृष्णवर्णका मेघ उदय हो रहा है, वह शीघ्र ही भारतके समस्त आकाशमें छाकर भारतके गौरव-रवि-को आच्छन्न कर देगा। एक बार पञ्जाब-केशरी महाराज रणजीत-सिंहने भारतका मानचित्र देखते समय रक्त-रेखा द्वारा परिवेष्ठित स्थान-समूहको देख कर कहा था कि यह सब लाल लाल क्या है? उत्तरमें जब कहा गया कि महाराज, यह सब अङ्गरेजोंका अधिकृत प्रदेश है, तो वे अपनी असाधारण प्रतिभा-दृष्टिसे भारतके निकट भविष्यका दर्शन कर सहसा बोल उठे थे,—"एक दिन सब लाल ही लाल हो जायगा!" इसी प्रकारसे प्रखर बुद्धि महाराज शिवाजी भी इन विदेशी-वणिकोंकी कुटिल नीतिको देख कर समझ गये थे कि ये लोग एक न एक दिन अवश्य समग्र भारतको ग्रास कर जांयगे! इसीलिये शिवाजी जल-शक्ति बढ़ानेको चेष्टा करने लगे—जिससे इन विदेशियोंको भी शाशित किया जा सके और इसीलिये शिवाजी गोवा पर अधिकार करनेका प्रयत्न कर रहे थे।

अबिसीनियासे सोलहवीं शताब्दीमें कुछ लोगोंने आकर अहमद-नगरके सुल्तानके यहां नौकरी की थी। धीरे धीरे इन ही लोगोंने जंझीराका शासन भार ग्रहण किया। इन लोगोंको सिद्दी कहा जाता था। जंझीरा बम्बईसे दक्षिणमें ४५ मील पर अवस्थित है। यह एक पार्वत्य-द्वीप है। इसके दोनों ओर पण्डा और राजपुरी नामक नगर हैं। ये दोनों नगर भी सिद्दियोंके अधिकारमें थे। जिस समय अहमद-नगरका राजत्व विध्वंश हुआ—ये सिद्दी लोग भी स्वाधीन हो गये

थे। जब सन् १६२६ में बीजापुरके सुलतानका पश्चिमो समुद्रतटस्थ प्रदेश पर अधिकार हुआ, उस समय सुल्तानने सिद्दी वन्शके प्रधानको अपना प्रधान मन्त्रित्व प्रदान किया था। साथ ही नागोथनासे लेकर वङ्कट पर्यन्त तकका प्रदेश पुरस्कारमें प्रदान किया था। परिवर्तनमें बीजापुरने सिद्दी लोगोंके ऊपर बीजापुरके वाणिज्य एवं मक्का-यात्रियों की रक्षाका भार अर्पण किया था। १७ वीं शताब्दीमें जब सिद्दी लोगोंने कई एक प्रबल रणतरी—तैयार कीं तो मुगल-सम्राट् एवं बीजापुरने उनको 'एडमिरल' स्वीकार किया था। उस समय पश्चिम समुद्र तट पर किसी और शक्तिका अधिकार भी नहीं था—और न जल-शक्तिमें ही सिद्दियोंका कोई समकक्ष था। सुतरां जब शिवाजी का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ तो वे भी सिद्दियोंसे अपने राज्य-की रक्षा करनेके लिये—नौशक्ति-वृद्धिकी ओर ध्यान देने लगे। सन् १६४९ में शिवाजीने सिद्दियोंके अधिकृत स्थान टाला, फोसला, रोहरी-दुर्ग पर अधिकार कर लिया। उस समय सिद्दी लोग पण्डा और राजपुरीमें राज्य करते थे। मराठा और सिद्दियोंमें बराबर विरोध रहता था। सिद्दी लोगोंके पास स्थल-सेना तो इतनी अधिक थी नहीं कि वे शिवाजीके साथ सम्मुख-युद्ध करते। परन्तु बीच बीचमें शिवा-जीके अधिकृत प्रदेश पर आक्रमण करते और लूट मार करके भाग जाते। सन् १६४२ से ५५ तक यूसूफखां नामक सिद्दी जंझीराका शासन करता रहा। इसने कभी शिवाजीका विरोध नहीं किया। किन्तु उसके उत्तराधिकारी फतेखांने अपने पूर्व शासककी कोर-कसर निकाल दी थी। एक बार फतेखांने शिवाजीके कङ्कण-प्रदेश पर आक्र-मण कर सेनापति बाजीराव फसलकरको मार डाला था। इससे शिवाजी बहुत रुष्ट हुए और उन्होंने सेनापति रघुनाथ अत्रेयको तीन हजार सेना लेकर फतेखां पर आक्रमण करनेको भेजा। मराठा-सेना-

पतिने फतेखांके पण्डा और राजपुरी दुर्गको जाकर घेर लिया और कई मास तक लगातार युद्ध कर अन्तमें उस पर अधिकार कर लिया। इसके बाद शिवाजीके सैनिकोंने जंझोरा पर आक्रमण किया, परन्तु कुछ फल नहीं हुआ। अन्तमें व्यङ्कोजीको शिवाजीने उस प्रदेशका शासनकर्ता बना दिया। सिद्दो लोग बीच बोचमें बराबर शिवाजीके राज्यमें लूट-मार करते रहे। अन्तमें सिद्दियोंकी व्यङ्कोजीसे एक भीषण मुठभेड़ हुई। इस युद्धमें सिद्दी लोग हार गये। व्यङ्कोजीने अपने राज्यसे सिद्दियोंको बाहर निकाल दिया और राजपुरी दुर्गको गोला-गीलोसे भर दिया—जिससे सिद्दो लोग फिर गोलमाल न कर सकें। इस प्रकारसे मराठोंकी तैयारी देख कर उधर तो सिद्दियोंने अपना रुख न किया, किन्तु रत्नागिरिको जाकर कई बार लूटा-खसोटा।

उस समय शिवाजीके पास चार सौ जहाज़ हो गये थे। इनके निर्माण करनेमें शिवाजीने प्रायः दश लाख रुपये व्यय किये थे। इन जहाजोंको दो भागोंमें विभक्त करके क्रमशः दो आदमियोंको इनका 'एड-मिरल' बनाया। इनाको 'परियासारङ्ग' एवं 'पियान नायक' की उपाधियां दी गईं। मालाबारके आस-पासकी छोटी जातियोंके हिन्दू नौका-प्रचालन करनेमें बहुत पटु होते थे, इसलिये इन ही लोगोंको शिवाजीने अपनी जल-सेनामें भर्ती किया। लोग इनको भाषण डकैत समझते थे और अंग्रेज़ भी इनसे भयभीत रहते थे। जहाज परि-चालनके काममें शिवाजीने अनेक मुसलमानोंको भो भर्ती कर लिया था। उत्तर समुद्र उपकूलस्थ कङ्कण प्रदेश पर अधिकार हो जानेके पश्चात् शिवाजीने अपने जहाजों द्वारा बहुत बड़े वाणिज्य-व्यवसाय-का विस्तार कर डाला था। एक बार समुद्रके भयङ्कर तोफानने शिवाजीके अनेक जहाज़ोंको डुबो भी दिया था।

शिवाजीकी नोशक्ति वृद्धिको देख कर सिद्दी, अंग्रेज वणिक,

और मुगल सम्राट् कम्पित हो गये थे। सन् १६६९ में शिवाजीने नवोत्साहसे जंझीरा पर आक्रमण किया। गत वर्ष शिवाजीने इस प्रदेश पर अधिकार करनेका दृढ़ संकल्प कर लिया था। अन्तमें फतेखांसे शिवाजीका घोर युद्ध हुआ। युद्ध करते करते फतेखां क्लान्त और अवसन्न हो गया। उसने जब यह समझ लिया कि बीजापुरसे अब किसी प्रकारकी सहायताकी आशा नहीं है, तो उसने किला समर्पण करनेका संकल्प किया। परन्तु उसके तीन कर्मचारियोंने उसके राज्यमें विद्रोह खड़ा कर फतेखांको बन्दी कर लिया तथा स्वयं युद्ध चलाने लगे। इन लोगोंने बीजापुर और मुगल सम्राट्से सहायताकी प्रार्थना की। मुगलोंने सहायताका वचन दिया, इससे सिद्दियोंने उनकी वश्यता स्वीकार कर ली। मुगलोंने सिद्दी सम्बलको 'एड मिरल' नियुक्त कर तीन लाख रुपये एवं बहुत सी जागीर प्रदान की। जंझीरा पर मुगल राज्य करने लगे।

शिवाजीने इस प्रयत्नको भी विफल देख नन्दगांवमें १६० जहाज, दश सहस्र अश्वारोही, बीस सहस्र पैदल सैनिक एकत्रित किये। इसके अतिरिक्त शिवाजीने तीन सहस्र जल सैनिकोंकी एक सेना संगठित की। शिवाजी चाहते थे कि इस सेनाको जल-पथसे ले जाकर उधर तो सूरत पर आक्रमण कर अधिकार कर लेंगे और इधर जंझीरा पर धावा बोल कर अधिकार कर लेंगे। सूरतके किलेदारको गुप्त रूपसे शिवाजीने मिला लिया था। परन्तु पीछे उसके विश्वासघातका पता लगने पर शिवाजीने अपना इरादा बदल दिया और बेरार पर चढ़ाई कर दी। कई दिन तक बेरारको लूटा गया। खान्देश पर भी आक्रमण करके शिवाजीके सैनिकोंने खूब लूट-पाट की। इसी समय शिवाजी की नौ-वाहिनी सेनाने लौटते समय १२ हजार रुपयेके एक जहाजको अधिकारमें कर लिया। किन्तु पोर्चूगीजोंको जब इसका पता लगा,

तो उन्होंने पीछा किया। पोर्चुगीजोंने मराठोंकी १२ रणतरी छीन लीं। इस घटनासे बड़ा संघर्ष प्रारम्भ हुआ। मराठा, मुगल, सिद्दी, अंगरेज, फरांसीसी, डच और पोर्चुगीज जल-मार्गमें शक्तिशाली होनेकी चेष्टा करने लगे। इस युद्धमें शिवाजीके हाथसे पण्डा और राजपुरी निकल गये। सिद्दियोंने इन पर फिर अधिकार कर लिया। सिद्दियोंने शिवाजीको युद्ध-विग्रहमें अत्यन्त अधिक लिप्त देख उनके एक और दुर्ग पर भी अधिकार कर लिया। शिवाजी इस समय चारों ओरसे घिरे हुए थे। एक ओर उन्हें प्रकाण्ड मुगल-शक्तिसे भिड़ना पड़ रहा था और दूसरी ओर बीजापुरसे दीर्घकाल-व्यापी युद्ध चलते रहनेसे शिवाजी कुछ क्लान्तसे हो गये थे। इधर अंगरेज प्रभृति विदेशी लोग भी उन्हें तंग कर रहे थे।

अन्तमें जब शिवाजी अनेक परिश्रम, अर्थव्यय, लोकक्षय कर भी जंझीरा पर अधिकार न कर सके, तो उन्होंने कनेरी नामक एक पार्वत्य-द्वीप पर दुर्ग निर्माण करनेकी चेष्टा की। यह स्थान जंझीरासे ३० मील उत्तर और बम्बईसे १७ मील दक्षिणमें अवस्थित है। इस दुर्गके निर्माणसे अंगरेजोंको गमनागमनमें बहुत कष्ट होता था। क्योंकि शिवाजीका दुर्गाध्यक्ष इस दुर्गमें रह कर अंगरेजोंके आवागमनका अच्छी तरहसे निरीक्षण कर सकता था। अंगरेजोंको यह अभीष्ट नहीं था। सुतरां वे शिवाजीका विरोध करनेके लिये सिद्दियोंसे मिल गये। अंगरेजोंने सिद्दियोंसे मिल कर किला-निर्माण करनेसे मराठा-सेनापतिको बन्द किया। शिवाजीकी नौ-बाहिनी सेनाके सेनापति दौलतखांने उस समय तो अपनी शक्तिको निर्बल देख दुर्ग निर्माणका कार्य बन्द कर दिया, किन्तु १६७९में शिवाजीने फिर दुर्ग-निर्माणका कार्य आरम्भ कर दिया। बम्बईके शासक अंगरेजने शिवाजीको ऐसा करनेसे मना किया, परन्तु शिवाजीने उसकी

बातको स्वीकार नहीं किया। फल-स्वरूप इस वर्षकी सितम्बर मास की १९ सितम्बरको अंगरेजोंका शिवाजीसे एक छोटासा युद्ध हो गया। परन्तु अंगरेज परास्त हुए।

अक्तूबरके द्वितीय सप्ताहमें फिर मुठभेड़ हुई, जिसमें पहले तो अङ्गरेज परास्त होकर भाग खड़े हुए—पीछे उन्हें विजय प्राप्त हुई। नवम्बरके अन्तिम सप्ताहमें सिद्दी सरदारने ३४ जहाज लेकर कनेरी दुर्ग पर आक्रमण किया और भीषण गोलाबारी करने लगा। मराठोंने भी डटकर युद्ध किया। इस युद्धमें अङ्गरेजोंको बहुत हानि उठानी पड़ी, इससे उन्होंने यही निश्चय किया कि शिवाजीसे युद्ध करना व्यर्थ है। इस पर चतुर अङ्गरेजोंने युद्ध करना बन्द कर दिया, किन्तु अपनी चतुर बुद्धिका जाल विस्तार करने लगे। अंग्रेजोंने स्थिर किया कि किसी प्रकारसे मराठोंको पोर्चूगीजोंसे भिड़ाकर अपना पिण्ड छुड़ाया जाय। इससे मराठों और पोर्चूगीजोंकी तो शक्ति घटेगी और हम अपनी शक्तिको दृढ़ करनेका प्रयत्न करेंगे।

इधर खण्डेरीमें मराठोंके परास्त होनेसे शिवाजी बहुत क्रुद्ध हुए और उन्होंने चार हजार सैनिकोंको बम्बई पर आक्रमण करनेके लिये भेज दिया। जब यह सम्बाद बम्बईवासियोंको मिला, तो वे बड़े भयभीत हुए। बम्बईका अंग्रेज शाशक भी युद्धका आयोजन करने लगा। परन्तु सूरतमें रहने वाले प्रधान अंग्रेज अफसरने उसे लिख भेजा कि शिवाजीसे युद्ध करनेसे कोई लाभ नहीं। सन्धि कर लेना ही ठीक है। परन्तु बम्बईके शासकको यह बात पसन्द नहीं आई। उधर सूरतके उस प्रधान अंग्रेज अफसरने शिवाजीको भी लिख भेजा था कि हमारा आपसे कुछ भी विरोध नहीं है हम सदा आपसे सन्धि करनेको तैयार हैं। सुतरां शिवाजीने बम्बई पर तो आक्रमण करना बन्द कर दिया, किन्तु खण्डेरीमें फिर दुर्ग—निर्माणका कार्य आरम्भ

कर दिया। इससे अंग्रेज बहुत चिन्तित हुए। क्योंकि समुद्र उपकुलकी दृष्टिसे यह स्थान बहुत महत्वपूर्ण समझा जाता था। अन्तमें अंग्रेजोंने सिद्दियोंसे मिल कर फिर युद्ध करनेका विचार स्थिर किया। परन्तु इसी समय वर्षाकाल आरम्भ होनेके कारण युद्ध नहीं हो सका। किंतु सिद्दयोंने खंडेरीके निकटवर्ती अंडेरी नामक स्थानपर अधिकार कर खंडेरी दुर्ग पर गोलाबारी आरम्भ कर दी। शिवाजीके नौसेनापति दौलतखांने खण्डेरी पर रात्रिके समय दो बार छापा मारनेका प्रयत्न किया, परन्तु सिद्दयोंकी सतर्कताके कारण दौलतखां विफल प्रयास हुआ। अन्तमें २६ जनवरीको दौलतखांने फिर तीन बार खण्डेरी पर आक्रमण कर उसे विध्वंस करना चाहा, किन्तु इस बार भी सफलता प्राप्त नही हुई। उल्टा दौलतखांको इस आक्रमणमें क्षतिग्रस्त होना पड़ा। बहुत कालतक खण्डेरी सिद्दयोंके अधिकारमें रही थी। वे उसके सभी गुप्त और प्रकाश्य मार्गोंसे परिचित थे। इसीलिये वे खण्डेरी पर गोलाबारी करनेमें विजय प्राप्त कर सके और शिवाजीको जल-युद्धमें बारबार विफल मनोरथ होना पड़ा। इसका प्रधान कारण यह था कि शिवाजीके राज्य-विस्तारके साथ साथ शत्रुओंकी संख्या दिन पर दिन अधिक बढ़ती जाती थी, किन्तु तब भी वे अभिमन्युकी तरहसे चारों ओरसे घिरे रहने पर भी अतुल पराक्रमसे अपना काम करते जाते थे। शिवाजीके चारों ओर प्रबल शत्रुओंका जमघट था, था, परन्तु तब भी वे अपने राज्य-विस्तारके कार्यको बराबर बढ़ाते चलेगये।

—*:*—

उन्नीसवां-परिच्छेद ।

कर्नाटक पर आक्रमण ।

—o:*:o—

राज्याभिषेक तथा सदैव युद्धमें लिप्त रहनेके कारण शिवाजीका राजकोष रुपयेसे खाली हो गया था । इसलिये शिवाजी पूर्व उपकूल-स्थ पर बहुत दिनोंसे एक जोरदार आक्रमण करनेका विचार कर रहे थे । क्योंकि कर्नाटककी आर्थिक दशा भारतके सभी प्रदेशोंसे अच्छी समझी जाती थी । इसके सिवा समुद्र-गुप्तसे लेकर मिरजूमल तकने कर्नाटक पर आक्रमण कर असंख्य धन लूटा था । यही क्यों स्वयं सम्राट् औरङ्गजेब धनकुबेर होकर भी कर्नाटकको लुब्ध दृष्टिसे देखता था । उसने मद्रासमें रहने वाले अपने राजदूतको एक बार लिखा था कि,—"साहाजीके द्वितीय पुत्र व्यङ्कोजीके पास जो कर्नाटकमें जागीर है, वह अपनी अयोग्यताके कारण उचित रूपसे उसकी रक्षा नहीं कर सकता, तुम कोशिश करो यदि उस जागीरको हथिया सको। क्योंकि व्यङ्कोजीकी जागीर मिलनेसे कर्नाटकमें प्रवेश करनेमें बड़ी सुविधा होगी ।"सुतरां सम्राट्के दूतने व्यङ्कोजीकी जागीर छीननेका बहुत प्रयास किया, किन्तु व्यंकोजीके बुद्धिमान प्रधान मन्त्रीके सामने उसकी बुद्धि कोई काम न कर सकी । राजदूतके विफलप्रयास होनेसे सम्राट् औरङ्गजेब भी निराश हो गया । परन्तु उसकी लुब्ध-दृष्टि कर्नाटक पर लगी ही रही ।

सन् १६६४ में जब शिवाजीके पिता साहाजीकी मृत्यु हुई, तो उन्होंने बीजापुर द्वारा प्राप्त कर्नाटककी समस्त जागीर कनिष्ठ पुत्र

व्यंकोजीको दे दी थी। ज्येष्ठ पुत्र शिवाजीको उन्होने केवल पूनाके आस पासकी थोड़ी बहुत जागीर ही दी थी। यद्यपि चिर प्रचलित प्रथाके अनुसार अधिक सम्पति ज्येष्ठ पुत्र शिवाजीको ही मिलनी चाहिये थी। परन्तु उनके पिताने इस विषयका व्यतिक्रम ही किया था। इस घटनाके सम्बन्धमें इतिहासकारोंके भिन्न भिन्न मत हैं। कोई कहता है कि व्यंकोजी छोटे पुत्र थे, दूसरी पत्नीके गर्भजात थे, पिता छोटे पुत्रोंसेही प्रेम करते रहे हैं। इसलिये साहाजीने भी अपनी कर्नाटककी प्रकाण्ड जागीर छोटे पुत्रको ही प्रदान की थी। कोई कहते हैं कि—शिवाजीने बीजापुरसे विद्रोह कर पिताकी अवज्ञा की थी और इसके कारण उन्हें कैद तकमें रहना पड़ा था, इसलिये साहाजी शिवाजीसे नाराज हो गये थे। कुछ इतिहासकारोंका मत है कि साहाजी शिवाजीको योग्य समझते थे—और समझते थे कि शिवाजी तो अपनी प्रखर बुद्धि और बाहुबलसे ऐसी ऐसी अनेक जागीरों पर अधिकार कर लेंगे—और व्यंकोजीको यदि यह प्रकाण्ड जागीर न दी गई तो आजन्म दरिद्र रहना होगा। इसलिये साहाजीने अपनी प्रकाण्ड जागीर व्यंकोजीको दी थी। कुछ भी हो, कर्नाटककी जागीरके मालिक व्यंकोजी थे और पिछली बात सत्य भी मालूम होती है। क्योंकि यदि साहाजीके मनमें ऐसा विकार रहा भी होगा, जिसका इतिहासमें कोई प्रमाण नहीं मिलता, तो जब शिवाजीके पास साहाजी बीजापुरके सन्धि-दूत होकर आये थे तो उनके अभूतपूर्व भक्तिभावसे द्रवित हो गये होंगे और अपने पुत्रके अद्भुत शौर्य-वीर्य को देखकर उनके आनन्दका वारापार न रहा होगा। ऐसी दशामें हम उन इतिहासकारोंके मतको नहीं मान सकते जो इस घटनाको साहाजीकी द्वेष-बुद्धिका फल मानते हैं। यदि शिवाजी जैसे सुयोग्य पुत्रका पिताही अपने पुत्रके प्रचण्ड शौर्य-वीर्यको देखकर उससे सन्तुष्ट नहीं

होगा, तो फिर क्या संसारमें कुपुत्रसे ही पिता प्रसन्न होंगे? साहाजी तो महान् बुद्धिमान राजनीतिज्ञ थे। उन्हें कभी ऐसा भ्रम नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त शिवाजी भी पिताके इस कार्यसे अप्रसन्न नहीं थे। उन्होंने एक बार अपने भाई व्यंकोजीके दूतको कहा था कि पिताजीने मुझे केवल चार लाख रुपये वार्षिक आयकी जागीर प्रदान की थी, परन्तु मैंने उसे बढ़ाकर ८० लाख वार्षिक आयकी कर ली है।

साहाजीने परलोकवाससे पहले कर्नाटककी जागीरके लिये रघुनाथ हनुमन्तको प्रधान प्रबन्धकके पदपर नियुक्त कर दिया था। रघुनाथ—बड़ा राजनीतिज्ञ और प्रखर बुद्धिका था। वह असाधारण नैपुण्य और बुद्धिके साथ काम करता था। साहाजीने ही रघुनाथको अपना मन्त्री बना लिया था। रघुनाथ भी बड़ी बुद्धिमानीसे काम करता था। कभी कभी रघुनाथ विना व्यंकोजीकी सम्मतिके कोई काम कर डालता था। अन्तमें व्यंकोजीको यह असह्य हो उठा। इसके अतिरिक्त व्यङ्कोजीके अन्यान्य पर-श्री-कातर कर्मचारी भी रघुनाथके सौभाग्यको देखकर जले जाते थे। वे सदाही रघुनाथके विरुद्ध व्यंकोजीके कान भरते रहते थे। रघुनाथ नारायण हनुमन्त वयोवृद्ध और साहाजीके पुराने विश्वासी कर्मचारी थे। उन्होंने एक दिन सब लोगोंके सामने शिवाजीकी योग्यताकी प्रशंसा करते हुए अल्प-वयस्क पुत्र-सम व्यंकोकी निन्दा की और उन्हें शिथिल और सदैव राजकाजसे विरक्त रहने वाला बताया। व्यंकोजीने उत्तेजित होकर शिवाजीको विद्रोही एवं विश्वास-घातक कहकर उनकी भर्त्सना की और मन्त्री रघुनाथजीको बताकर उनका तिरस्कार किया। वृद्ध मन्त्री रघुनाथ नारायणने व्यंकोजी द्वारा अपना अपमान होता देख उनके मन्त्री-पदको त्याग कर दिया और स्वयं भी तंजोरसे चल पड़े।

कार्य छोड़कर जाते समय रघुनाथजीने व्यंकोजीकी किसी प्रकार से निन्दा न कर, कहा कि मैं बृद्ध होनेके कारण शिथिल हो गया हूं। और अब शेष जीवन काशीमें जाकर व्यतीत करना चाहता हूं—इसलिये मैंने मन्त्री पद परित्याग कर दिया है। रघुनाथ वहांसे काशीका नाम लेकर चल पड़े, परन्तु काशीकी ओर न जाकर वे महाराष्ट्रकी ओर चल पड़े। मार्गमें कुछ दिनके लिये हैदराबाद ठहर गये। हैदराबादमें रघुनाथजीकी वहांके कुतुबशाहके प्रधानमन्त्री मदन्नापन्थसे भेंट हुई। रघुनाथजीने प्रधानमन्त्री मदन्नापन्थकी तीव्र बुद्धि देखकर उनसे शिवाजीकी मैत्रीका प्रस्ताव किया। मदन्नापन्थ भी सम्मत हो गये। इसके बाद हैदराबादसे चलकर रघुनाथजीने सतारा पहुंच कर शिवाजी से जाकर भेंट की और अनेक रत्नालङ्कार उनके सामने रख कर शिवाजीका अभिनन्दन किया। रघुनाथजी शिवाजीकी वीरता, साहस और कार्य कुशलताको बहुत दिनोंसे जानते थे। जिस समय शिवाजी एक राज्यके बाद दूसरे राज्य पर अधिकार करके हिंदू राजपताका फहरा रहे थे, उस समय रघुनाथजीका हृदय जातीय गौरवकी गुण-गरिमाको सुनकर उछल उठता था। सुतरां बहुत दिनोंसे रघुनाथजीका ध्यान शिवाजीकी ओर आकर्षित हो रहा था। आज उन्हीं शिवाजी के दर्शन कर रघुनाथजीको परम प्रसन्नता हुई—और मद्रास प्रान्तमें उनके राज्यका कैसे विस्तार हो सकता है, इसके सम्बन्धमें शिवाजीसे परामर्श करने लगे। शिवाजी भी रघुनाथजीकी असाधारण वाणिज्य एवं राजनीतिक कुशलताको देख कर उनसे परम प्रसन्न हुए और उनके परामर्शको स्वीकार कर उनको अपने मन्त्रि-मण्डलमें स्थान दिया। इधर मद्रास और कर्नाटकपर आक्रमण करनेका समय आ पहुंचा। परन्तु शिवाजी चारों ओरसे शत्रुओंसे घिरे हुए थे। इसके अतिरिक्त सातसौ मीलकी दूरी पर राज्यको छोड़ कर सेना सहित

जाना कुछ कम साहसकी बात नहीं थी, परन्तु शिवाजी जैसे राज-नीतिज्ञने अपनी तीक्ष्ण दृष्टिसे सर्वप्रथम अपने राज्यका ऐसा सुप्रबन्ध किया कि एकाएक उसपर कोई आक्रमण न कर सके। इसके बाद उन्होंने जिस नीतिका अवलम्बन किया, उसे आजके राजनीति-विशारद भी सहर्ष कार्यमें परिणत करते हैं।—बीजापुरके आदिलशाह की मृत्यु हो जाने पर बीजापुरमें भीषण अराजकता फैल गई थी। सब लोग दो दलोंमें विभक्त हो गये थे। दोनों दलोंमें युद्ध-विग्रह आरम्भ हो गया था। इसलिये बीजापुर वालोंकी तो अपनी ही जानके लाले पड़े हुए थे। वे शिवाजीके परम शत्रु होकर भी इस समय उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते थे।

अब रहा गोलकुण्डा—उसके और बीजापुरके उस समयके इति-हासका उल्लेख कर हम पाठकोंको यह बताना चाहते हैं कि उस समय वस्तुस्थिति क्या थी। अली आदिलशाहकी मृत्युके बाद बीजा-पुरमें दो दल हो गये थे। एक दलके नायक थे—खव्वासखां और दूसरेके बहलोलखां। इससे पहले परिच्छेदोंमें हम बहलोलखांके कार्य-कलापोंका उल्लेख कर चुके हैं। पठान-कुल-तिलक विख्यात खांजहां लोदीका पदाङ्क अनुसरण कर बहलोलखांका दक्षिणमें पदार्पण हुआ था। धीरे धीरे बहलोलखांका बीजापुरमें प्रवेश हुआ और अन्तमें बहलोलखांको अली आदिलशाके समयमें ही 'मीरज' नामक स्थानका शासनकर्त्ताका पद मिला।—खव्वासखां काफ़ी मुसलमानोंका दलपति था। आदिलशाह मरते समय इसी खव्वासखांको बीजापुरका शासन-कर्त्ता बनाता गया था। आदिलशाहकी मृत्युके बाद खव्वासखांकी मुगल सेनापति बहादुरखांसे मैत्री हो गई। खव्वासखांने इस मैत्रीको और भी दृढ़ करनेके लिये अपनी पुत्रीका विवाह मुगल-सेनापति बहादुरखांके पुत्रसे कर दिया तथा बीजापुरमें अपनेको सदैव सम्पन्न

बनाये रखनेके लिये खव्वासखांने मृत आदिलशाहकी पुत्री 'बादशाह बीबी' का विवाह औरङ्गजेबके पुत्रसे करनेकी प्रतिज्ञा की। इसके साथ ही खव्वासखांने बीजापुरको मुगलोंका करद-राज्य घोषित किया। अर्थात् अपने स्वार्थके लिये खव्वासखांने बीजापुरकी स्वाधीनताको बेच डाला ! खव्वासखांकी इस राजनीतिक चालसे बहलोलखां और उसके साथी अफगानोंकी शक्ति क्षीण होने लगी। बहलोलखां असह्य हो उठा। उसने खव्वासखांको निमन्त्रण देकर अपने घर बुलाया और कैद कर लिया तथा थोड़े दिनोंके बाद उसे मार डाला। सम्राट् औरङ्गजेबको जब यह सम्बाद मिला, तो उसने अपने दक्षिणात्य सेनापति बहादुरखांको बीजापुर पर आक्रमण करनेका आदेश दिया। भीमा नदीके तटपर बहादुरखांकी बहलोलखांसे मुठभेड़ हो गई। एक दिन रात्रिके समय बहलोलखांने मुगल सेना पर आक्रमण कर उसे ऐसी क्षति पहुंचायी कि वह अपनी रही सही सेनाको लेकर भाग खड़ा हुआ। इसके बाद मुगल सेनापति बहादुरखां नई सेना लेकर फिर बहलोलखांसे भिड़ पड़ा। इसी समय सेनापति दिलेरखांका आगरासे आगमन हुआ। दिलेरखांने युद्ध बन्द करवा दिया और बीजापुर तथा मुगलोंमें सन्धि हो गई।

इसी प्रकारसे बीजापुरकी तरहसे गोलकुण्डामें भी नाना प्रकारसे गड़बड़ हो रही थी। सन् १६७२ में गोलकुण्डाके सुल्तान कुतुबशाहकी मृत्युके बाद उसके जामाता अब्बुहुसेनको गोलकुण्डाकी गद्दीपर बैठाया गया। पहले-पहले तो अब्बुहुसेन विलासितामें लीन रहकर राजकार्योंमें उदासीनता दिखाता रहा, परन्तु संसारमें प्रवाहित होती हुई राज-विस्तारकी मन्दाकिनीको देख कर वह चौंक पड़ा। उसने देखा कि दिल्लीके मुगल सम्राट् औरङ्गजेबके दांत गोलकुण्डा पर लगे हुए हैं, अब मैं यदि जरा भी उदासीन रहा तो गोलकुण्डाकी स्वाधी-

शिवाजीके भाई व्यङ्कोजी ।

नता नष्ट हो जायगी। सुतरां इस आत्म-बोधसे उद्‌बुद्ध हो वह राज-काजमें जुट गया। औरङ्गजेबकी आशा भी इस नवजागरणको देख कर निराशामें परिणत हो गई। अब्बुहुसेनने देखा कि सर्वग्रासी मुगल-शक्ति गोलकुण्डाको भी ग्रास करनेके लिये मुंह पसार रही है। अब्बूहुसेनने सर्वप्रथम मदन्नापन्थ नामक दो वीर और राजनीति विशारद महाराष्ट्र ब्राह्मण-भ्राताओंको अपने प्रधान मन्त्रीत्वका भार सौंपा। इन दोनों विद्वान् भाइयोंने गोलकुण्डाके राजसूत्रको अपने हाथमें लेकर उसे शृङ्खला-बद्ध कर दिया। इनही राजनीतिकुशल भ्राताओंकी नीतिके कारण अब तक जो गोलकुण्डामें मुगल सम्राट्का प्रभाव था, वह भी नष्ट हो गया। इसी भावसे प्रेरित होकर मुगल-सेनापति बहादुरखांने बीजापुरके बहलोलखांसे सन्धि कर ली और उससे मिलकर गोलकुण्डा पर आक्रमण करनेकी तैयारी करने लगा। शिवाजी अपने समयके सर्वश्रेष्ठ राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने सोचा कि यदि मुगलोंने बीजापुरसे मिल कर कहीं गोलकुण्डाको ग्रास कर लिया, तो कल हमारे राज्यकी भी वही दशा होगी। इसलिये राज-नीति विशारद शिवाजीने गोलकुण्डासे बन्धुता स्थापन करनेका सङ्कल्प किया। यद्यपि मुगलों और बीजापुरसे शिवाजीके मनमें कोई द्वेष नहीं था, परन्तु मुगल जब दक्षिणकी हिन्दू-शक्तिको खर्व और दुर्बल करनेकी कोशिश करने लगे और बीजापुर भी उनके साथ शामिल हो गया, तो शिवाजी भी सावधान हो गये। शिवाजीका एक मात्र अन्तिम उद्देश्य हिन्दूस्वराज्य स्थापन करना था। भारतमें हिन्दू-शक्तिको अक्षुण्ण रखना ही होगा, हिन्दुस्थानसे हिन्दू जातिका अस्तित्व ही विलुप्त हो जाय, इसकी कल्पना करना भी शिवाजीके लिये असह्य था, परन्तु मुसल्मानोंने भी इसके लिये शपथ ले रखी थी। भारतमें जबसे उनका पदार्पण हुआ था, तबसे लेकर औरङ्गजेबके

समय तक वे बराबर हिन्दू-शक्तिको खर्व करनेकी चेष्टा करते रहे। उन्होंने सदा इस उदार नीतिको पददलित किया था। कोई मनस्वी हिन्दू इस नीतिको सहन नहीं कर सकता था। शिवाजीने भी सहन नहीं किया। उन्होंने हिन्दू जातिका विजय-कीर्तिको अमर रखनेके लिये स्वयं महाराष्ट्रमें कार्यारम्भ कर दिया था। उस समय यदि समस्त भारतके हिन्दू एक मत होकर शिवाजीकी सहायता करते, तो आज भारतका मानचित्र किसी और ही रूपमें दृष्टिगोचर होता। आज तक शिवाजीने मुगल-सम्राट्की मौखिक वश्यता स्वीकार की थी, धोखा देकर औरङ्गजेबने जिस समय शिवाजीको बन्दी कर लिया था—उस समय भी वे उसकी आंखोंमें धूल झोंककर जेलसे बाहर हो गये थे। कैदसे बाहरसे आकर शिवाजी जब महाराष्ट्रमें पहुंचे, तब भी उन्होंने औरङ्गजेबके पास सन्देश भेज कर कहा था कि यद्यपि तुमने राजनीतिको पददलित करके धोखेसे मुझे बन्दी कर लिया था, परन्तु मैं अपनी किसी गुप्त शक्तिसे बाहर हो गया और अब भी तुम्हारी वश्यता स्वीकार करता हूं। परन्तु पर-श्रीकातर औरङ्गजेबने तब भी उनकी स्वाधीनताको स्वीकार नहीं किया था। आगे भी कभी करेगा या नहीं—इसकी भी कोई सम्भावना नहीं थी। अन्तमें शिवाजी असह्य हो उठे—और यह सोचने लगे कि यदि किसी प्रकारसे बीजापुर और गोलकुण्डाको अपने साथ मिला कर तथा महाराष्ट्रके समस्त दुर्गोंको अपने राज्यसे युक्त कर सकूं, तो हमारी शक्ति अजेय हो जायगी। मुगल हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेंगे। वेदनूरसे तञ्जोर तक राज्य-स्थापन करनेके अतिरिक्त गोलकुण्डा और बीजापुरसे मैत्री करनी भी आवश्यक है। यही सोच कर शिवाजीने कर्नाटककी यात्रा करनेका विचार स्थिर किया। क्योंकि गोलकुण्डा भी मार्गमें पड़ता था। गोलकुण्डासे गुप्त-सन्धि करनाही इसका उद्देश्य था।

इसी गूढ़ अभिप्रायको लेकर शिवाजीने प्रचार किया कि क्योंकि तञ्जोरमें उनके वैमात्रेय-भ्राता-व्यङ्कोजी अकेले पिता-प्रदत्त जागीरका उपभोग कर कर रहे हैं, मेरा भी उसमें हक है, इसलिये उसे ही प्राप्त करनेके लिये मैं कर्नाटककी यात्रा कर रहा हूं। परन्तु वास्तवमें उद्देश्य था—गोलकुण्डासे गुप्त-सन्धि करना। बङ्गलौर, कोलवार, असकोट तथा मैशूर राज्यान्तर्गत और भी कितने ही स्थान व्यङ्कोजी के जागीरभुक्त थे। सब लोग इस बात को जानते भी थे। मुगलोंने भी इसका वही अर्थ लगाया जो शिवाजीने प्रचार किया था। इसके सिवा अपने राज्यकी रक्षाके लिये शिवाजीने मुगल-सेनापति बहादुर-खांसे भी सन्धि करनेका सङ्कल्प किया।

मुगल सेनापति बहादुरखां भी शिवाजीकी राजनीतिक बुद्धिके कारण कई बार विपद्में पड़ चुका था। निरन्तर युद्ध करते करते वह क्लान्त हो गया था—और सोचता था कि यदि शिवाजीसे किसी प्रकारसे सन्धि हो जाय, तो सुखकी नींद सोऊं। इसके अतिरिक्त बहादुरखांको भय था कि यदि मैंने राज्य-विस्तारके लिये निकट भविष्यमें बीजापुर या गोलकुण्डा पर आक्रमण किया तो शिवाजी उन लोगोंकी ओर होकर हमारा विध्वंस कर देंगे, इसलिये भी वह शिवाजीसे सन्धि करनेके लिये उतावला हो रहा था। इसी समय जब शिवाजीने अपने दूत द्वारा सन्धिका संदेश भेजा तो—बहादुरखांने सादर उसे स्वीकार कर लिया। शिवाजीको जब स्वीकृतिका पता लगा तो उन्होंने अपने प्रधान विचारपति नीराजीको बहुतसी उपहारकी वस्तुयें देकर बहादुरखांके पास भेजा। बहादुरखांने अपनी उपहारकी वस्तुयें तो गुप्त रूपसे लीं—और सम्राट्के लिये जो उपहार भेजा गया था, उसको सब लोगोंके सामने ग्रहण किया और शिवाजीसे सन्धि हो जानेकी घोषणा कर दी। इधर गोलकुण्डासे भी रघुनाथ जी द्वारा सन्धिकी

बातचीत गुप्त रूपसे हो रही थी। शिवाजीने प्रस्ताव किया था—कि यदि कर्नाटक-यात्रामें गोलकुण्डा भी अपने कुछ सैनिक हमको दे तो लूटे हुए मालमेंसे कुछ अंश उसको दिया जायगा। वहांके शाहने इस बातको स्वीकार कर लिया।

इसके बाद शिवाजीने हैदराबादस्थित अपने महाराष्ट्र राजदूत नीराजी को सम्वाद भेजा कि वह—हैदराबादके कुतुबशाह अब्बुहुसेनसे उनकी भेंट करानेका प्रबन्ध करे। क्योंकि कर्नाटक-यात्रा करते समय पहला पड़ाव शिवाजीका हैदराबादमें होगा। जब यह संदेश कुतुबशाहको मिला, तब पहले तो वह बड़ा भयभीत हुआ। क्योंकि वह जानता था कि जिस वीरवरने महापराक्रमी अफजलखांको मार डाला, राजनीतिज्ञ सायस्ता-खांकी उसीके शिवरमें जाकर उङ्गलो काट डाली,—जो मुगलोंके सङ्गीन कैदखानेसे भाग निकला, उस दैव बलसे बलियान व्यक्तिके साथ साक्षात्कार करना सरल बात नहीं है। किन्तु शिवाजीके राजदूत और शाहके प्रधान मन्त्रीके समझाने बुझाने पर कुतुबशाहका भय दूर हुआ—उसने शिवाजीसे भेंट करना स्वीकार कर लिया।

सन १६७७ ईस्वीके जनवरी मासमें कर्नाटकके लिये शिवाजीने रायगढ़से प्रस्थान किया। इतिहासकार मि० ग्रेने लिखा है कि शिवाजीके साथ इस समय बीस हजार अश्वारोही—और ४० हजार पदातिक सैनिक थे। इतिहासकार डिग साहेबने अश्वारोही सैनिकोंकी संख्या पचीस हजार लिखी है। जो कुछ भी हो—हैदराबाद पहुंच कर शिवाजीने अपने सैनिकोंके लिये यह आज्ञा प्रचारित की कि बिना मूल्य हमारा कोई सैनिक किसी दूकानदारसे कोई चीज न ले, कोई भी सैनिक किसी नगरनिवासी पर किसी प्रकारका बल-प्रयोग न करे। यदि इसके विरुद्ध कोई आचरण करेगा—तो उसको उपयुक्त दण्ड दिया जायगा। अपने सैनिकों पर शिवाजीका अद्भुत प्रभाव

था । किसीने उनके आदेशकी अवज्ञा नहीं की । फरवरीमें शिवाजी सदल-बल हैदराबाद पहुंचे । वहांके कुतुबशाहने शिवाजीके आगमनका सम्बाद सुनकर उनकी अगवानी करनेके लिये शहरसे बाहर जानेका विचार प्रकट किया, किन्तु बुद्धिमान् शिवाजीने पहलेसे ही कहला भेजा था कि कुतुबशाह तो मेरे भाईके समान हैं, उनको अगवानीके लिये आनेकी जरूरत नहीं है । मैं स्वयं उनकी सेवामें उपस्थित हो जाऊंगा । शिवाजीके इस सन्देशको सुनकर कुतुबशाह बहुत प्रसन्न हुआ और उसने अपने मन्त्री मदन्नापन्थ एवं अकन्नापन्थ और अन्यान्य प्रधान कर्मचारियोंको शिवाजीके स्वागतके लिये भेजा ।

छत्रपति शिवाजीके स्वागत-समारोहके लिये समस्त हैदराबादके नगर-हाट, बाजार सजाये गये थे । राजा और प्रजा दोनोंने दिल खोल कर शिवाजीका स्वागत किया । समस्त नगर तोरण और बन्दरवारोंसे सजाया गया था । जिस समय शिवाजी अपने मराठा और मावला सैनिकोंके साथ लिये हुए नगरमें प्रविष्ट हुए—उस समयकी अभूत पूर्व शोभा देखते ही बनती थी । शिवाजीके सभी सैनिक और उनके नायक बहुमूल्य वस्त्राभूषणों एवं शास्त्रास्त्रोंसे सजे हुए थे । सड़कों और मकानों पर दर्शक नर-नारियोंकी भीड़ लगी हुई थी । मुगलों और बीजापुरी सेनाओंको कदली-वृक्षकी तरहसे मार-काटकर विजय-पताका फहराने वाले शिवाजीके वही वीर सैनिक अपने वीरत्व मण्डित-मस्तकोंकी ओर हैदराबाद वासियोंका ध्यान आकर्षित करा रहे थे । नेताजी पालकर, सूर्याजी मालसूरे, जैसाजी कङ्क, सोनाजी नायक, हमीरराव और मोहित प्रभृति वीरगण, जिनकी वीरताकी कहानी गाँव गांवमें सुनी जाती थी—आज साक्षात् हैदराबाद निवासियोंको दर्शन देकर कृतार्थ कर रहे थे । रघुनाथ, जनार्दन, नारायण, हनुमन्त, प्रह्लाद, नीराजी प्रभृति महाराष्ट्र ब्राह्मणोंकी सूक्ष्म बुद्धि और

प्रतिभा परिचायक ललाट, एवं वक्र नासिका, दृढ़ प्रतिज्ञा-व्यञ्जक चक्षु और दीर्घभुज द्वय—विस्मय उत्पादन कर रहे थे। जिस समय शिवाजी अपने घोड़े पर सवार होकर आगे आगे जा रहे थे, उस समय समस्त नगर, छत्रपति शिवाजीकी जयध्वनिसे गूञ्ज रहा था। महलों और अट्टालिकाओंकी खिड़कियोंमें बैठी हुई कुल-कामिनियां रजत और स्वर्ण निर्मित पुष्पोंकी वर्षा कर रही थीं। मार्गमें जगह जगह चिर प्रचलित प्रथाके अनुसार सौभाग्यवती कुल-कामिनियां शिवाजी की पञ्च-प्रदीप लेकर आरती उतारती जाती थीं। शिवाजी भी असंख्य धन देकर भिक्षुकों और राज-कर्मचारियोंको सन्तुष्ट कर रहे थे।

जिस समय शिवाजी राज-भवनके तोरण-द्वार पर पहुंचे, उस समय राजकीय वाद्य-यन्त्रों द्वारा उनका स्वागत किया गया। इसके बाद शिवाजी अपने पांच प्रधान राज-कर्मचारियोंको साथ लेकर राज-सभामें प्रविष्ठ हुए। सुल्तानने राजसिंहासन परसे उठकर शिवाजीका अभिनन्दन किया--और उनको अपने साथ राज-सिंहासन पर बैठाया। प्रधानमन्त्री मदन्नापन्थ भी साथ ही बैठे और अन्यान्य कर्मचारी गण खड़े रहे। शिवाजीसे बहुत देर तक सुल्तानका वार्तालाप होता रहा। सुल्तानके आग्रह करने पर शिवाजीने जब अफजलखांकी हत्या, सायस्ताखांका अपमान, मुगल सम्राट्से उसकी राजसभामें वादानुवाद, सङ्गीन पहरे वालोंकी आंखोंमें धूल झोंक कर आगराकी कैदसे पलायन, सूरतकी लूट एवं अन्यान्य पर्वतीय दुर्गों पर अधिकार करनेकी बात कहनी आरम्भ की, तो विलासितापरायण कुतुबशाह निस्पन्द विस्फारित नेत्रोंसे शिवाजीकी ओर देखने लगा। सुल्तानने सोचा कि किसी दैव-बलसे बलियान होकर ही शिवाजीने ये असम्भव कार्य सम्पन्न किये हैं। इसके बाद सुल्तानने शिवाजी और उनके प्रधान कर्मचारियोंको बहुमूल्य वस्तुयें भेंट देकर सम्मानित

किया । मुसलमान प्रथाके अनुसार सुल्तानने शिवाजीको पान और इत्र प्रदान कर उसी समय बिदा किया । शिवाजी वहांसे बिदा होकर अपने शिविरमें पहुंचे और सुल्तान भी निश्चिन्त हुआ । सुल्तानने भी समझ लिया कि शिवाजीका कोई बुरा अभिप्राय नहीं है, अतःसन्धि-सूत्रमें आवद्ध होना किसी प्रकार भयावह नहीं । अगले दिन प्रधान-मन्त्रीमदन्नापन्थने—शिवाजी और उनके प्रधान कर्मचारियोंको भोज दिया । बड़े समारोहसे भोजनका कार्य सम्पन्न किया गया मदन्ना-पन्थ और अकन्नापन्थने स्वागत समारोहसे शिवाजी और उनके कर्मचारियोंको परम सन्तुष्ट कर दिया ।

इसके बाद सुल्तानने शिवाजीकी उदारता एवं शिष्टाचारसे प्रसन्न होकर उनकी सभी शर्तें स्वीकार कर लीं । पांच हजार सैनिक तथा मासिक व्ययके लिये साढ़े चार हजार रुपया मासिक देनेकी आज्ञा प्रधान मन्त्रीको दी गई । इसके परिवतनमें शिवाजीने कर्नाटकके कई स्थान सुल्तानको देने स्वीकार किये । इसी समय मिल कर मुगलोंसे मुठभेड़ करनेकी बात भी दुहराई गई । यह निश्चय हुआ कि यदि मुगल-गोलकुण्डा पर आक्रमण करें—तो शिवाजी गोलकुण्डाका पक्ष लेकर मुगलोंसे युद्ध करेंगे—और गोलकुण्डा राज्य इसके परिवर्तनमें शिवाजीको प्रति वर्ष पांच लाख रुपया प्रदान करेगा ।

सन्धि हो जाने पर सुल्तानने शिवाजीसे एक दिन भेंट कर अनेक रत्नालंकार एवं मणि-माणिक्य देकर सम्मानित किया और उनके घोड़े तकको स्वर्ण-निर्मित बहुमूल्य हार पहनाया । इसी प्रकारसे एक दिन सुल्तानके प्रधान राज-कर्मचारियोंने शिवाजी एवं उनके प्रधान कर्मचारियोंको भोज दिया—और उनके साथ ही आमोद-प्रमोदके लिये एक क्रीड़ा-क्षेत्र बनाया गया । क्रीड़ा-क्षेत्रमें सुल्तानने एक र काण्ड हस्तीके साथ मावला सेनापति जेसाजी कंकका द्वंद-

युद्ध होना निश्चय हुआ। यथा समय युद्ध आरम्भ हुआ। सुल्तानके प्रकाण्ड हस्तीने जेसाजी कंक पर प्रचण्ड वेगसे आक्रमण किया। जेसाजीने इसके आक्रमणको बचा कर इसकी सूण्ड पर तलवारका एक ऐसा हाथ जमा कर मारा—कि हस्तीकी सूंड खण्ड खण्ड हो कर भूमि पर गिर पड़ी और हस्ती चीत्कार करता हुआ भाग खड़ा हुआ। सुल्तान कुतुबशाह भी इस दृश्यको देख रहे थे। इस भीषण व्यापारको देखकर सुल्तानने शिवाजीसे पूछा कि उनके पास जेसाजी कंक जैसे और कितने हस्ती हैं ? सुल्तानकी बात सुनकर शिवाजीने मावला सैनिकोंको मार्च करनेकी आज्ञा दी। क्रमबद्ध होकर जब मावला सैनिक गण—चलने लगे, तो शिवाजीने उनकी ओर संकेत-कर सुल्तानसेकहा—"ठहरिये, देखिये यही सब मेरे हस्ती हैं !" इसी प्रकारसे हैदराबादमें एक मास तक ठहर कर शिवाजी आमोद-प्रमोद देखते रहे।

इसके बाद यथासमय शिवाजीने हैदराबादसे प्रस्थान कर कृष्णा-नदीकी ओर प्रस्थान किया। एवं निवृत्ति-सङ्गम नामक स्थानसे होकर नदीको पार किया। निवृत्ति-सङ्गम हिन्दू जातिका परम पवित्र तीर्थ स्थान है। यहां स्नानादिसे निवृत्त होकर शिवाजी श्रीशैलमें उपस्थित हुए। श्रीशैल मद्रास प्रेसीडेन्सी कर्नूल जिलामें अवस्थित है। भारतके किसी भी तीर्थपर ऐसे सुन्दर घाट और सुदृढ़ प्राचीर एवं रम्य मन्दिर दृष्टिगोचर नहीं होते और विजयनगरके अज्ञात राजा-रानियों द्वारा निर्मित उनके राज-भवनोंकी तो तुलना ही नहीं हो सकती। बहुत कालसे तीर्थ-यात्री गण यहां आकर मल्लिकार्जुन नामक महादेव-का दर्शन कर कृतार्थ होते हैं। महादेवका मन्दिर पर्वत पर निर्मित है। इस स्थानकी मनोरमता देखते ही बनती है। श्रीशैल पर्वतके पाद-प्रदेशको प्रधौत करती हुई कृष्णानदी भीम-रवसे समुद्रकी ओर धावित

हो रही है। प्रकाण्ड-सुदृढ़ प्राचीर सुदृढ़-प्रस्तर द्वारा निर्मित होकर मन्दिरकी रक्षा कर रही है। इस दीर्घ प्राचीर पर अनेक पौराणिक घटनाओंके चित्र अङ्कित हैं। कहीं सिंह, हस्ती, अश्व प्रभृति पशुगण संग्राममें मत्त हैं, कहीं योगीगण गम्भीर समाधि लगा कर ध्यानमें मग्न हैं। शिवाजीने इस स्थान पर दश दिन व्यतीत किये। मन्दिरकी अनुपम शोभा, प्रकृतिके मनोरम दृश्यों एवं देवताके पुण्य-प्रभावसे शिवाजीके अन्तर्भाव जाग्रत हो उठे। वे सम्पद, ऐश्वर्य, हिन्दूराजत्व स्थापनकी चेष्टा, कर्नाटक-अभियान प्रभृति सभी बातोंको भूलकर पूजा-पाठमें मग्न रहने लगे। शिवाजीके चरित्रमें यही विशेषता थी। वे अपने बाहू-बलसे राजा हुए थे, किन्तु राजत्वके भोग-विलासने उनके चित्त पर अधिकार नहीं किया था। शिवाजीने सम्मान-गौरवका अत्युच्च आसन ग्रहण करके भी धर्मको बिस्मरण नहीं किया था। समय उपस्थित होनेपर यद्यपि शिवाजीको वस्त्रालङ्कार और मणि-माणिक्य धारण करने पड़ते थे, परन्तु रामदास स्वामी-प्रदत्त-मन्त्रके प्रभावसे भी कभी वञ्चित न होते थे। सभी राज-कार्यों, गौरव-प्राप्त करनेके अवसरों तथा शौर्य-वीर्य प्रदर्शन करनेके समयोंपर गुरु-प्रदत्त अमर-मन्त्र उनको धर्म-पथ पर परिचालित करता था। सुतरां श्रीशैलके प्रकृित परिनिर्मित मनोरम दृश्यों एवं देवताके पुण्य-प्रभावसे प्रेरित होकर शिवाजी सब बातको भूल गये। केवल धर्म याद रहा और उसी पर बलिदान हो जानेके लिये मियानसे तल्वार तक निकाल ली। शिवाजीके प्रधान राज-कर्मचारियोंको जब उनके सङ्कल्पका पता लगा; तो उन्होंने बड़ी कठिनतासे शिवाजीको आत्म-हत्या करनेसे नीरस्त किया। उन लोगोंने करबद्ध होकर कहा,—"महाराज; आप यह क्या करने लगे हैं। जिस कार्यको सम्पन्न करनेके लिये आपने तल्वार उठाई थी, क्या वह सम्पन्न हो गया? भारतको समस्त हिन्दू जाति

आपकी ओर टक-टकी लगाये देख रही है।" राज-कर्मचारियोंकी प्रार्थना सुनकर शिवाजीने तलवार मियानमें रख ली और भवानीका ध्यान कर मन्त्रीवर्गको आज्ञा दी कि यहां पर एक धर्मशाला एवं एक घाट हमारी ओरसे बनवाया जाय। इसके बाद एक लाख ब्राह्मणोंको भोजन करवाया गया।

इसके बाद शिवाजी यहांसे प्रस्थान कर कर्नाटक पहुंचे। मन्त्री रघुनाथजीके प्रभावसे अनेक जागीरदारोंने स्वयं ही शिवाजीकी वश्यता स्वीकार कर ली। इसके अनन्तर दश सहस्त्र अश्वारोहियोंको लेकर शिवाजी जिञ्जिर नामक दुर्गके पास पहुंचे, तो दुर्गाध्यक्षोंने स्वयं भीत होकर आत्मसमर्पण कर दिया और दुर्ग शिवाजीके हाथमें आ गया। इसके पश्चात् मेलोर और तिरुभेद नामक दुर्गों पर शिवाजीने अधिकार किया। इन दुर्गोंपर अधिकार करते समय शिवाजीको घोर युद्ध करना पड़ा। अन्तमें पराजित होकर मदुराके राजदूतने आकर उनसे भेंट की। उससे शिवाजीने एक करोड़ रुपये मांगे। उसके अस्वीकार करनेपर शिवाजीने मन्त्री रघुनाथजीको मदुराके राजाके पास भेजा। राजाने ३० लाख रुपये देने स्वीकार किये। इसी समय शिवाजीका व्यङ्कोजीसे पत्र-व्यवहार होने लगा। व्यङ्कोजीने अपने मन्त्रियोंको शिवाजीके निकट भेजकर उनका मतामत जानना चाहा। व्यङ्कोजी शिवाजीसे भेंट करनेसे भयभीत थे, परन्तु उनके मन्त्रियोंने जब उनको अश्वासन दिया, व्यङ्कोजीके मनका भय दूर हो गया।

शिवाजीने व्यङ्कोजीको पत्रमें लिखा कि तुम जिस जागीरका उपभोग करते रहे हो, उसमें मेरा भाग भी है। सो तुम गोविन्द भाट, काकाजी पन्थ, नीलो नायक, एवं तोपाजी और रघुनाथ नायकको मेरे पास भेजो—जिनसे मैं हिसाब-किताबके सम्बन्धमें बातें करना चाहता हूं। व्यङ्कोजी इसके विरुद्ध थे। उनका कहना था कि यह

सम्पत्ति पैतृक सम्पत्ति नहीं, प्रत्युत्त बीजापुर राज्यसे उनको मिली हुई है । शिवाजीने उत्तरमें लिख भेजा कि हमारे पिता स्वाधीन राजा थे, यह सम्पत्ति सब उनकी है और बीजापुरका तो इसपर नाम-मात्रका अधिकार था । क्योंकि पिता साहाजीके परलोकगमनके बाद बिना मुझसे पूछे ही बीजापुरने यह हमारी यह समस्त पैत्रिक सम्पत्ति तुमको दे दी थी, जिसमें मेरा भी भाग था । शिवाजीका उत्तर पाकर व्यङ्कोंजीने सोचा कि इस विषयकी मीमांसा शिवाजीसे मिलकर कर लेनी ही उचित होगी । सुतरां दो हजार अश्वारोही सैनिकोंको साथ लेकर व्यङ्कोंजी शिवाजीके शिविरमें पहुंचे । शिवाजीने कनिष्ट भ्राता व्यङ्कोजीका सादर स्वागत किया । व्यङ्कोजी भी महाप्रतापी ज्येष्ठ बन्धु शिवाजीसे आदर-सत्कार प्राप्त कर आप्यायित हुए । एक सप्ताह इसी प्रकारसे आमोद-प्रमोदमें व्यतीत हो गया । इसके बाद शिवाजी ने व्यङ्कोजीसे कहा कि पिता-प्रदत्त जिस जागीरका वे इतने दिनोंसे उपभोग कर रहे हैं—उसका तीन चतुर्थान्श हमको दो और एक चतुर्थान्शका तुम उपभोग करो । व्यङ्कोंजीको यह बात पसन्द नहीं आई । सुतरां रात्रिको ही एक दिन पांच सैनिकोंको साथ लेकर वे तञ्जोर भाग गये ।

प्रातःकाल उठ कर शिवाजीको जब यह बात मालूम हुई कि व्यङ्कोजी भाग गये, तो उन्होंने व्यङ्कोजीके मन्त्रियोंको बन्दी कर लिया और जनार्दन नारायण हनुमन्तको तञ्जोरपर आक्रमण करनेके लिये भेजते हैं, कह कर भय-प्रदर्शन किया । वास्तवमें व्यङ्कोंजीके पलायन करनेका कोई कारण भी नहीं था । क्योंकि शिवाजी तो पहले ही उनके मन्त्रियोंसे प्रतिज्ञा कर चुके थे । परन्तु शिवाजीको छोटे भाईके इस व्यवहारसे बड़ी ग्लानि हुई और उन्होंने उत्तेजित होकर राजसभामें कहा कि,—"क्या मैं व्यङ्कोंजीको कैद करने आया

हूं ? मैंने जो कुछ किया है—अपने बाहू-बलसे किया है। जिस पैत्रिक सम्पत्तिका व्यङ्कोजी उपभोग कर रहे हैं, पैत्रिक सम्पत्ति होनेके कारण मेरा भी उसमें भाग है, यही मैंने मांगा था। व्यङ्कोजीकी इच्छा उसे नहीं देनेकी थी, तो क्या मैं उसे बलपूर्वक छीनता था ? मैं व्यङ्कोजीका बड़ा भाई हूं—उनको सन्मार्ग पर चलाना मेरा धर्म है, ऐसी दशामें मैंने जो कुछ कहा था, उसपर उन्हें बुद्धिमानीसे बिचार करना चाहिये था। इस प्रकारसे रातो-रात यहांसे पलायन करके व्यङ्कोजीने बालकों जैसा काम किया है।" इसके बाद शिवाजीने व्यङ्कोंजीके समस्त बन्दी मन्त्रियोंको छोड़ दिया और बहुमूल्य बस्तुयें उपहारमें देकर बिदा किया। स्वयं भी शिवाजी वहांसे चल पड़े तथा कोलरिन-नदी तटस्थ कर्नाटक प्रदेश पर युद्ध करके अधिकार कर लिया। वहां जागीरदारोंने परास्त होकर शिवाजीकी वश्यता स्वीकार कर ली।

बीसवां-परिच्छेद ।

शिवाजीकी–उदारता ।

सन् १६७७ ईस्वीके जुलाई मासमें शिवाजीने मेलोर-नदीको पार कर अपनी सेनाको तो दलत्रानेश्वर भेज दिया और स्वयं अपने कुछ साथियोंको लेकर वहांसे १६ मीलकी दूरी पर उत्तर-पूर्व वृन्द्धाचलममें उपस्थित हुए। यहां बहुत प्राचीन कालसे एक शिव-मन्दिर बना हुआ है। सर्व प्रथम यहां शिवाजीने महादेवजीका पूजन किया और अनेक ब्राह्मणोंको भोजन कराया। २२ सितम्बरको वानियम-बाड़ी पहुंच कर शिवाजीने मद्रास स्थित अंग्रेज शासनकर्त्ताको एक पत्र लिखा। पत्रमें लिखा था कि, "यदि तुम्हारे पास २०।२५ सुदक्ष इञ्जीनियर हों, तो मेरे पास भेजो। कर्नाटकमें बहुतसे दुर्ग निर्माण कराना चाहता हूं। इञ्जीनियरोंको उचित वेतनादि मैं दूंगा। अंग्रेज शिवाजीसे पहले से ही भयभीत थे। सुतरां मद्रासके शासनकर्ता अंग्रेजने लिख भेजा कि हम तो यहां पर केवल वणिक वृत्ति करते है—किसीका पक्ष लेकर उसके काममें सहायक होना न्यायत: पक्षपात होता, इसलिये आपके इस काममें सहायता नहीं दे सकते। इसके बाद यहांसे प्रस्थान कर शिवाजीने पोर्टनामो नामक स्थानपर आक्रमण कर उसे लूट लिया और आरकट नामक स्थान पर अधिकार कर लिया। अक्तूबरमें अणि और उत्तर आरकोटके दुर्गों पर भी शिवाजीने अधिकार कर लिया।

इस सन्के नवम्बर मासमें यहांसे प्रस्थान कर शिवाजीने चार

हजार अश्वारोहियोंको साथ लेकर कर्नाटकका परित्याग किया । कर्नाटक परित्याग करते समय कोलर, उसकोट, बङ्गलौर, बालापुर एवं सेरा पर भी शिवाजीका अधिकार हो गया था । इसके बाद वेलारी और धारावाड़-प्रदेश होते हुए मराठा सैनिकोंने बेलोर दुर्ग पर अधिकार किया । इस दुर्ग पर अधिकार करनेके लिये दुर्गाध्यक्ष अब्दुल्लाखांसे शिवाजीकी सेनाको १८ मास तक लगातार युद्ध करना पड़ा । अन्तमें अपनी शक्ति क्षीण होते देख अब्दुल्लाखांने आत्म-समर्पण कर दिया । शिवाजीके सेना-नायकोंने दुर्ग अधिकारमें दे देनेके उपलक्ष्यमें अढ़ाई लाख रुपया उपहार प्रदान किया । कर्नाटककी इस यात्रामें प्रायः एकसौ दुर्गों पर शिवाजीका अधिकार स्थापित हुआ—और वार्षिक एक करोड़ रुपयेको आयका प्रदेश उनके हस्तगत हुआ । अंग्रेज-इतिहासकारोंका कहना है कि इस यात्रामें शिवाजीको किसी प्रकारका कष्ट नहीं उठाना पड़ा—न किसी प्रकारकी क्षति ही हुई । कर्नाटकसे प्रस्थान करते समय शिवाजीने सम्भाजीको वहांके शासनकर्त्ताके पद पर अधिष्ठित किया—और रघुनाथनारायण हनुमन्तको सम्भाजीका मन्त्री पद प्रदान किया । इसी प्रकारसे मैशूर के अधिकृत प्रदेशका शासनकर्त्ता रङ्गनारायणको बनाया । किन्तु समस्त दुर्गों पर अपना ही आधिपत्य रखा और जिञ्जि के शासनकर्त्ता पर इन समस्त दुर्गोंका भार सौंपा गया ।

इधर व्यङ्कोजी, तंजोर वापस आकर मदुरा और मैशूरके जागीरदारोंसे मिलकर शिवाजीके विरुद्ध षड्यन्त्र रचने लगे । यही क्यों बल्कि उन्होंने बीजापुर एवं अपने आस-पासके मुसलमान जागीरदारों तकसे सहायता करनेकी प्रार्थना की । परन्तु इनमेंसे किसीने भी सहायता देनी स्वीकार नहीं की । अन्तमें व्यङ्कोजीने चार हजार अश्वारोही—और दश हजार पदातिक सैनिकोंको लेकर सम्भाजीपर

आक्रमण कर दिया। व्यङ्कोजीने प्रातःकालसे लेकर सन्ध्यातक अक्लान्त भावसे सम्भाजीके साथ घोर युद्ध किया। अन्तमें सम्भाजीको परास्त होकर पलायन करना पड़ा। व्यङ्कोजीके सैनिकोंने एक मील तक सम्भाजीका पीछा किया और उनको भगा कर अपने शिविरमें लौट आये। सम्भाजो व्यङ्कोजीसे पराजित होकर बहुत लज्जित हुए। उन्होंने रात्रिमें अपने मन्त्रियोंसे परामर्श कर व्यङ्कोजीपर आक्रमण किया। व्यङ्कोजीके सैनिक थके-मान्दे गम्भीर निद्रामें पड़े सो रहे थे। इसी समय सम्भाजीके सैनिकोंने उन पर छापा मारा—और बातकी बातमें हजारों सैनिकोंको मार डाला। शेष जो बचे थे, जान बजाकर तंजौर की ओर भाग पड़े। सम्भाजीको इस विषयमें एक हजार घोड़े और बहुतसा सामान मिला। सम्भाजीने इसके बाद जब व्यङ्कोजीका पीछा किया तो व्यङ्कोजीने सन्धिका प्रस्ताव किया। रघुनाथ हनुमन्तजीकी मध्यस्थतामें सम्भाजीकी व्यङ्कोजीके साथ सन्धि हो गई। इसके बाद एक वर्ष तक कर्नाटक-प्रदेशके अधिकृत प्रदेश पर अधिकार रख कर समस्त प्रदेश व्यङ्कोजीको समर्पण कर दिया। जो यह समझते थे कि शिवाजो मेरे शत्रु हैं, प्रतिद्वन्दी हैं, मेरा राज्य छीनना चाहते है, उनहींकी इस उदारताको देख कर व्यङ्कोजीकी आंखें खुल गईं। मनमें जो विकार उत्पन्न हो गया था—वह दूर हो गया। व्यंकोजीने ज्येष्ठ भ्राताके इस उदार व्यवहारसे प्रसन्न होकर हिन्दू साम्राज्य-स्थापन करनेके काममें सहायता देनेके लिये शिवाजीको पन्द्रह लाख रुपये प्रदान किये। व्यंकोजीका झगड़ा तय हो गया। परन्तु कर्नाटकके समस्त अधिकृत दुर्गों पर शिवाजीने सैनिक-दृष्टिसे अपना ही अधिकार रखा। इसी समय शिवाजीसे हमीरराव आ मिले। शिवाजीने दश हजार अश्वारोही सैनिकोंको साथ भेज कर रघुनाथजी को फिरसे व्यंकोजीका मन्त्रीपद ग्रहण करनेका आदेश दिया। फिर

रघुनाथजी व्यंकोजीके मन्त्री होकर तंजोरमें रहने लगे। परन्तु स्वाधीन प्रकृतिके होनेके कारण रघुनाथजी कभी कभी ऐसे कार्य भी कर डालते थे, जो व्यंकोजीकी सम्मतिमें ठीक नहीं होते थे। इसपर दोनोंमें विवाद उपस्थित हो जाता। परन्तु दोनों शिवाजीसे डरते रहते थे। अन्तमें रघुनाथजीने व्यंकोजीको ही कर्नाटकका प्रकृत राजा समझ कर उनकी ही इच्छानुसार कार्य करना आरम्भ कर दिया।

शिवाजी कर्नाटकको विजय कर मैशूरमें उपस्थित हुए। उनके इस आश्चर्य-कृतित्व और सफलता प्राप्तिसे समस्त देशमें उनके वीरत्वकी चर्चा होने लगी। मद्रासले लेकर मैशूर तक जितने स्थान शिवाजीके मार्गमें आये—सब शिवाजीके अधिकारमें आ गये। सेरा, कोपाल, गडन, मनगण्ड, वाख्यांपुरको होते हुए शिवाजी बेलगांवमें उपस्थित हुए। जब वहां शिवाजीकी सेना जा रही थी, रास्तेमें बिल्लारी की रानी सावित्रीबाईने शिवाजीके सैनिकोंसे बलपूर्वक सैनिक-सामान छीन लिया। सावित्रीबाईके इस कार्यसे रुष्ट होकर शिवाजीने सावित्रीबाईके राज्य पर आक्रमण किया। सावित्रीबाई वीर नारी थी। वह देश-विजयी शिवाजीके कोपसे जरा भी भयभीत नहीं हुई। उसने अपने अपरिसीम साहसका परिचय दिया। शिवाजीके आक्रमणको रोकनेके लिये सावित्रीबाईने चारों ओर मोर्चे लगा दिये—और स्वयं उनका सेनापतित्व करने लगी। तत्कालीन महावीर शिवाजी अपनी सेनाको लेकर उसके राज्य पर आक्रमण करने लगे। दोनों दलोंमें घोर-घमासान युद्ध हुआ। अन्तमें वीर-रमणी सावित्रीबाई स्वयं हाथमें तलवार लेकर मैदानमें आ डटी। शिवाजीकी सेनाने भीम-वेगसे सावित्रीबाईकी सेना पर आक्रमण किया। परन्तु वीर-रमणी सावित्रीबाई तनिक भी नहीं घबड़ाई, बल्कि तलवार हाथमें लेकर स्वयं दुर्गद्वारकी रक्षा करने लगी। परन्तु बहुत देर तक वह शिवाजीकी

असंख्य सेनाके सामने न टिक सकी। तब वह दुर्गके भीतर सेना सहित प्रवेश कर शिवाजीकी सेना पर भीषण गोलाबारी करने लगी। शिवाजीकी सेना भी मृगको चारों ओरसे घेर कर उस पर गोलियोंकी भीषण वृष्टि करने लगी। सत्ताईस दिन तक मुट्ठी भर सेना लेकर सावित्रीबाईने अतुल-विक्रमके साथ महावीर शिवाजीके असंख्य सैनिकोंके साथ घोर-संग्राम किया। सत्ताईसवें दिन वीर-रमणी सावित्रीबाईका भाग्यचक्र उलट गया। क्योंकि सत्ताईस दिनकी भीषण गोलाबारीसे दुर्गकी एक प्राचीर भग्न हो गई थी। रक्षाका कोई उपाय नहीं रहा था। शिवाजीकी वीर-सेना दुर्गके उसी ध्वंश हुए भागसे दुर्गमें घुसने लगी। रक्षाका अब कोई उपाय शेष न रहा। तब अन्तमें विवश हो सावित्रीबाईने शिवाजीको आत्म-समर्पण कर दिया। प्रसिद्ध बंगाली इतिहासज्ञ प्रो० यदुनाथ सरकारने लिखा है कि—"खेलवाड़ीकी पटेलनी-स्वामिनी एक वीर-रमणी जिसका नाम सावित्रीबाई था—अपने दुर्गमें मुट्ठी भर सैनिकोंको लेकर एक मास तक शिवाजीकी वीर-वाहिनी सेनाके साथ लड़ी थी। जब रसद और युद्धका सामान समाप्त होने लगा, तो शिवाजीके दुर्ग पर घेरा डालने वाले सैनिकों पर आक्रमण कर उनकी मोर्चेबन्दीको तोड़-फोड़ दिया। शिवाजीके अनेक सैनिकोंको मार डाला। अन्तिम दिन सावित्रीबाईने ऐसी वीरता प्रकट की कि ऐसा मालूम होता था कि वह अब क्षण भरमें शिवाजीकी सेनाको परास्त कर भगा देगी। परन्तु दुर्भाग्यसे वह और अधिक न ठहर सकी। भागी और पकड़ी गई। साकूजी गायकवाड़ेने उसे पकड़ा और उसकी बहुत बेइज्जती की। शिवाजीको जब उसके इस दुष्कर्मका पता लगा, तो उन्होंने गायकवाड़ेको जन्म भरके लिये मनौली गांवमें कैद कर दिया—और दण्डस्वरूप दोनों आंखें निकलवा डालीं !" अस्तु जो कुछ भी हो—सावित्रीबाईकी वीरता

चिर-स्मरणीय है—और शिवाजीके इतिहासके साथ उसका निगूढ़ सम्बन्ध है। गायकवाड़को सजा देकर शिवाजीने जो सच्चरित्रताका उदाहरण अपने सैनिकोंके सामने रखा, उसका उदाहरण संसारके इतिहासमें आज भी कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। जो लोग हिन्दुओंको इस बातका उपदेश देनेका दम भरते हैं कि वे महिलाओंके सम्मानकी रक्षा करना सीखें—वे जरा आंखें खोल कर शिवाजीके समयके भारतके इतिहासके पृष्ठोंको उलट-पलट कर देखें कि जिस समय हमारे स्त्री-सम्मान-रक्षाके उपदेशक, केवल वणिक्वृत्ति द्वारा भारतमें अपना जाल बिछा रहे थे, उस समय भी हमारे यहां स्त्रियोंकी सम्मान-रक्षाको इतना महत्व दिया जाता था। सभ्य सरकारें एडमिनिटी बिल बना कर आज भी अपने सैनिक-अफसरोंको चाहे वे कितना ही भारी गुरुतर अपराध क्यों न करें—क्षमा कर देती हैं! न्याय मांगनेका मार्ग तक अवरुद्ध कर देती हैं! परन्तु हमारे देशमें तो आजसे तीन सौ वर्ष पहले एक भी स्त्रियोंकी सम्मान-रक्षाके लिये सेनापतियोंकी आंखें तक निकलवा दी जाती थीं! जन्म भरके लिये जेलोंमें बन्द कर दिया जाता था।

अस्तु, सावित्रीबाईका अपमान करने वालोंको दण्ड देकर शिवाजीने सावित्रीबाईकी वीरताकी भूरि भूरि प्रशंसा की—और उसका अधिकृत प्रदेश तथा दुर्ग सादर उसको दे दिया। महाराष्ट्रकी विजय-पताका उसपर नहीं फहराई। सावित्रीबाईकी स्वाधीनताको हरण नहीं किया गया। वीर शिवाजीने वीराङ्गना सावित्रीबाईकी वीरताका पुरस्कार उसको दे दिया।

यहांसे बिदा होकर शिवाजी जिस समय स्वदेशको लौट रहे थे, उसी समय और एक घटना घटित हुई। जमसीदखां बहलोलखांकी मृत्यु हो जाने पर बीजापुरके राज-काजका परिचालन करता था।

उसने शिवाजीके पास लिख भेजा कि मैं बीजापुरके राज-कार्य परिचालनमें असमर्थ हूं, यदि आप कृपा कर इसे सम्भाल लें तो मैं बीजापुर-दुर्ग एवं अल्प वयस्क बालक नवाबको आपके हाथोंमें समर्पण करनेको तैयार हूं। परन्तु परिवर्तनमें मुझे छः लाख पैगोडा (उस समयकी प्रचलित मुद्रा) देना होगा। शिवाजीने इस बातको स्वीकार कर लिया, परन्तु सिदी मामूदको जब इस बातका पता लगा, तो उसने इस बातका प्रचार कर दिया कि मैं बीमार हूं। दो चार ही दिनके बाद यह सम्वाद नगर भरमें फैल गया कि सिदीकी मृत्यु हो गई। इस सम्वादसे क्षुब्ध होकर उसकी कुछ सेना तो अट्टालिनीकी ओर चली गई—और शेष चार हजार सैनिकोंने जमसीदखांकी अधीनता स्वीकार कर ली। जमसीदखांने उन सैनिकोंको दुर्ग-रक्षाके काम पर नियुक्त कर दिया। परन्तु इस सेनाने जमसीदखांको ही बन्दी करके किलेके द्वारको खोल दिया। इस पर सिदी मामूदने दुर्ग पर अधिकार कर लिया। शिवाजी बीजापुरकी ओर बढ़ रहे थे, जब उन्हें यह समाचार मिला, तो वे लज्जित होकर सन् १६७९ के अप्रैल मासमें पनहलाको लौट आये।

इधर शिवाजीकी अनुपस्थितिमें शिवाजीके प्रधान कर्मचारी भी हाथ पर हाथ रखे नहीं बैठे रहे। शिवाजीके पुत्र सम्भाजीने बीचमें गोवाके निकटस्थ पोर्चुगीजोंके कई ग्रामोंपर अधिकार कर लिया था। सम्भाजीका कहना था कि पण्डा-दुर्ग शिवाजीके अधीन है इसलिये पोर्चुगीजोंके ६० ग्राम भी पण्डा-दुर्गके अधीन हैं। सुतरां इनके प्रकृत स्वत्वाधिकारी मराठा ही हैं। परन्तु पोर्चुगीज़ोंने इस मांगको स्वीकार नहीं किया। सम्भाजीने पोर्चुगीज़ोंपर आक्रमण किया, परन्तु विजय प्राप्त नहीं हुई। इसी समय मोरोपन्थ त्रयम्बकने मुगलोंके अधिकृत प्रदेश नासिक आदिपर आक्रमण कर असंख्य धन-सम्पत्ति लूटली।

इधर मुगल-सेनापति यद्यपि शिवाजीसे रुपया खाकर सन्धि कर चुका था, परन्तु शिवाजीको अनुपस्थित देख गुप्त रूपसे बीजापुरके साथ शिवाजीके विरुद्ध मन्त्रणा कर रहा था। वह सोचता था कि यदि मुगल और बीजापुर दोनों मिलकर गोलकुण्डा पर आक्रमण करें—तो वह पराजित हो जायगा। इससे हमलोग शिवाजीके स्वदेश-प्रत्यागमनका मार्ग भी अवरुद्ध कर सकेंगे। अपने राज्यसे वे खाद्य पदार्थ और अस्त्र-शस्त्र नहीं ले सकेंगे। ऐसी अवस्था उपस्थित होने पर हम शिवाजी पर आक्रमण कर उनकी शक्तिको नष्ट कर देंगे। परन्तु सम्राट्-औरंगजेबके पास बहादुरखांने जब यह प्रस्ताव स्वीकृतके लिये भेजा, तो सम्राट्ने अस्वीकार कर दिया। सम्राट्-औरंगजेबने बहादुरखांकी रिश्वतखोरीकी बात सुन ली थी। वह पहले ही नाराज हुआ बैठा था। उसने बहादुरखांको वापस बुला लिया—और उसकी जगह दिलेरखांको सेनापति बनाकर दक्षिणमें भेजा। दिलेरखांकी गुलबर्गामें बहलोलखांसे भेंट हुई। दोनोंने मिल कर गोलकुण्डाके सीमान्त-प्रदेश मालखेड़ाके दुर्ग पर आक्रमण किया। बहुत दिन तक दोनों ओरसे युद्ध होता रहा। इतनेमें ही वर्षा-ऋतु आरम्भ हो गई और मुगलोंकी रसद भी समाप्त हो गई। उधर बीजापुरी-सेनामें बहुत दिनोंसे वेतनादि न मिलनेके कारण पहले ही से अराजकतासी फैल रही थी। सुतरां मुगल-सेनामें शिथिलता देख कर बीजापुरी-सेना भी दलबद्ध होकर युद्ध-क्षेत्रसे पलायन करने लगी। मानसिक चिन्ताओंके कारण बहलोलखां बीमार हो गया। दिलेरखांका साहस भी इस उदासीनताको देख कर नष्ट हो गया। अन्तमें युद्ध बन्द कर देना पड़ा। इसके बाद दिलेरखांने गोलकुण्डाके अधिपति अब्बुहुसेनके पास सन्धि का प्रस्ताव कर भेजा। अब्बुहुसेनने प्रस्तावको स्वीकार कर लिया। इस सन्धिके प्रस्तावका भीतरी रहस्य यह था कि जब तक सन्धिकी

बातचीत चलेगी, तब तक दिलेरखांके पास और मुगल-सेना आ पहुंचेगी—तब और भी जोर से आक्रमण किया जा सकेगा। अब्बु-हुसेनको पहले तो इस बातका पता नहीं लगा, परन्तु जब दिलेरखां युद्ध-क्षेत्रसे विदा हो गया, तब अब्बुहुसेनको भी इस भीतरी रहस्यका पता लग गया। अब्बुहुसेनने दिलेरखांकी इस चालबाजीको देख कर महापराक्रमके साथ दिलेरखां पर मार्गमें ही आक्रमण किया और दिलेरखांको खेदता-खेदता गुलबर्गा तक ले आया। इस युद्धमें मुगल-सेनाकी बहुत हानि हुई। हजारों मुगल-सैनिक मारे गये। उधर बहलोलखां भी फिर बीमारीसे नहीं उठ सका। इसी बीचमें बहलोलखांके शिविरमें पहुंच कर दिलेरखांने बहलोलखांसे बीजापुरी-सेनाका सेनापतित्व छोड़नेका आग्रह किया। बहलोलखांने दिलेरखांके इस अनुरोधको स्वीकार कर लिया। तब दिलेरखांने सिद्दी-मामूदको बीजापुरके राज-प्रतिनिधि पद पर प्रतिष्ठित किया। मामूदने राज-प्रतिनिधि-पद ग्रहण करनेसे पहले बीजापुरी-सेनाको विश्वास दिलाया था कि मैं इस पद पर अधिष्ठित होते ही सैनिकोंके वेतनादिका परिशोध कर दूंगा। मामूदके इस आश्वासनसे बीजापुरी सैनिकोंने भी मामूदके राजप्रतिनिधित्वके लिये अपनी सहानुभूति प्रकट की। परन्तु राजप्रतिनिधित्व प्राप्त करते ही मामूद अपनी प्रतिज्ञाको भूल गया। इससे बीजापुरी-सेना क्रुद्ध हो कर मृत्यु-शय्या पर पड़े बहलोलखांके अन्त:पुरको लूटने लगी। लज्जा और दु:खसे अभिभूत हो बीजापुरी वीर बहलोलखांने इसी समय मृत्युकी शान्तिमय गोदमें आश्रय लिया। बहलोलखांकी मृत्यु हो जानेके बाद बीजापुरीसेनाके कुछ सैनिकोंमेंसे कुछने मुगल-सेनामें नौकरी कर ली और शेष शिवाजीके सेनापति मोरोपंथ पिंगलेकी सेनामें जा मिले।

सम्राट् औरंगजेबको जब दिलेरखांकी पराजयका सम्बाद मिला, तो वह बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने शाहजादा सुलतान सलीमको

इधर मुगल-सेनापति यद्यपि शिवाजीसे रुपया खाकर सन्धि कर चुका था, परन्तु शिवाजीको अनुपस्थित देख गुप्त रूपसे बीजापुरके साथ शिवाजीके विरुद्ध मन्त्रणा कर रहा था। वह सोचता था कि यदि मुगल और बीजापुर दोनों मिलकर गोलकुण्डा पर आक्रमण करें— तो वह पराजित हो जायगा। इससे हमलोग शिवाजीके स्वदेश-प्रत्यागमनका मार्ग भी अवरुद्ध कर सकेंगे। अपने राज्यसे वे खाद्य पदार्थ और अस्त्र-शस्त्र नहीं ले सकेंगे। ऐसी अवस्था उपस्थित होने पर हम शिवाजी पर आक्रमण कर उनको शक्तिको नष्ट कर देंगे। परन्तु सम्राट्-औरंगजेबके पास बहादुरखांने जब यह प्रस्ताव स्वीकृतके लिये भेजा, तो सम्राट्ने अस्वीकार कर दिया। सम्राट्-औरंगजेबने बहादुरखांकी रिश्वतखोरीकी बात सुन ली थी। वह पहले ही नाराज हुआ बैठा था। उसने बहादुरखांको वापस बुला लिया—और उसकी जगह दिलेरखांको सेनापति बनाकर दक्षिणमें भेजा। दिलेरखांकी गुलबर्गामें बहलोलखांसे भेंट हुई। दोनोंने मिल कर गोलकुण्डाके सीमान्त-प्रदेश मालखेड़ाके दुर्ग पर आक्रमण किया। बहुत दिन तक दोनों ओरसे युद्ध होता रहा। इतनेमें ही वर्षा-ऋतु आरम्भ हो गई और मुगलोंकी रसद भी समाप्त हो गई। उधर बीजापुरी-सेनामें बहुत दिनोंसे वेतनादि न मिलनेके कारण पहले ही से अराजकतासी फैल रही थी। सुतरां मुगल-सेनामें शिथिलता देख कर बीजापुरी-सेना भी दलबद्ध होकर युद्ध-क्षेत्रसे पलायन करने लगी। मानसिक चिन्ताओंके कारण बहलोलखां बीमार हो गया। दिलेरखांका साहस भी इस उदासीनताको देख कर नष्ट हो गया। अन्तमें युद्ध बन्द कर देना पड़ा। इसके बाद दिलेरखांने गोलकुण्डाके अधिपति अब्बुहुसेनके पास सन्धिका प्रस्ताव कर भेजा। अब्बुहुसेनने प्रस्तावको स्वीकार कर लिया। इस सन्धिके प्रस्तावका भीतरी रहस्य यह था कि जब तक सन्धिकी

बातचीत चलेगी, तब तक दिलेरखांके पास और मुगल-सेना आ पहुंचेगी—तब और भी जोर से आक्रमण किया जा सकेगा। अब्बु-हुसेनको पहले तो इस बातका पता नहीं लगा, परन्तु जब दिलेरखां युद्ध-क्षेत्रसे विदा हो गया, तब अब्बुहुसेनको भी इस भीतरी रहस्यका पता लग गया। अब्बुहुसेनने दिलेरखांकी इस चालबाजीको देख कर महापराक्रमके साथ दिलेरखां पर मार्गमें ही आक्रमण किया और दिलेरखांको खेदता-खेदता गुलबर्गा तक ले आया। इस युद्धमें मुगल-सेनाकी बहुत हानि हुई। हजारों मुगल-सैनिक मारे गये। उधर बहलोलखां भी फिर बीमारीसे नहीं उठ सका। इसी बीचमें बहलोलखांके शिविरमें पहुंच कर दिलेरखांने बहलोलखांसे बीजापुरी-सेनाका सेनापतित्व छोड़नेका आग्रह किया। बहलोलखांने दिलेरखांके इस अनुरोधको स्वीकार कर लिया। तब दिलेरखांने सिद्दी-मामूदको बीजापुरके राज-प्रतिनिधि पद पर प्रतिष्ठित किया। मामूदने राज-प्रतिनिधि-पद ग्रहण करनेसे पहले बीजापुरी-सेनाको विश्वास दिलाया था कि मैं इस पद पर अधिष्ठित होते ही सैनिकोंके वेतनादिका परिशोध कर दूंगा। मामूदके इस आश्वासनसे बीजापुरी सैनिकोंने भी मामूदके राजप्रतिनिधित्वके लिये अपनी सहानुभूति प्रकट की। परन्तु राजप्रतिनिधित्व प्राप्त करते ही मामूद अपनी प्रतिज्ञाको भूल गया। इससे बीजापुरी-सेना क्रुद्ध हो कर मृत्यु-शय्या पर पड़े बहलोलखांके अन्तःपुरको लूटने लगी। लज्जा और दुःखसे अविभूत हो बीजापुरी वीर बहलोलखांने इसी समय मृत्युकी शान्तिमय गोदमें आश्रय लिया। बहलोलखांकी मृत्यु हो जानेके बाद बीजापुरीसेनाके कुछ सैनिकोंमेंसे कुछने मुगल-सेनामें नौकरी कर ली और शेष शिवाजीके सेनापति मोरोपंथ पिंगलेकी सेनामें जा मिले।

सम्राट् औरंगजेबको जब दिलेरखांकी पराजयका सम्बाद मिला, तो वह बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने शाहजादा सुलतान सलीमको

दक्षिणके शासनकर्त्ताके पद पर आरूढ़ करके दक्षिण भेज दिया और दिलेरखांको उसकी अधीनतामें काम करनेका आदेश दिया। सम्राट् के इस कोप-प्रदर्शनसे अपनेको अपमानित समझ कर दिलेरखांने असहाय बीजापुरके विरुद्ध अस्त्र धारण करनेका विचार स्थिर किया। बीजापुरके विरुद्ध अस्त्र धारण करनेका कारण भी था। खव्वासखांके साथ जिस समय मुगलोंकी सन्धि हुई थी, उस समय खव्वासखांने आदिलशाहकी कन्या बादशाह बीबीके साथ सम्राट्के पुत्रका विवाह करनेकी बात कही थी। इसी छोटीसी बातको लेकर दिलेरखां बीजापुर पर आक्रमण करनेके लिये बीजापुरके द्वार-देश पर जा धमका। जब बादशाह बीबीको इस बातका पता लगा, तो पितृ-राज्य पर विपद् आई देख कर वह स्वयं राज-चिकित्सक शमशुद्दीनके साथ दिलेरखांके पास आ उपस्थित हुई। दिलेरखांने बादशाह बीबीको सादर ससम्मान ग्रहण किया और सम्राट्के पास आगरा भेज दिया। परन्तु बादशाह बीबीके आत्म-समर्पण कर देने पर भी दिलेरखांने बीजापुरको नहीं छोड़ा। इससे समस्त बीजापुर-निवासी क्रुद्ध हो दिलेरखांसे युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुए। बीजापुर निवासियोंके प्रबल अवरोधके कारण दिलेरखां बीजापुरमें तो नहीं घुस सका, परन्तु उसने बीजापुरके आसपासके जलाशय और उद्यान नष्ट-भ्रष्ट कर दिये। बीजापुर-निवासियोंने दिलेरखांकी इस अमानुषिकताको देख कर और भी क्रुद्ध हो, उस पर प्रचण्ड-वेगसे आक्रमण किया, जिसके कारण उसे कई मील पीछे हट जानेके लिये वाध्य होना पड़ा। इसी समय दिल्लीसे मुगलोंकी एक विशाल सेनाने आकर दिलेरखांको सहायता दी, जिसके कारण वह और भी प्रचण्ड वेगसे बीजापुर पर चढ़ गया। इस पर चारों ओरसे निराश्रित होकर मामूदखांको शिवाजी से सहायता मांगनेके लिये वाध्य होना पड़ा।

इधर शिवाजी कर्नाटक-यात्रासे वापस आकर नवाधिकृत दुर्गोंके सम्बन्धमें विचार कर रहे थे कि इनको अपने राज्यके साथ संयुक्त करके कैसे एक राष्ट्रीय-सूत्रमें सम्बद्ध किया जाय। शिवाजीने सोचा कि ऐसा करनेके लिये जब तक दोनों देशोंके मध्यवर्ती स्थानों पर अधिकार नहीं किया जायगा, यह विचार कार्यमें परिणत न हो सकेगा। परन्तु यह मध्यवर्ती स्थान, कितने ही छोटे-छोटे राजवाड़ों और जागीरोंमें विभक्त था। हुसेनखां और कासिमखां नामके दो पठानोंके अधिकारमें इस प्रदेशका अधिकांश भू-भाग था। हुसेनखां साहसी पराक्रमी तथा बहलोलखांके समान शौर्य-वीर्य-सम्पन्न था। इसके पास पांच हजार वीर-पठानोंकी सेना थी। जिस समय शिवाजी कर्नाटक-यात्रासे स्वदेशको लौट रहे थे, उस समय उसने शिवाजी का मार्ग अवरुद्ध कर युद्ध करना आरम्भ किया। किन्तु युद्धमें वह परास्त हो गया। इसके कुछ समय पश्चात् वीर हमीररावने हुसेनखां को बन्दी करके शिवाजीको सेवामें उपस्थित किया। शिवाजीने वीरोचित सम्मानके साथ हुसेनखांको मुक्त कर दिया। इधर मोरोपन्थने अर्थ द्वारा कासिमखांको वशीभूत कर उससे कोपाल-दुर्ग ले लिया। इस प्रकारसे महाराष्ट्र एवं मैशूरका मध्यवर्ती प्रदेश अर्थ और बल-प्रयोग द्वारा जब शिवाजीके अधिकारमें आ गया, तो शिवाजीने जनार्दननारायण हनुमन्तको इस प्रदेशका शासन-कर्तृत्व पदका भार सौंपा। इसके बाद शिवाजी जब पनहला-दुर्गको लौट रहे थे, तब उनकी सेनाने मुङ्गी पर आक्रमण कर शिवनेरी पर्यन्त प्रदेश पर अधिकार कर लिया। शिवनेरी-दुर्गका अध्यक्ष अब्दुल अजीजखां पहलेसे ही सतर्क था। जिस समय गम्भीर रात्रिमें शिवाजीके सैनिकोंने शिवनेरी-दुर्गमें प्रवेश किया, उस समय अब्दुल अजीजखां भी अपने चुने हुए सैनिकोंको लेकर छिपा हुआ बैठा था। शिवाजीके सैनिकों-

के दुर्गमें प्रवेश करते ही उन पर टूट पड़ा। अब्दुल अजीजखांने मराठा सैनिकों पर आक्रमण करके उनकी बहुत क्षति की। तब मराठा सैनिकोंने पीछे हट कर पर्वतकी कन्दराओंमें जाकर शरण ली। परंतु अब्दुल अजीजखांने प्रातःकाल होते ही सब सैनिकोंको बन्दी कर लिया और सबको यथोचित उपहार देकर मुक्त कर दिया। जब मराठा-सैनिक चलने लगे तो अब्दुल अजीजखांने कहा कि,—"शिवाजीसे कहना कि जब तक मैं इस दुर्गका अध्यक्ष हूं, तब तक वे इधर रुख न करें। नहीं तो उन्हें निराश होना पड़ेगा।"

इसी समय शिवाजीका कुतुबशाहसे मनोमालिन्य उपस्थित हुआ। कुतुबशाहने सोचा कि कर्नाटक-यात्राके समय मैंने शिवाजी की पांच हजार सैनिकों और कितने ही लाख रुपयोंसे सहायता की थी। उन्होंने वहां बहुतसे प्रदेश पर अधिकार किया एवं एक करोड़के लगभग रुपया पाया, परन्तु प्रतिज्ञा करके भी उसमेंसे मुझे कुछ नहीं दिया। इसके अतिरिक्त कुतुबशाहने जब देखा कि शिवाजी बीजापुर पर भी अधिकार करनेकी चेष्टा कर रहे हैं, तो उसने शिवाजीके साथ की हुई सन्धिको भी विच्छिन्न कर दिया। मदन्नापन्थकी गोलकुण्डासे शिवाजीकी सन्धि करा कर हिन्दू-साम्राज्यको सुदृढ़ बनानेकी इच्छा नष्ट हो गई। कुतुबशाह बीजापुरके सिद्दी मामूदसे सन्धि करके मराठों पर आक्रमण करनेका आयोजन करने लगा। बीजापुर वाले २५ हजार अश्वारोही और बहुत अधिक पदातिक सेना लेकर शिवाजीके विरुद्ध युद्ध-यात्रा करनेके लिये तैयार हो गये। परन्तु मुगल सेनापति दिलेरखांने सिद्दी मामूदसे सन्धि करके युद्ध-यात्राको स्थगित कर दिया। इस एकाएक मत परिवर्तनसे बीजापुरकी सेनामें गोलमाल उपस्थित हो गया। सिद्दी मामूद इस अराजकताको देखकर बहुत भयभीत हुआ। उसने सोचा कि महाप्रतापी शिवाजीसे

अब रक्षा होनी कठिन है। सुतरां सिद्दी मामूदने शिवाजीसे सन्धि-का प्रस्ताव किया। परन्तु दिलेरखांने कहा,—"घबड़ाते क्यों हो, शिवाजी यदि बीजापुर पर आक्रमण करेंगे, तो हम तुम्हारी सहायता करेंगे।" किन्तु दिलेरखांकी यह कुटिल नीति कारगर न हुई। सिद्दी मामूदने शिवाजीको लिख भेजा कि "हम तो परस्परमें सहयोगी हैं। हमारे शत्रु तो ये विदेशी मुगल हैं—जो तुम्हारे और हमारे राज्यको हड़पनेके लिये दांत लगाये बैठे हैं। इसलिये आओ और मिल कर इन विदेशी शत्रु मुगलोंको दक्षिणसे निकाल बाहर करें।"

———

इक्कीसवां-परिच्छेद ।

अंग्रेजोंसे राष्ट्रीय-सम्बन्ध ।

——:※:——

इससे पहले परिच्छेदोंमें शिवाजीका अंग्रेजोंसे विरक्त होनेका कारण लिखा जा चुका है। उन पूर्व कथित घटनाओंके सम्बन्धमें आगे चल कर क्या हुआ, उन्हींका इस परिच्छेदमें उल्लेख करते हैं। पहले चार अंग्रेजोंके शिवाजी द्वारा कैद होनेका उल्लेख हो चुका है। जब इन चारों अंग्रेजोंको कैदमें पड़े बहुत समय व्यतीत हो गया, तो निराश हो ये तड़फड़ाने लगे। इनकी भाव-भङ्गिको देख कर शिवाजीके एक प्रधान कर्मचारीने इनसे पूछा कि यदि ये वहां अपने साथियोंको इस बातके लिये तैयार करें कि जब हम पण्डा-राजपुरी पर आक्रमण करें तो हमें सहायता देंगे, तो हम तुमको मुक्त कर सकते हैं। इस सहायताके परिवर्तनमें हम अंग्रेजोंको एक समुद्रो-बन्दर भो प्रदान करेंगे। उत्तरमें चारों अंग्रेज कैदियोंने कहा कि जब तक हमको कैदसे मुक्त न कर दिया जायगा, हम इस विषयमें कोई वचन नहीं दे सकेंगे। इसके बाद शिवाजोकी ओरसे उन चारों अंग्रेज कैदियोंकी मुक्तिके लिये अंग्रेज कम्पनीसे कुछ रुपया मांगा गया, किन्तु इससे भी कम्पनीने इन्कार कर दिया। कोई भी बात स्वीकार न करनेके कारण इन चारों अंग्रेजोंको और भी बहुत समय तक कारागारमें ही पड़ा रहना पड़ा। कैद भोगते भोगते अत्यन्त असहिष्णु होकर इन बन्दी अंग्रेजोंने सूरतको अंग्रेज-वणिक समिति के प्रधानको लिख भेजा कि आप लोग हमारी मुक्तिका कोई यथो-

चित उपाय क्यों नहीं करते ? उत्तरमें उक्त समितिके प्रधानने क्रुद्ध होकर लिख भेजा कि "तुम लोग कम्पनीके किसी कार्यके लिये बन्दी नहीं हुए हो। पनहला-दुर्ग पर अधिकार करते समय तुमने शिवाजीके शत्रुओंकी सहायता की थी—उसीका तुम फल भोग रहे हो—भोगो!" इस तरहसे भी जब कुछ सफलता न हुई, तो चारों अंग्रेज—कैदियोंने पलायन करनेकी चेष्टा की, परन्तु सफलता प्राप्त न हुई। भागते भागते बीचमें ही पकड़ लिये गये—और शिवाजीके दरबार रायगढ़में पहुंचाये गये। इसी समय सूरतके अंग्रेजोंने सन् १६६२ में अपने कई जहाज समुद्रमें भेज कर शिवाजी और बीजापुरके जहाजों पर अधिकार करनेकी चेष्टा की। इनका उद्देश्य था कि यदि शिवाजीके जहाज पकड़े जा सकें, तो वे स्वयं वाध्य होकर चारों अंग्रेज बन्दियोंको छोड़ देंगे और यदि बीजापुरके जहाजों पर अधिकार हो गया, तो बीजापुरको विवश किया जायगा कि वह हमें बन्दियोंको मुक्त करानेमें सहायता दें। सूरतके मुगल-शासकसे भी इन्होंने कहा कि वह सायस्ताखांको कह कर चारों अंग्रेज कैदियोंके उद्धारका उपाय करे। परन्तु इसी समय शिवाजीके सेनापति रावजी पण्डितने इन चारों कैदियोंको मुक्त कर दिया। अंग्रेज इस व्यवहारके कारण शिवाजीसे रुष्ट हो गये थे, परन्तु प्रतिहिंसाको कार्यमें परिणत करनेकी उनके पास न तो शक्ति ही थी, न सुविधा। महाराष्ट्रके इतिहासमें स्वयं अंग्रेज—लेखकोंने इस बातको स्वीकार किया है।

इधर राजापुरके अङ्गरेजोंके कारखानेको मराठोंने रुष्ट होकर जब लूट लिया, तो अङ्गरेजोंने शिवाजीके पास क्षति-पूर्तिका दावा भेजा। परन्तु शिवाजीने क्षति-पूर्ति करनेसे साफ इन्कार कर दिया। अन्तमें अङ्गरेजोंने शिवाजीके पूर्व परिचित लेफ्टीनेण्ट स्टिफन आस्टिकको अपना दूत बना कर शिवाजीके पास भेजा। मिस्टर

स्टिफनसे कहा गया कि वह अङ्गरेजोंकी क्षति-पूर्तिकी मीमांसाके अतिरिक्त शिवाजीसे इस बातका पर्वाना लेकर आवें कि अङ्गरेज लोग शिवाजीके राज्यमें बे-रोक-टोक अपना वाणिज्य व्यवसाय कर सकते हैं। इस पर्वानाके मिलने पर अङ्गरेज २) रुपये प्रति सैकड़ा शिवाजीको राज-कर देंगे। सुतरां मि० स्टिफन जिस समय शिवाजी के यहां भेजे जाने लगे तो वे बागनालामें मुगलोंसे भिड़ रहे थे। अंगरेजोंको जब यह समाचार मिला तो मि० स्टिफनका जाना स्थगित कर दिया। इसके बाद सन् १९७२ की १० वीं मार्चको मि० स्टिफनको शिवाजीके पास उपरोक्त उद्देश्यको लेकर भेजा गया। परन्तु शिवाजीने अंगरेजोंकी कोई बात नहीं सुनी और स्टिफन साहबको बैरंग लौट आना पड़ा। इसके पश्चात् सन् १६७३में टाम्स निकोलसको अंगरेजोंने अपना दूत बना कर शिवाजीके पास भेजा। टाम्स साहेब भी अन्तमें विफल मनोरथ होकर लौट आये। अन्तमें अंगरेज कम्पनीको जब कोई चेष्टा भी सफल न हुई तो वह नरम पड़ गई। तब शिवाजी भी नरम पड़ गये—और उन्होंने क्षति-पूर्तिके ४० हजार पैगोड़ा (सिक्का) के स्थानमें १० हजार देने स्वीकार किये। ८ हजार नगद और शेष माल देना स्वीकार हुआ और दो हजार राजापुर बन्दरके तीन चार वर्षके शुल्कस्वरूप रख लिये गये। अंग्रेज ४० हजार मांगते थे और शिवाजीने दश ही हजार देकर इस कापडको समाप्त किया। जो कुछ भी हो—सन्धि हो गई। परन्तु शिवाजीके युद्धमें प्रवृत्त रहनेके कारण सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर नहीं हुए थे। परन्तु अंग्रेज जानते थे कि यद्यपि राजापुरके व्यापारको लेकर शिवाजी अंग्रेजोंसे रुष्ठ एवं विरक्त हो गये थे, तथापि वे अकारण अंग्रेजों पर किसी प्रकारका बल-प्रयोग करनेकी इच्छा नहीं रखते थे।

इसके बाद अंग्रेजोंने हेनरी अक्सीडनको फिर शिवाजीके पास भेजा। मि० हेनरी शिवाजीके राज्याभिषेकके समय भी शिवाजीके यहां उपस्थित रह चुके थे। मि० हेनरीने सन् १६७४ की १८ वीं जूनको मराठा मन्त्रियोंके सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर कराये। अगले वर्षके मार्च मासमें शिवाजीने अंग्रेजोंके सभी भाव-अभियोग सुनने स्वीकार किये। किन्तु शिवाजी उस समय पण्डा दुर्गको घेरे हुए थे, इसलिये अंग्रेजोंकी मांग पर विचार न कर सके। इसी वर्षके सितम्बर मासमें सेमुअल आस्टन नामके एक अंग्रेज दूतने आकर शिवाजीसे कहा कि शिवाजीकी मराठा सेनाने धर्मगांव स्थित अंग्रेजों के कारखानेको नष्ट किया है—इसलिये उसकी क्षति-पूर्ति की जाय। शिवाजीने उत्तरमें कहा कि धर्मगांवका अंग्रेजी कारखाना अज्ञात होनेके कारण सेनापतिके भ्रमसे नष्ट हुआ है। उसकी क्षति-पूर्ति हम नहीं कर सकते। हां, भविष्यमें कुछ ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये, जिससे भ्रमवश तुम लोगोंकी कोई हानि न हो। अंग्रेज दूत अन्तमें विफल मनोरथ होकर लौट गया। अंग्रेजोंने फल स्वरूप धर्मगांवका अपना कारखाना भी निरापद न समझ कर उठा दिया।

सन् १६७७ में सूरतकी अंग्रेज-वणिक समितिने शिवाजीसे रुष्ट होकर अपने बम्बईके गवर्नरको लिख भेजा कि अपने जंगीजहाज भेज कर शिवाजीके कुछ जहाज पकड़ लो, तो शिवाजीको भी हमारी शक्तिका पता लग जाय। परन्तु बम्बईके गवर्नरको इसका साहस नहीं हुआ। क्योंकि अंग्रेज लोग लकड़ी, खाद्य वस्तुएं, पशु आदि सब शिवाजीके राज्यमेंसे होकर लाते थे। उनके जहाजों पर अधिकार करनेका फल यह होता कि शिवाजी अपने राज्यमेंसे अंग्रेजोंका आवागमन बन्द कर देते। अंग्रेजोंकी सब कल्पनायें समाप्त हो जातीं। परन्तु बम्बईके बुद्धिमान् अंग्रेज गवर्नरने सूरत वालोंकी

सम्मतिको स्वीकार ही नहीं किया। सूरतके अंग्रेज वणिकों द्वारा बम्बई भेजे हुए पत्रसे मालूम होता है कि सूरतवालोंने यह सम्मति दी थी कि यदि शिवाजी किसी प्रकारसे भी क्षति-पूर्ति न करें तो उनके राज्यमेंसे अपने कल-कारखाने और वाणिज्य-केन्द्र उठा लिये जांय।

यद्यपि शिवाजीने अंग्रेजोंकी बातोंको पूरा नहीं किया था, तथापि अंग्रेजों पर अकारण अत्याचार करनेका विचार उनके मनमें कभी नहीं आया। अंगरेज लोग ही जब न्याय-पथको छोड़ कर किसी समय शिवाजीके शत्रुओंका साथ देते थे—तो शिवाजी उनसे रुष्ठ हो जाते थे और वे भी शिवाजीकी भृकुटिको देख कर भीगी बिल्लीकी तरहसे शान्त हो जाते थे। अंगरेजोंने शिवाजीसे मोर्चा लेनेकी कई बार चेष्टा की, परन्तु उस समयके महाप्रतापी महावीर शिवाजीके साथ युद्ध करनेका उनमें कभी साहस नहीं हुआ। शिवाजीके परलोकवासके बाद यद्यपि शिवाजीके पुत्र सम्भाजीसे १० हजार पैगोड़ा बावत शेष ६६३३) पैगोडा प्राप्त कर लिये थे, तथापि शिवाजीसे मांगनेका उन्हें कभी साहस भी नहीं हुआ था।

—o—

बाइसवां-परिच्छेद ।

भूपालगढ़का पतन ।

---:※:---

बीजापुरके मामूदने शिवाजीसे सन्धि स्थापन कर मुगलोंसे युद्ध करनेका जो अभिप्राय प्रकाश किया था, आशा है पाठक उस प्रकरण को नहीं भूले होंगे। वहींसे हमारे इस परिच्छेदका आरम्भ होता है। मुगल सेनापति दिलेरखांको जब यह सम्बाद मिला, तो वह बीजापुर पर बड़ा क्रुद्ध हुआ और उस पर आक्रमण करनेकी तैयारी करने लगा। इसी समय और एक घटना घटित हुई, जिससे दिलेरखां और भी बलशाली हो उठा। शिवाजीके पुत्र सम्भाजीकी आयु इस समय केवल १९ वर्षकी थी। वयोवृद्धिके साथ ही साथ सम्भाजी अत्यन्त उच्छृङ्खल एवं कुपथगामी हो उठे। शिवाजीने उपदेश और शासन द्वारा सम्भाजीको सुपथ पर लानेकी भरसक चेष्टा की, किन्तु सब व्यर्थ हुई। सम्भाजी शिवाजीके मार्गमें कण्टक-स्वरूप जीवन व्यतीत करते थे। एक दिन एक विवाहिता ब्राह्मण-कन्या पर बलात्कार कर लौटे, तो शिवाजीको भी इस कुकर्मका पता लगा। वे क्रोधसे अधीर हो उठे। शिवाजीने कर्मचारियोंको आज्ञा दी कि सम्भाजीको इस कुकर्मके अपराधमें पनहला-दुर्गमें कैद कर दो। ऐसा ही हुआ। देवचरित शिवाजी—अपने पुत्रके इस कुकर्मको देख कर बड़े मर्माहत हुए। इसी समय कुछ दिन बाद सुयोग पाकर सम्भाजी अपनी पत्नी जेसुबाई एवं कुछ अनुचरों को साथ लेकर कैदसे भाग खड़े हुए। मुगल—सेनापति दिलेरखां बीजापुर पर आक्रमण करनेकी

तैयारी कर रहा था, इसी समय सम्भाजी भी उससे जा मिले। इधर शिवाजीने सम्भाजीको पकड़नेके लिये एक सेना भी भेजी, जो विफल मनोरथ होकर लौट आई। इधर दिलेरखांने सम्भाजीके पलायनकी बातको सुनकर महान् आनन्द मनाया और सेनापति इगलासखांको बहादुरगढ़ ४ हजार सेना सहित भेज कर उनको सादर बुला भेजा। सम्भाजीके आने पर थोड़ी दूर आगे स्वयं बढ़कर सम्भाजीका स्वागत किया। सम्भाजीके मिल जाने पर चीत्कार कर हर्षोन्मत्त हो दिलेरखांने कहा कि,—"दक्षिणको विजय करके भी जो आनन्द प्राप्त न होता, वही आनन्द आज मुझे शिवाजीके वन्शधरके मिलनेसे प्राप्त हुआ है।" इस आनन्द-सम्वादको उसने सम्राट् औरङ्गजेबके पास भी भेजा। सम्राट् ने तत्काल सम्भाजीको ७ हजार घोड़ोंकी मनसबदारीके पद पर अधिष्ठित करनेकी घोषणा की और साथ ही राजाका पद प्रदान किया। उधर दिलेरखां भी सम्भाजीके साथ परामर्श कर बीजापुरपर आक्रमण करनेका आयोजन करने लगा।

बीजापुरके सेनापति मामूदको जब दिलेरखांके आक्रमणकी बात मालूम हुई तो वह बड़ा भयभीत हुआ और उसने शिवाजीसे सहायता की प्रार्थना की। शिवाजीने प्रार्थनाको स्वीकार कर बीजापुरकी सहायताके लिये—अपने सात हजार अश्वारोही सैनिक बीजापुर भेज दिये। परन्तु मामूद शिवाजीकी सहायता भी चाहता था—और साथ ही उसे यह भी भय था कि कदाचित सहायताके लिये आयी हुई मराठा-सेना ही बीजापुर पर अधिकार न कर ले। क्योंकि वह जानता था कि शिवाजी बीजापुरके आजन्म शत्रु हैं। सुतरां उसने शिवाजीकी सेनाको शहरसे वाहर ही शिविर स्थापन करनेकी अनुमति दी। किन्तु मराठागण बीजापुरके पास ही आकर जब शिविर स्थापन करने लगे, तो मामूदका सन्देह और भी वर्द्धित होने लगा। मराठा सैनिक भी

खाद्य-द्रव्योंमें अस्त्रादि छिपा कर और स्वयं गाड़ीवानोंका रूप धारण कर नगरमें प्रवेश करने लगे। इधर शिवाजीकी दूसरी सेना मामूदके इस दुर्भावको देख कर दौलतपुर, खसरूपुर, एवं जुरापुर आदि बीजा-पुरके उपकण्ठ-स्थित स्थान-समूहोंको लूटने लगी। परन्तु जिस समय लूट-मार मचाती हुई यह सेना इब्राहिम आदिलशाहकी समाधिके पास पहुंची, तो बीजापुर दुर्गसे एक ऐसा तोपका गोला आकर गिरा कि जिससे अनेक मराठा सैनिक और सेनापति हताहत हो भू-लुण्ठित होने लगे। इस भीषण दृश्यको देखकर शेष मराठी-सेना भाग पड़ी। इधर मामूदने इस व्यापारको देख कर मुगल-सेनापति दिलेरखांके पास सन्धिका सन्देश भेजा। दिलेरखांने मामूदसे गुप्त रूपसे सन्धि कर ली और अपनी एक सेना भी बीजापुरकी सहायताके लिये भेज दी। इसके बाद बीजापुरी और मुगल-सेना मिल कर मराठी-सेनाको भगाने लगी। किन्तु इसी बीचमें इन्हें मालूम हुआ कि सेलजूरके पास स्वयं शिवाजी सात हजार सैनिकोंको साथ लेकर तैयार बैठे हैं। तब मुगलों और बीजापुर वालोंने शिवाजीका विराट् आयोजन देख कर इस युद्धको बन्द कर दिया।

इधर दिलेरखां बहुत दिनोंसे भूपालगढ़ पर आक्रमण करनेकी तैयारी कर रहा था। परन्तु शिवाजीने भूपालगढ़ के दुर्ग दुर्भेद्य बना रखनेकी यथासाध्य चेष्टाकर रखी थी। क्योंकि शिवाजी सोचते थे कि निकट भविष्यमें मुगलोंके साथ शिवाजीका एक विराट् युद्ध होगा। उस समय शिवाजी अपनी बहुमूल्य वस्तुयें यहीं सुरक्षित रखनेका इरादा रखते थे। उनका ख्याल था कि आस-पासके निरोह-बाल-वृद्ध भी यहीं आश्रय प्राप्त करेंगे। किन्तु उधर दिलेरखां चुपचाप सर्वप्रथम भूपालगढ़ पर आक्रमण करनेकी त्यारी तैकर रहा था। सुतरां वह दिन आ पहुंचा। मुगल-सेनापति दिलेरखांने भूपालगढ़ पर आक्रमण कर

दिया। दो दिन तक तुमुल-युद्ध होता रहा। दूसरे दिन मुगलोंने भूपालगढ़के दुर्ग पर अधिकार कर लिया। मराठोंके थोड़ेसे सैनिक जो बचे थे—उनमेंसे कुछ तो भाग गये और शेष सबको मुगलोंने बन्दी कर लिया। इन बन्दियोंमें से सात सौ मराठोंके हाथ काट दिये गये और अङ्ग-भङ्ग करके इनको मुक्त कर दिया गया। प्रतिहिंसा-परायण, पाषाण-हृदय मुगल-सेनापति दिलेरखांने इसे प्रतिशोध समझा। क्योंकि वह समझता था कि मैं शिवाजी द्वारा बारबार लज्जित, विडम्बित और अपमानित हुआ हूं—यह उसीका प्रतिशोध है! इतिहासमें दिलेरखांकी इस नीचताका कोई उदाहरण नहीं मिलता। अस्तु, जो कुछ भी हो भूपालगढ़का पतन हुआ—शिवाजी पराजित हुए और भूपालगढ़के दुर्ग पर मुगलोंकी विजय-पताका फहराने लगी।

भूपालगढ़ पर आक्रमण करते समय शिवाजीके अयोग्य पुत्र सम्भाजीने भी दिलेरखांका साथ दिया था। भूपालगढ़के पतन और मराठोंके निदारुण निर्यातनसे शिवाजीका हृदय क्षोभसे पूर्ण हो गया। जिस समय प्रधान सेनापति मोरोपन्थसे शिवाजीने पूछा कि दुर्ग-रक्षक फिरङ्गजी कैसे किसी तरहसे भी दुर्गकी रक्षा न कर सके—तो पोरोपन्थने कहा,—"महाराज, फिरङ्गजीने जिस समय देखा कि स्वयं युवराज सम्भाजी अतुल-विक्रमके साथ दुर्ग पर आक्रमण करनेके लिये अग्रसर हो रहे हैं—तो फिरङ्गीजीने एक ब्राह्मणको उनके पास भेज कर कहलाया कि पुत्र होकर पिताके दुर्गपर आक्रमण करने क्यों जा रहें हो? तो महाराज, युवराजने क्रोधोन्मत्त हो—मियानसे तलवार निकाल कर उस निरस्त्र ब्राह्मणको मार कर भूमि पर गिरा दिया! अगले दिन युवराजने भीमविक्रमके साथ मुगल-सेनाको लेकर जब दुर्ग पर आक्रमण किया, तो दुर्ग-रक्षक फिरङ्गजीने किंकर्तव्य-मूविढ़ होकर वहांकी रक्षाका भार एक दूसरे सैनिकको देकर स्वयं

पनहला-दुर्गके ओर प्रस्थान किया। मराठा-सैनिक अपने सेनापति-को विरक्त हुआ देख कर प्राणपणसे दुर्गकी रक्षा करने लगे। परन्तु मुगलोंकी विपुलवाहिनी सेनाके आक्रमण और युवराजके प्रचण्ड पराक्रमको देख कर हमारी सेना मरने-कटने लगी। इसके पश्चात् जो कुछ हुआ महाराजको ज्ञात ही है।" प्रधान सेनापति मोरोपन्थकी बात सुन कर शिवाजीके नेत्र क्रोधसे लाल हो उठे। वे बोले,—"तब फिरङ्गजी हो भूपालगढ़-पतनके प्रधान अपराधी हैं। सम्भाजीने जब हमारे दुर्ग पर आक्रमण किया था, तब वह हमारा पुत्र होते हुए भी राजद्रोही-शत्रु था। फिरङ्गजीको चाहिये था कि वे राज-द्रोहीको मार कर भी दुर्गकी रक्षा करते। उन्होंने शत्रुको क्षमा कर दिया, इसीलिये हमारी पराजय हुई और भूपाल गढ़का पतन हुआ! इसलिये फिरङ्गजी ही राजद्रोही हैं, उन्हें इसका दण्ड भोगना होगा और वह होगा—प्राण-दण्ड!" शिवाजीके इस भीषण आदेशको सुन कर राज-दरबारमें बैठे हुए सभी लोग कांप उठे!

शिवाजीने भूपालगढ़ पर आक्रमण होनेकी बातको सुन कर सहायताके लिये १६ हजार अश्वारोही भेजे थे, परन्तु वे उस समय वहां पहुंचे—जब भूपालगढ़का दुर्ग मुगलोंके हाथमें चला गया। परन्तु जब उन्होंने सुना कि सेनापति इराजखां मुगल-सेनाके लिये मरेण्डासे खाद्य द्रव्य लेने गया है, तो उन्होंने उसका पीछा किया। इधर दिलेर-खांने भी सुना तो उसने इग्लासखांको इराजखांकी सहायताके लिये भेजा। इग्लासखां मार्गमें ही मराठोंसे भिड़ गया। इग्लासखांके पास विपुल सेना थी। उसने प्रचण्ड-वेगसे मराठों पर आक्रमण कर उन्हें परास्त कर दिया। इधर दिलेरखांने भी पीछेसे एक बड़ी सेना भेज कर अश्वारोही मराठोंको भगा दिया।

इसके पश्चात् दिलेरखांने भूपालगढ़के दुर्गको भग्न करना आरम्भ किया। जो वस्तुयें उठाई जा सकती थीं, उठा लीं और शेष आग लगा कर फूंक दीं। इधर भागे हुए मराठा सैनिकोंने इराजखांको जा घेरा और सभी खाद्य वस्तुयें लूट लीं। खाद्याभावसे भूखे मरते हुए मुगल-सैनिक वहांसे भाग खड़े हुए और शिवाजीका अधिकृत प्रदेश अनायास ही उनके हाथसे मुक्त हो गया।

तेइसवां-परिच्छेद।

जिजिया-काण्ड।

—*::०::*—

सन् १६७९ में भूपालगढ़के पतनके पश्चात् सिद्दी मामूद, दिलेरखां और इराजखां आदि मुगलों और बोजापुरवालोंमें ही वाद-विवाद होता रहा। शिवाजीको इस समय कोई कठिन कार्य नहीं करना पड़ा। हां जिजियाके सम्बन्धमें उनका ध्यान आकर्षित हुआ। 'जिजिया' एक ऐसा नया राजकर था, जो प्रत्येक धनी और दरिद्र हिन्दूसे बल-पूर्वक प्राप्त किया जाता था। अनेक दरिद्र हिन्दू, इस राज-करके भयसे त्रस्त होकर मुसलमान हो जाते थे। वास्तवमें इस राजकरकी रचना हुई भी थी—इसी लिये कि दरिद्र हिन्दू, मुसलमान धर्ममें प्रवेश करें और धीरे धीरे यह हिन्दू-धर्म-प्रधान भारतवर्ष देश, मुसलमान हो जाय। समस्त हिन्दू जाति विलुप्त हो जाय। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि महाराज शिवाजी हिन्दूकुल-सूर्य थे, उनके सभी कार्य-कलाप हिन्दू जातिकी रक्षा करनेके लिये ही कार्य-रूपमें परिणत होते थे। वे भारतकी समस्त हिन्दू जातिको अपनी जाति समझते थे और हिन्दू जातिका दुःख उनका अपना दुःख था। सुतरां इस समय सुयोग देख शिवाजीने सम्राट् औरङ्गजेबको एक पत्र लिखा, जिसमें 'जिजिया' नामक इस नये राजकरकी बड़ी विलक्षणताके साथ आलोचना की गई थी। इस पत्रको पढ़नेसे शिवाजीकी दूरदर्शिता, कुशाग्र बुद्धि एवं प्रकाण्ड राजनीतिज्ञताका विलक्षण परिचय मिलता है। नीचे हम इसका अनुवाद उद्धृत करते हैं।

"आलमगीर सम्राट् औरङ्गजेबकी सेवामें आपका चिरमङ्गलाकांक्षी शिवाजी, ईश्वर और आपके अनुग्रहके लिये अपनेको धन्यवाद देता हुआ आपको यह अवगत कराता है कि यद्यपि आपका यह मङ्गलाकांक्षी, दुर्भाग्यवश आपके यहांसे बिना आपकी अनुमति पाये ही स्वदेश लौट आया, तथापि यह आपकी वश्यता हृदयसे स्वीकार करता है ।

"मुझे यह सम्वाद मिला है कि मेरे साथ बराबर युद्ध करते करते श्रीमान्का राजकोष धनसे खाली हो गया है और उसीकी पूर्तिके लिये सम्राट्ने हिन्दुओं पर 'जिजिया कर' लगाया है । शाहनशाह अकबरने ५२ वर्ष तक राज्य किया । उन्होंने धर्मके सम्बन्धमें उदार नीतिका अवलम्बन करके सदैव हिन्दुओं, मुसलमानों, इसाइयों और यहूदियों आदि नाना भिन्न धर्मवालोंको एक ही दृष्टिसे देखा था । सभी धर्मानुयायी प्रजागणोंका समान भावसे पालन और रक्षण किया था । इसीलिये प्रजाने उनको सहर्ष 'जगद्गुरु' की उपाधिसे विभूषित किया था ।

"इसके बाद सम्राट् नुरूद्दीन जहांगीरने २२ वर्ष तक अपने राज्य की स्निग्ध छत्र-छायामें समस्त भारतवासियोंको रख कर आनन्दित किया । पश्चात् सम्राट् शाहजहांने ३२ वर्ष तक स्वर्गीय छत्र-छायामें रख कर अमर पद प्राप्त किया । इस परिवर्तनशील संसारमें सुयशके अतिरिक्त और कुछ है भी तो नहीं । जो समस्त जीवन सुख्यातिके साथ समाप्त करते हैं, वे ही अक्षय सम्पद लाभ करते हैं । क्योंकि परलोक-गमनके पश्चात् उनके सत्कार्य ही उनके नामको अमर रखते हैं ।

"उपरोक्त महद् भावोंसे प्राणोदित होकर सम्राट् अकबर जिधर भी दृष्टि-पात करते थे, जय और कृतकार्यता उनका आलिङ्गन करती थी । उनके राजत्व-कालमें अनेक दुर्ग और प्रदेश उनके अधिकारमें

आये थे । उनको क्यों सफलता प्राप्त होती थी और आप क्यों विफल-मनोरथ होते हैं, नीति-वैषम्य ही इसका कारण है । उनमें भी 'जिजिया' कर लगानेकी क्षमता थी । परन्तु वे जानते थे—कि इस सृष्टिका रचयिता भगवान् एक ही है । हिन्दू और मुसलमान उसके लिये बराबर हैं । उनका भगवान्‌की शक्ति पर अटल विश्वास था । इन तीनों सम्राटोंके महत्व-पूर्ण क्रिया-कलापोंसे इतिहासके पृष्ठ भरे पड़े हैं । आज भी लोग उनके नामका जयगान करते हैं, उनके नामको आदर और सम्मानके साथ स्मरण करते हैं । यद्यपि वे आज इस धराधाममें नहीं हैं, तथापि उनकी अमरकीर्ति—सदा अक्षुण्ण रहेगी ।

"और-और आपके हाथसे कितने ही दुर्ग एवं प्रदेश अनायास ही निकल गये ! बहुत शीघ्र और भी कितने ही प्रदेश और दुर्ग जो आपके हाथमें हैं, छिन जायंगे । कारण एक तो मैं ही यथासाध्य प्रयत्न करके आपके दुर्गों और राज्यको ध्वंश करनेकी चेष्टा करूंगा । आपकी प्रजा नाना कष्टोंसे पीड़ित है । * प्रत्येक ग्रामके लोग आपको राजकर देनेसे इन्कार करते हैं । जहांसे एक लाख रुपये प्राप्त होने चाहियें, वहांसे केवल एक हजार प्राप्त होते हैं—और जहांसे एक हजार प्राप्त होने चाहिये, वहांसे दश रुपये भी प्राप्त नहीं होते । इस-लिये राजप्रासादमें भी बिना धनके दुःख दारिद्रयका ही साम्राज्य है । राज कर्मचारीगण असन्तुष्ट हैं । आपकी सेना वेतनाभावके कारण क्रुद्ध है, वणिकगण—अनुयोगग्रस्त हैं, मुसलमानोंकी चीत्कार-ध्वनिसे

---

* At last Aurangzib, his treasury empty, his grand army destroyed, died a broken man in his camp at Ahmadnagar. Maharastra was free, Southern India was safe. The Single wisdom of the great king, dead twenty seven years before, had supplied the place of the hundred battalions. (Kincaid and Pararsinis' History of the Maratha People.)

गगन-मण्डल विकम्पित हो रहा है। हिन्दू सन्तप्त हैं, उपवास करके रात्रि व्यतीत करते हैं। दिनमें बच्चों और स्त्रियोंके क्षुधातुर-करुण क्रन्दनको सुनकर शिर पीटते हैं। ऐसी स्थितिमें आपने कैसे 'जिजिया-कर' स्थापन करनेका साहस किया ? आशा है, आपके इन अत्याचारोंके कारण आपका अपयश शीघ्र ही पश्चिमसे होकर पूर्व तक प्रचरित होगा—और इतिहासमें लिखा जायगा कि भारत-सम्राट् औरङ्गजेबने साधु-फकीरों, योगी, वैरागी-संन्यासियों पर भी जिजिया-कर लगा दिया था। भिक्षुकोंकी तृण-शय्या पर आक्रमण कर अपना वीरत्व और साहस दिखाया जाता था और इसी सम्राट्ने तैमूरवन्शधर गणोंका सुनाम और मर्यादा नष्ट की थी।

"आप यदि 'कुरान' पर विश्वास करते हों—तो उसमें देखें कि भगवान् मुसलमानोंकी ही बपौती नहीं है। उसने समस्त संसारकी सृष्टि की है। भगवान्ने इन दोनों जातियोंको विभिन्न जातियोंके रूपमें उत्पन्न किया है। मस्जिदमें नमाज पढ़ते समय अथवा अज़ान देते समय जैसे भगवान्का स्मरण होता है, ठीक उसी प्रकारसे मन्दिर में घण्टा-निनाद होते समय भी उसी सृष्टिकर्ताका स्मरण होता है। कुरानमें क्या कहीं यह लिखा है कि मुसलमान अन्य लोगों पर अत्याचार करें ? न हिन्दुओंके शास्त्रोंमें ही कहीं यह लिखाहै—कि मुसलमानों पर अत्याचार करो। भगवान् एक है, और उसकी दृष्टिमें सभी सन्तान समान हैं। यह भेद-भावका बीजारोपण कर आप उस खुदाके दरबारमें भी गुनहगार हो रहे हो। इससे न तो इस लोकमें ही यश मिलेगा, न परलोकमें शान्ति !

"न्यायकी तुला पर तौलनेसे जिजिया-कर सर्वथा-अन्याय पूर्ण है। राष्ट्रीय दृष्टिसे भी यह महत्व-शून्य है। देशमें शान्ति नहीं, रमणियोंके सतीत्वकी रक्षाका कोई मार्ग नहीं, प्रजाके असन्तोषका पारा-

चार नही। समस्त देश लूट-मारसे त्रस्त हो रहा है। ऐसी दशामें जिजिया-करकी सृष्टि, महा अन्याय और अत्याचार पूर्ण है। भारतमें इसका यह सर्व प्रथम आविर्भाव हो रहा है। हिन्दुओंको ही भयभीत करना और उन पर अत्याचार करना यदि आपको अभीष्ट हो, तो सर्व प्रथम राणा राजसिंह पर इस करको लगाकर उनसे प्राप्त कीजिये। वे इस समय हिन्दुओंके नेता और चालाक सुतरां सर्व-श्रेष्ठ हिन्दू हैं। इसके पश्चात् हम लोगोंसे कर प्राप्त करना कठिन नहीं होगा। क्योंकि हमलोग तो आपके अधीन हैं। कीड़ों-मकौड़ों अथवा मक्खीको मारना वीरताका परिचायक नहीं है। आपके कर्मचारियोंकी कर्तव्य-परायणताको देख कर मैं विस्मित हो गया हूं—जिन्होंने आपको देश की वास्तविक दशा ज्ञापन नहीं कराई। वे प्रज्वलित अग्निमें सूखा घास डाल कर और भी प्रदीप्त कर रहे हैं! भगवान्से मेरी प्रार्थना है कि वह आपके महत्व पूर्ण गौरवकी रक्षा करे।"

इस परिच्छेदके सम्बन्धमें हम मुगलों एवं बीजापुरवालोंके मनो-मालिन्यका उल्लेख कर आये हैं। कुछ समयके पश्चात् यह मनोमा-लिन्य युद्धके रूपमें परिणत होने लगा। शिवाजी तो मौन थे—और अपने कार्यों में संलग्न थे, किन्तु इधर दिलेरखां बीजापुर पर आक्रमण करनेकी तैय्यारी कर रहा था। मामूदको भी इसका पता लगा। मामूदने हिन्दूरावको अपना दूत बना कर शिवाजीके पास भेज कर सहायता मांगी। मामूदने लिखा था कि,—"हमारे राज्यकी भीतरी अवस्थाको आप अच्छी तरहसे जानते हैं। हमारे पास न तो सैनिक-शक्ति ही इतनी है कि हम मुगलोंका सामना कर सकें, न युद्धोपयोगी साजो-सामान ही पहले जैसा है। खाद्य पदार्थोंका भी वैसाही अभाव है। इससे हमें तो सन्देह है कि हम अपने दुर्गोंकी रक्षा कर सकें। शत्रु बड़ा प्रबल और युद्धके लिये मतवाला हो रहा है। आप वन्शानु-

क्रमसे इसी राज्यके अधीन काम करते हैं। इसी राज्य द्वारा आपकी इतनी उन्नति हुई है। इसलिये हमारे दुःख और विपद्में हमारे साथ आपकी सहानुभूति होनी स्वाभाविक है। इसके सिवा मैं आपको यह भी स्पष्ट बता देना चाहता हूं कि बिना आपकी सहायताके अब हमारे राज्यकी रक्षा होनी असम्भव है। आशा है आप कृतज्ञता प्रदर्शन करनेसे कभी विमुख न होंगे। आप जो उचित समझें—हमें आज्ञा दें, हम अविलम्ब उसका पालन करेंगे।" मामूदका पत्र पाकर शिवाजीने तुरन्त दश सहस्त्र अश्वारोही सैनिक एवं दो सहस्त्र गाड़ियां अन्नसे भरवा कर बीजापुरकी सहायताके लिये भेज दीं। इसके अतिरिक्त शिवाजीने अपने राज्यके सौदागरोंको इस बातका आदेश दिया, कि वे विक्रयार्थ खाद्य पदार्थ केवल बीजापुरको ही भेजें। इसके साथ ही शिवाजीने अपने दूत विश्वजी नीलकण्ठ द्वारा मामूदके पास सन्देश भेजा कि वे शीघ्रही दिलेरखांको उपयुक्त दण्ड देनेके लिये बीजापुर आते हैं। इसके पश्चात् शिवाजीके सैनिकोंके बीजापुर पहुंचने पर मामूदने उनका स्वागत किया। इसी समय मुगलोंने आकुलज नामक स्थान पर आक्रमण किया, किन्तु बीजापुरकी एक सेनाने उनको परास्त कर भगा दिया। इसके बाद १५ वीं सितम्बरको दिलेरखां फिर बीजापुरके पास पहुंचा। इसी बीचमें शिवाजी भी १० हजार अश्वारोही सैनिकोंके साथ सेलजूर पहुंचे। यह स्थान बीजापुर और पनहलाके मध्यमें अवस्थित है। शिवाजीसे मामूदने पांचसौ सैनिकोंके साथ भेंट करनेकी प्रार्थना की। किन्तु बुद्धिमान् त्र्यम्बकने एकाएक इस प्रकारसे मामूदके हाथोंमें पड़नेसे निषेध कर दिया। इसके पश्चात् शिवाजीने अपनी सेनाको दो भागोंमें विभक्त किया। स्वयं तो आठ नौ हज़ार सैनिकोंको साथ लेकर मुसला और आलमलारकी ओर अग्रसर हुए—और सेनापति आनन्दरावको दश हजार अश्वारोही सैनिकों

को लेकर मुगलों पर आक्रमण करनेका आदेश दिया। शिवाजीने सोचा था कि मुगल-राज्य पर आक्रमण करनेसे दिलेरखां बीजापुर पर आक्रमण न कर अपने राज्यकी रक्षामें ही व्यस्त हो जायगा, परन्तु दिलेरखांने अपने राज्यकी रक्षा न कर बीजापुरको हस्तगत करनेकी लालसासे बीजापुर पर ही आक्रमण करनेकी चेष्टा की, परन्तु उसकी चेष्टा विफल हुई।

बीजापुर हस्तगत न होनेके कारण दिलेरखांने मासूदके पास सन्धि कर लेनेका प्रस्ताव भेजा, परन्तु मामूदने उसे स्वीकार नहीं किया। दिलेरखां निराश होकर वहांसे चल पड़ा—और उसने टिकोट नामक स्थान पर पहुंच कर लूट मारका बाजार गरम कर दिया। गांवोंकी हिन्दू और मुसलमान रमणियां पाषाण हृदय, प्रतिहिंसापरायण दिलेरखांकी निष्ठुरताका पहले भी परिचय प्राप्त कर चुकी थीं। सुतरां दिलेरखांके आगमनको सुनकर अपने बच्चों सहित कुओंमें गिर कर आत्म-हत्या करने लगीं। दिलेरखांने इस ग्रामको लूट-खसोट कर यहांके सात हजार हिन्दू-मुसलमान अधिवासियोंको बन्दी किया और दास बनाकर उनको बेच डाला। पास ही अथानी नामका नगर था। यह वाणिज्य व्यवसायका केन्द्र समझा जाता था। दिलेरखांने यहां पहुंच कर पहले तो इसे लूटा और फिर आग लगा कर भस्मीभूत कर दिया। इसके बाद हिन्दुओंको दास बनाकर बेचना आरम्भ किया। सम्भाजी भी साथ थे। उन्होंने दिलेरखांके इस अत्याचारको देखकर ऐसा करनेसे मना किया, किन्तु दिलेरखांने उनके विरोधकी कुछ भी परवा नहीं की। यहांसे चल कर दिलेरखां ऐनपुरमें उपस्थित हुआ। इसी समय उसने सुना कि सम्भाजी उसके दलको छोड़ कर भाग गये हैं।

—**—

चौबीसवां-परिच्छेद ।

भूषण और छत्रसाल ।

प्राचीन समयके प्रायः सभी राजा-महाराजा, विद्वान्, ब्राह्मणों, साधुओं और गुणियोंका आदर सम्मान करते थे। साधु, ब्राह्मण, कवि और वीर पुरुष सदैवही राजाश्रय प्राप्त करते रहे हैं। भारतका समस्त इतिहास साधु-सन्तों और ब्राह्मणोंके कार्यकलापोंसे भरा पड़ा है। शिवाजीके समयमें भी इस प्रथाका प्रचार था। उनके यहां भी बराबर ही साधु-सन्त आया ही करते थे। उनकी तो प्रवृत्ति भी उधर थी। रामदास स्वामीके तो वे शिष्य ही थे—और साधु तुकारामके परम भक्त। इनके अतिरिक्त उनके यहां साधु गणेशनाथ, देवभारती, तपोनिधि, सिद्धेश्वर, वामन पण्डित, जयराम स्वामी, केशव स्वामी आनन्द मूर्ति, रङ्गनाथ स्वामी आदि अनेक महात्माओंका समागम होता था। शिवाजी इन सभी महात्माओं पर भक्ति रखते थे—और वे भी भक्तिसे सदा प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते थे। उस समय और उससे पहले राज-दरबारोंमें कवि लोग बहुत रहा करते थे। शिवाजीके यहां भी भूषण कवि उत्तर भारतसे जाकर रहे थे। यद्यपि उनकी भाषा हिन्दी थी और हिन्दीमें ही कविता करते थे, परन्तु उनकी कवितामें स्पष्टवादिता और वीर-रसका प्राधान्य अधिक रहता था, जो भूषण कविको उत्तर-भारतसे घसीट कर मराठा भाषा-भाषी शिवाजीके पास महाराष्ट्रमें ले पहुंचा। शिवाजीके मराठी और अंगरेजी जीवनचरित्रोंमें भूषण कविका कोई विशेष उल्लेख नहीं है। महाराष्ट्रके इतिहासमें भी

कहीं पता नहीं लगता। परन्तु हिन्दी-कविताके विशेष मर्मज्ञोंने भूषण कविको इतिहासकी गिरि-गह्वराओंमेंसे खोज निकाला है। इसलिये हिन्दीकी इस पुस्तकमें हिन्दीके चमत्कारिक कविका उल्लेख न करना अपनी मातृभाषा-राष्ट्रभाषाका अपमान करना है।

भूषण कविके सम्बन्धमें जो नई खोज-तलाश हुई है—उसके अनुसार कहा जाता है कि आप कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे और कानपुरके जिलाके किसी गांवमें आपका जन्म हुआ था। सन् १६६७ में भूषण कवि शिवाजीके दरबारमें पहुंचे थे। भूषण कविके दो भाई भी थे और दोनों कवि थे। इनके नाम थे—चिन्तामणि और मतिराम। मतिराम बहुत प्रसिद्ध कवि हो चुके हैं। अस्तु, जो कुछ भी हो। भूषण कवि सबसे छोटे थे। सबसे बड़े चिन्तामणि थे। वही अपने भाइयोंका और घरवालोंका पालन-पोषण करते थे। कहते हैं कि एक दिन भोजन करते समम भूषण कविसे उनकी भावज-चिन्तामणिकी स्त्रीने कुछ ऐसी व्यंगपूर्ण बात कह दी कि जिससे भूषण कवि बिगड़ उठे—और भोजनको बीचमें ही छोड़ कर चल दिये। भूषण कवि अब तक वैसेही निठल्ले आवारा घूमा-फिरा करते थे। वे पढ़े हुए कुछ भी नहीं थे। उनकी भावज समझती थीं, कि ये कुछ काम-काज तो करते ही नहीं, खाली बैठे बैठे खाते हैं। ऐसी ही कोई कड़ी बात भी कह दी थी, जिससे भूषण कवि उत्तेजित हो घर छोड़ कर बाहर निकल पड़े। सर्व-प्रथम भूषण कविने कुछ लिखा पढ़ा और उनका ध्यान कविताकी ओर ही आकर्षित हुआ। धीरे धीरे कविता करने लगे और अन्तमें उसमें सफलता प्राप्त हो गई। इसी गुणके प्रभावसे भूषणकवि कितनेही राज-राजवाड़ोंमें रहे। खूब धन और सम्मान प्राप्त हुआ। कुछ लोगोंका कहना है कि भूषण कवि कुछ दिन औरङ्गजेबके दरबारमें भी रहे थे। उनके भाई चिन्तामणि तो वहां रहते

ही थे। कहते हैं कि एक दिन सम्राट् औरङ्गजेबने अपने कवियोंसे कहा कि तुम लोग निर्भीक कवि नहीं हो। मेरे गुणों ही गुणोंका बखान करते हो। मेरे अवगुणोंके उल्लेख करनेका तुममें साहस नहीं हैं। कहते हैं इसी समय भूषणजीने उठकर कहा,—"जहांपनाह, आज तक आपने सचमुच श्रृङ्गाररस और चाटुकारिताकी ही कवितायें सुनी हैं। लीजिये, आज जरा मेरी भी एक कड़वी कविता सुन लीजिये, परन्तु मैं अभय बचन चाहता हूं।" कहते हैं औरङ्गज़ेबके अभय बचन देने पर भूषण कविने तुरन्त ही एक कविता कही, जिसका संक्षेपमें यह आशय है कि "जिसने पूज्य शाहजहांको कैद करके मानों मक्केमें आग लगा दी है, बड़े भाई दाराको कैद कर दिया है—जैसे कि वह बड़ा भाई ही नहीं था, इसी प्रकारसे बन्धु खुदाबक्सको धोखा दिया—तब कहीं औरङ्गजेबने बादशाहत पाई है। वही औरङ्गजेब खुदाकी बन्दगीका कपट करके प्रतिदिन हाथमें तस्बी लेकर कपट ही कपटका जाप करता है। उसने आगरामें बड़े भाई दाराको चौकमें चिनवा दिया है, वही खुशामद पसन्द, मतिमन्द—सौ सौ चूहे खाकर भी आज बिल्लीकी तरह तप करने बैठा है। इस आशयके कवित्तको सुन कर सम्राट् औरङ्गजेब भूषण कवि पर बहुत अप्रसन्न हुआ, परन्तु भूषण कवि औरङ्गजेबका आश्रय छोड़ कर ही चले गये। इसके बाद भूषण कवि सीधे शिवाजीकी राजधानीमें पहुंचे। उस समय शिवाजी-का गुण-कीर्तन समस्त भारतवर्षमें हो रहा था। उनकी वीरताको देख कर समस्त हिन्दू अपनेको गौरवान्वित समझने लगे थे। भूषणकी भी श्रद्धा होनी स्वाभाविक थी। कहते हैं भूषण कवि शिवाजीको राजधानीमें पहुंचकर पहले दिन एक देव-मन्दिरमें ठहरे। महाराज शिवाजी भी सायंकालके समय पूजनार्थ आये। भूषणने उन्हें न पह-चान कर उनसे ही शिवाजीके दरबारका वृत्तान्त पूछा तथा शिवाजीसे

भेंट करनेकी इच्छा प्रकट की । शिवाजीने कौतुहलपूर्वक भूषण कविसे कहा कि,—महाराज, मुझे भी एक कविता सुनाइये—जिससे मैं समझूं कि आप कितने बड़े कवि हैं, जो इतनी दूरसे शिवाजीके पास चलकर आये हैं । भूषणने तब नीचे लिखा हुआ प्रसिद्ध कवित्त कह सुनाया,—

"इन्द्र जिमि जम्भ पर बाडव सुअम्ब पर,
रावन सदम्भ पर रघुकुलराज हैं ।
मौन बारि वाह पर सम्भु रतिनाह पर,
ज्यों सहस वाह पर राम द्विजराज हैं ।
दावा द्रुम मुण्ड पर चीता मृग झुण्ड पर,
"भूषण" वितुण्ड पर जैसे मृगराज हैं ।
तेज तम अंश पर कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलिच्छ वंश पर सेर सिवराज हैं ।"

शिवाजी इस कविताको सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुए और बार बार इसकी पुनरावृत्ति कराने लगे । भूषणने इस कवित्तको १८ बार कहा—और १९ वीं बार इन्कार कर दिया । तब शिवाजीने अपना परिचय दिया और कहा कि मैंने मन ही मनमें प्रत्येक आवृत्तिके लिये एक लक्ष रुपया देनेका सङ्कल्प किया था, परन्तु अधिक आपके भाग्यमें नहीं था । अस्तु—१८ लाख रुपया पाकर भूषण कवि अत्यन्त प्रसन्न हुए और शिवाजीकी उदारताको देख कर तबसे उन्हींके दरबारमें रहने लगे ।

महाराज शिवाजीके प्रचण्ड प्रतापको देख-सुन कर भारतकी समस्त हिन्दू जातिमें नवजाग्रतिसी आ गई थी । प्रति दिन अनेक प्रान्तोंसे अनेक हिन्दू शिवाजीकी राजधानीमें आकर उनके दर्शन करते—और जो वीर होते वे उनकी सेनामें भर्ती होकर हिन्दू-साम्राज्य स्थापन करनेमें सहायता देते ।

चम्पतराय मोहोबा बुन्देलखण्डके क्षत्रिय सर्दार थे। इनके पास पर्याप्त जागीर थी—और थी एक वीर-सैनिकोंकी सेना। चम्पतराय स्वयं भी महावीर थे। सन् १६३६ में मुगलसम्राट् शाहजहांने बुन्देलखण्ड पर आक्रमण किया था। बुन्देलोंने मुगलोंके खूब दांत खट्टे किये। परन्तु उनके पास युद्धोपयोगी मुगलों जैसे अस्त्र-शस्त्र न होनेके कारण परास्त होना पड़ा था। मुगलोंने उस समय बुन्देलखण्ड पर अधिकार कर लिया था। ओरछाके राजा गुरुवरसिंहकी ओरसे चम्पतराय भी मुगलोंसे लड़े थे। जब मुगल विजित हुए तो चम्पतरायने भी मुगलोंकी अधीनता स्वीकार कर ली। मुगलोंको कई युद्धोंमें चम्पतरायने बड़ी सहायता दी, जिससे इन्हें और भी जागीर मिली। परन्तु मुगलोंका क्षणभंगुर प्रेम किसी कारणवश चम्पतराय परसे उठ गया। उन्होंने इनकी जागीरको जब्त कर लिया। इससे अप्रसन्न होकर चम्पतराय मुगलोंसे भिड़ गये, परन्तु शक्तिसम्पन्न मुगलोंने इन्हें चारों ओरसे घेर कर, इन पर प्रहार करना आरम्भ किया। इनके अनेक साथी मारे गये—और अन्तमें ये भी घायल होकर गिर पड़े। अपने पतिको मुगलोंके हाथमें पड़ा देख, इनकी स्त्रीने पिस्तौलकी गोलीसे इनको मार डाला और स्वयं दूसरी गोली खाकर आत्महत्या कर ली। इन्हीं चम्पतरायके पुत्र छत्रसाल और अंगदराय ने राजा जयसिंहकी अधीनतामें मुगलोंकी सेनामें नौकर कर ली, परन्तु कई बार वीरता दिखानेपर भी जब इनकी कुछ उन्नति न हुई तो इन्हों ने शिवाजीके यहां जाना स्थिर किया।

अन्तमें दिल्लीसे चलकर ये शिवाजीके यहां पहुंचे और शिवाजीने इनकी वीराकृति और प्रशस्त ललाटको देख कर इनको होनहार समझा और अपने यहां रख लिया। पीछे जब इनका पूर्व इतिहास ज्ञात हुआ तो शिवाजीने इनसे अपनी मातृभूमि बुन्देलखण्डका मुगलोंके हाथसे

उद्धार करनेका उपदेश दिया। छत्रसालका क्षत्रिय-रक्त प्लावित हो उठा और बुन्देलखण्डके लिये प्रस्थान किया। जाते समय शिवाजीने इनसे कहा कि—जाओ वीर, तुम अपने देशका उद्धार करो और अपने छात्र-तेजसे यवनोंको मार भगाओ। वे तो हाथी हैं, और हम हैं शेर। समस्त भारत पर यवन छा गये हैं, उनको यहांसे भगा दो। मैं भी तुम्हारे साथ हूं और स्वयं भगवती भवानी हमारी रक्षा कर कर रही हैं। गो, वेद और ब्राह्मणोंकी रक्षा करना क्षत्रियका धर्म है।

इसके बाद छत्रसालने मुगलोंके हाथसे बुन्देलखण्डका उद्धार कर जो वीरता प्रदर्शित की थी, उसे इतिहास-प्रेमी पाठक जानते हैं, उसका वर्णन करना इस पुस्तकके विषयसे बाहरकी बात है। अपने बाहु-बलसे अपनी मातृ-भूमिका उद्धार कर स्वयं महाराजकी उपाधि ग्रहण कीथी और बुन्देलखण्डमें एक विराट् हिन्दू-राज्य स्थापित किया था। आज भी बुन्देलखण्डकी बत्तीस रियासतोंमेंसे आठ रियासतें, महाराज छत्रसालके वन्शधरोंके हाथमें है। बुन्देलखण्डके गलेसे मुगलोंकी पराधीनताका जुआ उतारनेमें महाराज शिवाजीका भी हाथ था। उनके ही शिष्य महाराज छत्रसालने उनके उपदेशसे प्रेरित होकर उसका उद्धार किया था।

———

पच्चीसवां-परिच्छेद ।

शिवाजीकी चिन्तायें ।

—:o:o:—

अनन्त महिमामय भगवान्‌के गूढ़ अभिप्रायको समझनेकी शक्ति किसीमें नहीं है। इस विचित्र जगत्‌में प्रत्येक पल-पलमें ऐसी ऐसी घटना घटित होती हैं, कि जिनका न आदि है—न अन्त। उनके सन्धानमें प्रवृत्त होनेका परिणाम यह होता है कि आँखें बन्द करके भगवान्‌की लीलाओंका स्मरण किया जाय, और बस, उसको सृष्टिमें कहीं अप्रेम, उदासीनता और निष्ठुरताका परिचय मिलता है, तो दूसरी ओर कहीं प्रेमकी मन्दाकिनी प्रवाहित हो रही है और कहीं अदम्य उत्साहसे पंगु भी गिरी-लङ्घन कर जाता है। समस्त संसारकी सौष्ठवताको देख कर अवाक् रह जाना पड़ता है। संसारके ये अद्भुत व्यापार किस अन्ध शक्ति द्वारा परिचालित हो रहे हैं, भगवान्‌के सिवा इसका कोई उत्तर नहीं दे सकता। इस संसारमें आज तक कितनी जातियोंका उत्थान हो चुका है और कितनियोंका पतन। कितने महापुरुषोंका जन्म हुआ और कितने महापुरुषोंकी मृत्यु। कितने स्वार्थत्यागियों एवं परोपकार-व्रती प्राणियोंको नाना प्रकारकी यातनायें सहन करनी पड़ी हैं—और कितने स्वार्थपरायण अत्याचारियोंने सुखके दिन व्यतीत किये हैं। इस संसारकी लीला-भूमिमें हम प्रति दिन ही ऐसी ऐसी घटनाओंका अवलोकन करते हैं। छोटे-छोटे शिशुओंकी मृत्यु होती है और नाना दुःखोंसे दुखित वृद्धोंकौ दीर्घ-जीवन व्यतीत करना पड़ता है। जिन शिवाजीने वाल्यकालसे धर्म

और संयमके पथका अवलम्बन कर अपने असाधारण परिश्रम और प्रतिभाके बलसे महाराष्ट्र प्रान्तमें हिन्दू साम्राज्यकी स्थापना की थी, वही शिवाजी प्रवीण अवस्थामें पदार्पण करके अशांतिकी अग्निमें दग्ध होने लगे और इस जीवनको विडम्बना समझने लगे। उनको बड़ी आशा थी कि उनके प्राणसम-पुत्र सम्भाजी, बहुत कष्टोंसे अर्जित और स्थापित हिन्दू-स्वराज्यके गौरवकी वृद्धि करेंगे। उनकी पत्नियां सईबाईकी तरहसे इस अवस्थामें उनको सखाकी तरहसे सहायता करेंगी। किन्तु हाय! उनकी समस्त आशालतायें मुरझा गईं। सम्भाजीने कुपथगामी होकर पिताका घर छोड़ दिया—और शत्रुओंके हाथमें जाकर आत्म-समर्पण कर दिया! जिस मुगल-सम्राट् औरङ्गजेबको शिवाजीने आजन्म-युद्ध-विग्रह करके विपर्यस्त कर रखा था, आज उसीके चरणोंमें मति-मन्द पुत्र सम्भाजीने शिर टेक दिया! इस घटनासे शिवाजीको भयङ्कर मानसिक अशान्ति होने लगी। उधर जिन पत्नियोंसे सहायता मिलनी थी, उनमें सपत्नी-विद्वेषकी तीव्र हलाहलमय ज्वाला प्रज्वलित होने लगी थी।* एक दूसरीके सौभाग्यको देखकर मरी जाती थी। एकके विरुद्ध एकका षड्यन्त्र चल रहा था। इस गृह-कलहको देख कर शिवाजीको महान अशान्ति होती थी। वे प्रायः अन्तःपुरसे बाहर ही सोते थे। उधर शिवाजीके भ्राता व्यङ्कोजी संसारसे विरक्त होकर घर-बार छोड़ बैठे थे। वे संन्यासी-जीवन व्यतीत कर रहे थे। शिवाजी समझते थे कि इस हिन्दू-

* Shivaji's harem was, therefore. a scene of veiled warfare—the queens plotting against one another through their maids, doctors and magicians, and the poor husband trying to find some quiet by sleeping outside (Prof. J. N. Sircar's Shivaji his times)

साम्राज्य स्थापनके कार्यमें उनसे यथेष्ठ सहायता मिलेगी। इसके अतिरिक्त भ्रातृ-स्नेह भी उनमें किसीसे कम नहीं था। उन्हें जब व्यङ्कोजीके संसार-त्यागका समाचार मिला, तो वे अत्यन्त दुःखी हुए और उन्हें एक जोरदार पत्र लिख कर लिखा कि,—"भाई, मुझे तुम्हारी उदासीनताको देखकर भयानक कष्ट हुआ। संसारसे विरक्त होकर संन्यासी जीवन व्यतीत करना ही धर्म नहीं है। संसारवासियोंकी सेवा करना और उसीमें अपनेको लगा देना भी कुछ कम धर्म नहीं है। तुम देखते नहीं हो, हमारे देशपर यवन चढ़ आये हैं। उनके अत्याचारोंसे मातृ-भूमि बिलबिला उठी है। अनाथों और विधवाओंपर अत्याचार हो रहे हैं। गो-माता पर वज्र-प्रहार हो रहा है। उनकी रक्षाके लिये ही मैंने हिन्दू-साम्राज्य स्थापन करनेका बीड़ा उठाया है। मेरे द्वारा जो प्रति दिन अनेक प्राणियोंका हनन हो रहा है, अनेक गांवके गांव फूंके और उजाड़े जा रहे हैं, असंख्य सैनिकोंको यमलोकको भेजा जा रहा है, यह सब क्या मैं आत्मप्रसादके लिये कर रहा हूं? सुखसे जीवन व्यतीत करनेके मेरे पास बहुत साधन थे। मेरे लक्ष्यमें तो केवल एक ही बात है—और वह है विदेशियोंसे मातृ-भूमिकी रक्षा करना। उसीके लिये मैं सोचता हू—और उसीके लिये खाता-पीता और जीवन धारण करता हू। तुम मेरे भाई हो, छोटे हो मेरी सहायता करो, मेरा अनुकरण करो और मातृ-भूमिके हृदयका रक्त-शोषण करनेवाले इन विदेशियोंको अपने देशसे निकाल दो। इस विरक्तिका त्याग करो—और अपने तन, मन, धनको लोकोपकारमें लगा दो। इससे बड़ा और कोई धर्म नहीं, कोई पुण्य नहीं। उठो और मैदानमें आओ। मातृभूमि तुम्हारा आह्वान कर रही है।"

इसी प्रकारसे जब शिवाजी मानसिक उद्वेग और अशान्तिका जीवन व्यतीत कर रहे थे, तभी बीजापुरके मामूदने शिवाजीसे सहा-

यताकी प्रार्थना की। भले ही बीजापुर वाले आजन्म शत्रु रहे थे, परन्तु शिवाजीने शरणागतकी रक्षा की। सन् १६७२ की चौथी नवम्बरको शिवाजीने सेना लेकर बीजापुरकी सहायताके लिये प्रस्थान किया। सर्व प्रथम मुगलोंका ध्यान बटानेके लिये शिवाजीने बीजापुरके समीपस्थ-मुगल-प्रदेशको लूटना आरम्भ किया, जिसका उल्लेख इससे पहले परिच्छेदमें किया जा चुका है। दिलेरखांको जब शिवाजी की इस लूट-मारका पता लगा, तो वह एक विशाल सेना लेकर शिवाजीसे भिड़ गया। किन्तु शिवाजीने पलायन कर दिया और विश्रामगढ़में जाकर घेरा डाला। उधर शिवाजीके सेनापति पेशवा— सूरतके मार्गमें सेनापति रणमस्तखांसे परास्त होकर लौट रहे थे— इसी समय दिलेरखांने पनहला-दुर्ग पर आक्रमण किया, किन्तु शिवाजी अतुल विक्रमके साथ दुर्गकी रक्षा करने लगे। परन्तु यहां भी मराठों को पराजित होना पड़ा। तब वे इसका प्रतिशोध लेने के लिये एक विराट सेना लेकर राजापुर पर चढ़ गये। इधरसे शिवाजी भी २० हजार अश्वारोही सैनिकोंको लेकर उनके साथ मिल गये। इसके पश्चात् सब लोग पश्चिम खानदेशमें प्रवेशकर धर्मगांव, चमरग, आदिको लूटते हुए औरङ्गाबादसे ४० मील पूर्वमें जालवा नगरमें उपस्थित हुए। यहां सैय्यदजान मोहम्मद नामके एक विख्यात मुसलमान फकीर रहते थे। शिवाजी चिरकालसे साधु और फकीरोंका सम्मान करते थे, यह सोच कर नगर-निवासियोंने फकीरकी शरण ली। मराठा सैनिकों को भी पता लगा कि नगरवासी धन-सम्पत्ति लेकर फकीरके मठमें चले गये हैं—तो उन्होंने वहीं जाकर उन्हें लूटना आरम्भ किया। फकीरने सैनिकोंको बहुत मना किया। परन्तु वे नहीं माने। इस पर फकीर क्रुद्ध होकर शिवाजीको अभिशाप देने लगा। कुछ लोगोंका कहना है कि इसी अभिशापके कारण पांच मास बाद शिवाजीकी

मृत्यु हो गई। परन्तु इस बातका उल्लेख मुसलमान इतिहासकारोंने ही किया है, जो विश्वास योग्य नहीं है।

मराठा सैनिकोंने चार दिन तक नगरको लूटा। इस लूटमें मराठों के हाथ बहुतसा धन लगा। परन्तु जब वे चलने लगे तो मुगल-सेनापति रणमस्तखांने उनपर आक्रमण कर दिया। दोनों दलोंमें युद्ध होने लगा। अन्तमें रणमस्तखां ही पराजित हुआ। परन्तु इसी समय औरङ्गाबादसे मुगलोंकी २० हजार सेना आ पहुंची, जिसने मराठोंको चारों ओरसे घेर लिया। शिवाजीके साथ ताहिरजी नामका एक पथप्रदर्शक था, जो यहांके पर्वतीय दुर्गम मार्गोंसे पूर्ण परिचित था। मुगलोंको उन मार्गोंका पता तक नहीं था। उसीकी सहायतासे शिवाजी और उनकी सेना गहन-वनोंमेंसे होकर चलने लगी। तीन दिन और रात्रि निरन्तर पथ पर्यटन कर शिवाजी अपनी सेना सहित चौथे दिन निरापद रायगढ़ जा पहुंचे। परन्तु इस आक्रमणमें एक ओर जहां शिवाजीको असंख्य धन प्राप्त हुआ, वहां दूसरी ओर इस युद्धमें उनके चार हजार सैनिक और सेनापति हमीरराव मारे गये— और इस लूटे हुए धनमेंसे भी अधिकांश भाग शत्रुओंके हाथ लगा। बस शिवाजीकी यह अन्तिम युद्ध-यात्रा थी। इसके बाद फिर जीवनमें युद्ध नहीं हुआ।

इसके पश्चात् शिवाजी पुत्र सम्भाजीसे भेंट करनेके लिये पनह-ला गये। सम्भाजी जिस समय मुगलोंके यहां गये थे, उस समयसे ही शिवाजी अनेक आदमियोंको भेज कर सम्भाजीको वापस बुलाने की चेष्टा कर रहे थे। परन्तु दुर्बुद्धि सम्भाजी समझते थे कि मैं पिताका अनुशासन क्यों स्वीकार करूं? मुझमें क्या बुद्धिकी कमी है? मुगलोंके यहां जाने पर मुझे वह स्वाधीनता प्राप्त होगी जो पिताके राज्यमें नहीं प्राप्त हुई। किन्तु हाय मूढ़! तूने न जाने किस

पूर्वजन्मके अज्ञात पुण्यके प्रभावसे देव-चरित शिवाजीको पिताके रूपमें पाया था, उन्हींसे विमुख होकर मुगलोंके सामने जाकर शिर झुकाया । अस्तु, कुछ दिन तक मुगलोंको संगतिमें रहकर सम्भाजीने देख लिया कि जिनको देवता और न्यायपरायण समझता था, वे निरे अत्याचारी और दुष्ट तथा कपटी-धूर्त निकले । औरङ्गजेब बराबर पत्र लिख कर सेनापति दिलेरखांको आदेश दे रहा था कि सम्भाजीको बन्दी करके आगरा भेज दो । परन्तु दिलेरखांने सम्भाजी से प्रतिज्ञा की थी—कि मैं तुम्हारी स्वाधीनताको हरण नहीं करूंगा । कुछ भी हो—अन्तमें सम्भाजी यहांसे भाग खड़े हुए और अपने पितृ-राज्यमें वापस आ गये । मण्डलामें सम्भाजीने पितृ-दर्शन किये । दयालु शिवाजीने भी सम्भाजीका आलिङ्गन किया । इस पिता—पुत्र मिलनसे एक प्रकारका आनन्द स्रोतसा प्रवाहित हो उठा । शिवाजीने सम्भाजीको बहुत समझाया-बुझाया और समझा कि सम्भाजीने संसार देख लिया । अब बुद्धि स्थिर हो जायगी । परन्तु मतिमन्द सम्भाजीके कार्य-कलापोंमें कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ । वही उद्धत स्वभाव और वही उद्दण्डता प्रत्येक कार्योंमें दिखाई देने लगी । शिवाजीकी द्वितीय पत्नीके गर्भजात पुत्रका नाम राजाराम था । राजारामका स्वभाव सौम्य था । शिवाजी सोचते थे कि राजाराम क्योंकि योग्य है, इसलिये इसे ही राज्यका उत्तराधिकारी बनाया जाय । परन्तु सम्भाजी बड़े थे । बड़ेको ही गद्दी मिलनेकी प्रथा थी और है । इसलिये शिवाजी रात दिन इसीकी चिन्ता करने लगे कि इस प्रचण्ड परिश्रमसे स्थापित किये हुए विशाल हिन्दू-साम्राज्यकी कौन रक्षा करेगा ।

इसी प्रकारकी चिन्ता और उत्कण्ठामें उनके दिन व्यतीत हो रहे थे । इसी समय उनका स्वास्थ्य खराब हो गया । दिन पर दिन

शिथिलता बढ़ने लगी और उन्हें ज्ञात होने लगा कि अब मृत्यु सन्निकट है। वे बड़ी कातरताके साथ सोचने लगे कि हाय ! इस समय क्या गुरुदेवके दर्शन नहीं होंगे। परन्तु विधाताके विचित्र विधानसे गुरुदेव स्वामी रामदास वहां उपस्थित हुए। शिवाजीके पद धूलि ग्रहण करने पर गुरु रामदासने आशीर्वाद दिया। बहुत दिनोंके बाद गुरुदर्शन होनेसे शिवाजीकी दुश्चिन्ता, उत्कण्ठा, भग्न स्वास्थ्य और पारिवारिक नानाप्रकारकी अशान्ति गुरु-दर्शनसे बहुत कुछ दूर हो गई। शिवाजीने हृदयके समस्त आवेगको संयत कर गुरुदेवसे पूछा,—"गुरुदेव, किस पूर्वकृत अपराधके कारण मेरे औरससे सम्भाजी जैसा लम्पट और पाखण्डी पुत्र उत्पन्न हुआ ? जीजा जैसी पितामही और सईबाई जैसी साध्वी धर्मपरायणा जननी पाकर भी यह कुलाङ्गार कहांसे उत्पन्न हुआ ?" इस समय शिवाजीके नेत्रोंसे अविरल अश्रुपात हो रहा था। रामदास स्वामी गम्भीर होकर बोले,—"वत्स, धर्मपरायणा गान्धारीके गर्भसे जन्म ग्रहण करके और सर्वप्रधान-पितामह भीष्मसे उपदेश ग्रहण करके भी कुलाङ्गार दुर्योधन उत्पन्न हुआ था। परन्तु दूसरी ओर राक्षस हिरण्यकशिपुके औरससे भक्त प्रह्लादने जन्म लिया था। संसारके ये समस्त व्यापार रहस्यके पर्देमें छिपे हुए हैं। हमारा कर्तव्य तो यही है कि जिसको हम हृदयसे ठीक समझते हैं, उसे प्राणपणसे सम्पन्न करें। तुमने सम्भाजीको सत्‌शिक्षा देनेमें कोई त्रुटि तो की नहीं, इसपर भी यदि वह ऐसा दुर्वृत्त निकला, तो तुम्हारा क्या अपराध है ? और तुम कहते हो कि मेरा किया हुआ आजन्म परिश्रम व्यर्थ गया, यह धारणा भी ठीक नहीं है। भगवान्‌ने मुसलमानोंको भारतमें लाकर उसका भार उनपर ही अर्पित किया है। इस्लाम-धर्मके महदभावसे इस अधःपतित हिन्दू जातिको शिक्षा देनेके लिये ही भगवान्‌ने मुसलमानोंको यहां प्रतिष्ठित

किया है । इस धर्ममें जाति-भेद नहीं है । एक महान् ईश्वर-पूजा ही प्रधान धर्म है । इस्लामके ये समस्त महद्भाव ही हिन्दू-समाजके शोणित-प्रवाहमें सञ्चारित होकर नाना जाति भेदोंसे प्रपीड़ित और विच्छिन्न इस प्राचीन हिन्दू जातिको उठनेके लिये बाधित करेंगे। उधर भगवद्भक्तिसे हिन्दुओंके चरित्र में स्निग्धताका सञ्चार होगा। इसीलिये भगवान्ने इस जातिको भारतमें भेजा है। परन्तु मुसलमान लोग अपने धर्मको भूल कर बल-प्रयोगसे हिन्दुओंका धर्म-परिवर्तन करना चाहते हैं, इससे सम्राट् औरंजेबका पतन भी अनिवार्य हो गया है। सम्राट् अकबरकी उदारनीतिने इस राज्यको भारतमें प्रसार किया था, और औरंगजेबकी अनुदारता इसका पतन कर देगी। तुम देखते नहीं हो कि दक्षिणमें ही औरंगजेबने राज्य-विस्तारकी कितनी सतत चेष्टा की, परन्तु उसका फल कुछ भी नहीं हुआ। उसके हजारों सैनिक अकाल मृत्युका ग्रास बने और राजकोष धनसे खाली हो गया। उसकी अनीति और अनुदारता ही इसका एकमात्र कारण है। वह नराधम पिशाच असंख्य हिन्दू-कुल कामनियोंको बलपूर्वक अपहरण करके अपने अन्तःपुरमें डाल देता है और उनसे बलात् दासी-कर्म कराता है। इसका अवश्यम्भावी फल यह होगा कि इस महा-प्रतापशाली साम्राज्यकी अत्युच्च अट्टालिका बहुत शीघ्र भूमिसात् हो जायगी।"

थोड़ी देर चुप रह कर स्वामी रामदासने फिर कहा,—"हां भूमि-सात् हो जायगी, क्यों कहता हूं ? तुमने ही तो इस साम्राज्यके गौरवको चूर्ण-विचूर्ण करना आरम्भ किया था। कहां वह अतुल ऐश्वर्यका आधिपति दिल्लीश्वर-सम्राट् औरङ्गजेब और कहां दक्षिणके एक छोटे जागीरदारके पुत्र तुम ! तुम्हारा मुकाबिला करनेमें दिल्ली-श्वरका राज-कोष खाली हो गया ! सायस्ताखां, जयसिंह, यशवन्त-

सिंह, बहादुरखां, दिलेरखां प्रभृति महावीरोंका जगत्-विख्यात शौर्य-वीर्य लाञ्छित हो गया। सम्राट् औरंगजेबकी शयन-शय्या आज कण्टकाकीर्ण है! इसका क्या कारण है कि तुम उस विश्व-विधाताकी शक्तिको पाकर ऐसे दुर्द्धर्ष हो गये। प्राचीन हिन्दू जातिके जीर्ण शरीरमें नवीन शोणित संचार करनेके लिये ही भगवानने तुमको भेजा है। निराशाके गम्भीर अन्धकारमें पतित हिन्दू-जातिके प्राणोंमें नव-आकांक्षाका आलोक आलोकित करनेके लियेही तुम्हारा यहां आगमन हुआ है। हिन्दू साम्राज्य-स्थापन ही तुम्हारे जन्मका उद्देश्य है। तुमने अपना कार्य सम्पन्न कर दिया। तुम स्वराज्य स्थापन कर स्वयं आनन्दोपभोग करोगे, अथवा तुम्हारे वन्शधरगण राज्य-सुखसे गौरवान्वित होंगे, इसके लिये तुम्हारा यह उद्योगनहीं हुआ है। किन्तु तुमने जो उदाहरण उपस्थित किया है, उससे युग युगान्तर तक भारतवासी शिक्षा लेंगे। तुम्हारा कार्यसुसम्पन्न हो गया। इस समय हृदयके अवसादको दूर कर अवशिष्ट कार्यको समाप्त करो। उसके लिये प्रयत्नशील हो।"

गुरु रामदासकी सान्त्वनामयी उपदेश वाणीको सुनकर शिवाजीका हृदय शान्त हो गया। उनको दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ। शिवाजीने गुरु रामदासके चरणोंमें फिर प्रणाम कर कहा,—"गुरुदेव ज्ञात होता है कि मेरा यह जीवन शेष हो गया, इस जन्ममें अब और दर्शन नहीं होंगे। परन्तु क्या अगले जन्ममें भी यह दास इन चरणोंकी फिर पूजा करनेका सौभाग्य प्राप्त कर सकेगा? उत्तरमें स्वामी रामदासने कहा,—"वत्स, आत्मा अविनाशी है। हम लोग भगवान्की इच्छानु-सार ही संसारमें रहते हैं। हम लोग मोहमें पड़ कर अपनेको सब कुछ समझने लगते हैं और संसारके बन्धनोंमें आबद्ध हो जाते हैं। जब साधना और दिव्य ज्ञान द्वारा हमारा यह बन्धन छिन्न न हो, आत्माके

अविनाशी होने पर भी हमें कर्मबन्धनोंके अनुसार फल भोगना पड़ता है—और जो पुण्यात्मा गण अपने समस्त कार्यों को निष्काम भावना से सम्बद्ध करके, अपने समस्त कार्यों को भगवान्के चरणोंमें समर्पण कर देते हैं, वे कर्म द्वारा ही मुक्त हो जाते हैं। जब तक बन्धन हैं, तब तक—प्रकृति मिलन सम्भव नहीं है। इसलिये तुम अपने कार्यों को सम्बद्ध कर दो। भगवान् जाने परलोक गमन पहले किसका होता है, परन्तु जब तक मोहका यह आवरण विदूरित न हो, तब तक मिलन असम्भव है। परन्तु मैं भगवान्की आराधना द्वारा पुण्य विसर्जन करूंगा, इस पुण्यके सिवा जातीय या व्यक्तिगत जीवनकी मुक्ति की सम्भावना नहीं है। तुम जैसे परकालमें मुझसे मिलनेकी इच्छा करते हो। वैसे ही क्या मुझे उस मिलनकी आकांक्षा नहीं है? तुम्हारे जैसे शिष्यके गौरवसे मैं गौरवान्वित हो गया हूं। क्या तुम्हारे जैसे शिष्य कहीं सरलतासे मिल सकते हैं? तुमने मेरी तपस्या को सिद्ध कर दिया। संसारको मैंने अपना परिवार समझा है। वत्स, तुम्हारे भीतर मुझे अपनी तपस्या मूर्तिमान दृष्टिगोचर होती है। मैं देश-यात्राके लिये प्रस्थान कर रहा हूं, किन्तु हमारे मिलनमें कोई देश-काल व्यवधान नहीं डाल सकता है। जब हम इस जड़ देहको परित्याग कर भगवान्के चैतन्यमय राज्यमें विहार करनेमें सक्षम होंगे, तब हम लोगोंका मधुर-सम्बन्ध मिलन पर प्रतिष्ठित अविछिन्न-मिलनमें परिणत हो जायगा। वत्स, तुम धन्य हो और मैं भी धन्य हूं। जिसे तुम शिष्यके रूपमें प्राप्त हुए। अब मैं जाता हूं—तुम अपने शेष कर्त्तव्यका पालन करो।" इस प्रकारसे आशीर्वाद देते हुए स्वामी रामदासने वहांसे प्रस्थान किया।*

---

* शिवाजी और रामदास दोनों देशभक्त थे। मार्ग विभिन्न होने पर भी उद्देश्यने दोनोंको मिला दिया था। दोनोंने देशकी सेवा की। शिवाजी-की रामदास—स्वामीमें अनन्त श्रद्धा थी—और शिवाजो पर उनका परम स्नेह। शिवाजीकी मृत्युके एक वर्षके बाद रामदास स्वामीने भी परलोक गमन किया था। लेखक।

छब्बीसवां-परिच्छेद ।

शिवाजीकी मृत्यु और उनके बाद ।

—::*(:)*::—

एक एक कर दिन व्यतीत होने लगे। शिवाजी फिर शान्त-चित्तसे निष्ठाके साथ राज-कार्य करने लगे। किन्तु अब अधिकांश समय दीन-दरिद्रों और विपन्नोंकी सेवा और सहायतामें ही व्यतीत होता था। इसी बीचमें सन् १६८० की २४ वीं मार्चको ज्वरातिसार रोगसे शिवाजी पीड़ित हुए। धीरे धीरे रोगने भीषण रूप धारण किया। जोड़ोंमें वेदना होने लगी और उठने-बैठनेकी शक्ति नष्ट होने लगी। शरीर क्रमशः अवसन्न होने लगी। शिवाजीने भी मनमें समझ लिया कि महाप्रयाणमें अब और विलम्ब नहीं है। शिवाजीको इस प्रकारसे व्याधिग्रस्त देख कर उनके कर्मचारी, आत्मीय स्वजन और राजभक्त प्रजागण दिन-रात उनकी व्याधिमुक्तिके लिये भगवान्से प्रार्थना करने लगे। इस बीचमें प्रधान कर्मचारियोंको बुला कर शिवाजीने राज्य परिचालनके सम्बन्धके अनेक उपदेश दिये। सम्भाजी और राजाराम दोनोंमें जिस प्रकारसे सद्भाव स्थापित होकर स्वराज्य-की रक्षा हो, इसके लिये सब लोगोंको समझाया। क्रमशः शरीर और भी दुर्बल होने लगा। अन्तमें वह अन्तिम समय आ उपस्थित हुआ। ५ अप्रैल रविवार चैत्र मासकी पूर्णिमा तिथि थी, बसन्त-पवनके मृदु मन्द हिल्लोलोंने वृक्षपत्रोंको स्पर्श कर चुपचाप किसी निदारुण सम्वादका प्रचार किया। सघन बनोंकी उच्च वृक्ष शाखाओं पर बैठे हुए पक्षियोंकी करुण सङ्गीत-ध्वनिने महाराष्ट्रवासियोंके प्राणोंको

विषण्ण कर दिया ! मन्दिरों-मठोंमें जो जप—तप और मङ्गल-अनुष्ठान हो रहे थे—उनमें कुछ नीरसता प्रकट होने लगी। उधर मृत्यु-शय्या पर पड़े महावीर शिवाजी ध्यान-निमिलित नेत्रोंसे महाप्रयाणके मुहूर्तको प्रतीक्षा कर रहे थे। इसी समय जब कि प्रखर धूप पड़ रही थी, सटपटाये हुए धूलि-धूसरित शरीर स्वामी रामदासने वहां पदार्पण किया। शिवाजीकी शय्याके चारों ओर उनके आमात्यगण एवं आत्मीयजन बैठे हुए थे। परन्तु सबके मुखों पर निराशा झलक रही थो। चारों ओर निस्तब्धता थी। इसी समय स्वामी रामदासने कोमल-स्वरमें कहा,—"शिवा !" चिर-परिचित मधुर स्नेह स्वरको सुन कर एक बार आंखें खोलीं। आज भी वही स्निग्धहास्यकी एक सूक्ष्मसी रेखा मुख पर दृष्टिगोचर हुई। शिर हिला कर शिवाजीने गुरुको प्रणाम किया—और क्षण भरमें एक बार पृथ्वीकी ओरको देख कर परमधामको प्रयाण किया ! मालूम होता था कि जैसे अब तक रामदास स्वामीके ही आनेकी देर थी।

शिवाजीके परमधामको प्रयाण करते ही रामदास स्वामी खड़े हो गये और भर्राये हुए स्वरमें बोले,—"प्राण-प्रिय शिवा, जाओ ! अपने कर्मद्वारा अर्जित परमधामको जाओ ! वहां तुम्हारे लिये महावीर पृथ्वीराज एवं महाराणा प्रताप तुम्हारो प्रतीक्षा कर रहे हैं। भीष्म, द्रोण, अर्जुन प्रभृति वीरगण स्वागत करनेको पुष्प-मालायें लिये खड़े हैं। वत्स, तुम्हारा जन्म धन्य है ! यह जननी भारतभूमि धन्य हैं ! तुमने लुप्त-गौरव भारतमहीको अपनी कठोर तपस्या द्वारा धन्य किया है। अब भी हिन्दू-जातिका गौरव लुप्त नहीं हुआ है।*

'He was,' he (Aurangzib) said "a great captain and, the only one who has had the magnanimity to raise a new kingdom, while I have been endeavouring to destroy the ancient soverei

हिन्दू जान गये हैं कि आत्मगौरव क्या है ? हम क्या नहीं कर सकते ? शक्ति और उदारतापूर्ण महाप्राणताका तुमने सच्चा पाठ पढ़ा दिया। स्वधर्मानुरागी रहते हुए भी परधर्मोंसे द्वेषकी आवश्यकता नहीं। * इस भूमि पर रहने वाले सभी भाई हैं, सहोदर हैं। बेटा, तुम राजा होकर भी दीन और संन्यासी थे। कर्मफल त्यागी और कर्तव्य पालनमें कठोर थे। हे महाबीर, यह सोती हुई हिन्दू जाति तुम्हारे नाम स्मरणसे उठ खड़ी होगी।" * इस प्रकारसे शोकाञ्जलि देकर गुरु रामदास वहांसे प्रस्थित हुए।

महराष्ट्रका सूर्य अस्त हो गया। जिस महाराष्ट्र-केशरीने महाशक्ति सम्पन्न सम्राट् औरङ्गजेबको निरन्तर ३६ वर्ष तक सदा परास्त किया था, वह सदाके लिये महानिद्रामें सो गया ! जिस नरसिंहने बीजापुर और गोलकुण्डा जैसे विशाल राज्योंको ३६ वर्ष तक उङ्गली के इशारे पर नचाया था, वह इस संसारसे चला गया। किन्तु उसने

---

gnities of India. My armies have been employed against him for seventeen years; and nevertheless, his state has been always increasing (Orme's Historical fragments.)

"Shiva guarded the honour of the peasants of his own dominion, and abstained from every kind of wicked act except rebellion (against the Emperor) and plundering caravan. He strictly ordered his men to respect the honour of women and families and quorans which they might capture. Any one violating the order was punished. Shivaji's religious policy was every liberal. He respected the holy places of creeds in his raids and made endowments for Hindu temples and Muslim saints, tombs and mosques alike. He not only granted pensions to Brahman scholars versed in the Vedas, Astronomers, Anchorses, but also built hermitages and provided subsistence at his own cost for the holy men of Islam. (Kafi Khan History.)

अपने शौर्य-वीर्य और प्रखर बुद्धिसे अभिमानी औरङ्गजेबका अभिमान चूर्ण विचूर्ण कर दिया। हिन्दू जातिके लुप्त गौरवको प्रकाशमें लाकर संसारको चमत्कृत कर दिया। हिन्दू जातिका इस धराधाममें जबतक अस्तित्व रहेगा, तब तक बराबर शिवाजीकी गुण-गरिमाका बखान होता रहेगा—और हिन्दू जातिके नवयुवक शिवाजीके आदर्शको सामने रख कर सदा अपनी जातिकी रक्षाके लिये अग्रसर होते रहेंगे।

× × ×

अब हम संक्षेपमें शिवाजीके बादकी स्थितिका उल्लेख कर इस पुस्तकको समाप्त करेंगे।

शिवाजीके परलोकवासके पश्चात् उनकी मृत्युका समाचार छिपानेकी चेष्टा की गई। प्रधान दुर्गका द्वार बन्द करके भीतर ही भीतर अन्त्येष्ठी क्रिया सम्पन्न की गई। उनकी दूसरी स्त्री सुतलाबाई उनके साथ सती हुई। अन्त्येष्टी संस्कार उनके कनिष्ठ पुत्र राजाराम द्वारा सम्पन्न हुआ। मृत्युके समाचारको छिपानेका कारण यह बताया जाता है कि सम्भाजी पनहला-दुर्गमें नजरबन्द थे। शिवाजी उनके चरित्रको देखकर अप्रसन्न रहते थे। इससे भी राजारामकी माता सोयराबाईको कुछ उत्तेजना मिली थी। वे चाहती थीं कि सम्भाजीको पनहला-दुर्गमें सदा कैद रखा जाय और उनके पुत्र निष्कण्टक होकर शिवाजोके राज्यका उपभोग करें। सोयराबाईके ही प्रभावमें आकर मन्त्रीमण्डलने भी सम्भाजोको उनके पिताकी मृत्युका समाचार नहीं दिया। परन्तु सम्भाजीको अन्तमें किसी प्रकारसे पिताकी मृत्युका सम्बाद मिल ही गया। इस सम्बादसे वे उन्मत्तसे हो गये। सम्भाजी कुपथगामी होकर भी वोरतामें शिवाजी के पुत्र कहलानेके योग्य थे। उन्होंने कई एक सेनापतियोंको अपने

पक्षमें करके राजारामकी सेनासे युद्ध किया और अन्तमें राजाराम और उनके मन्त्रीमण्डलको परास्त करके रायगढ़ पर अधिकार कर लिया।

रायगढ़में पहुंच कर सम्भाजीने जो क्रूर कर्म किये हैं, उनसे सदा भारतका इतिहास कलङ्कित रहेगा। सम्भाजी वीर थे, परन्तु उनमें उदारता और महाप्राणताका चिह्न तक नहीं था। उन्होंने सर्वप्रथम राजाराम और उनके मन्त्री आणाजीदत्त आदिको बेड़ियोंसे जकड़ कर कैदमें डाल दिया और विमाता सोह्यरावाई राजारामकी माताको पहले कैद किया पीछे यह कहकर कि इसीने मेरे पिताको विष देकर मारा है, वड़े अपमानके साथ मरवा डाला। इस प्रकारसे अपने विरोधियोंका दमन करके सम्भाजीने अगस्त मासमें धूम-धामसे अपना राज्याभिषेक किया। परन्तु सम्भाजी बड़ी कठिनतासे ९ ही वर्ष राज्य कर पाये। सन् १६८९ में सम्राट् औरङ्गजेबने सम्भाजीको एक गहरी चालमें फंसा कर बड़ी निष्ठुरतासे मरवा डाला। सम्भाजीका ९ वर्षका राज्य कैसा रहा, यह इस ग्रन्थके आलोच्य विषयसे बाहरकी बात है। जिन्हें बादका इतिहास पढ़ना हो वे मराठोंका इतिहास पढ़ें।

शिवाजीके परलोक-वासके समय उनका राज्य चार भागोंमें विभक्त था। उत्तरमें रामनगर और दक्षिणमें बम्बई। मध्यमें गोदावरी और पूर्वमें बागलानासे आरम्भ करके सितारा और कोल्हापुर तक उनके राज्यकी सीमा थी। इसी विस्तृत प्रदेशमें उन्होंने स्वराज्य स्थापन किया था। शिवाजीका अन्तिम जीवन पश्चिम कर्नाटक-प्रदेश बेलगांवसे लेकर तुङ्गभद्रा नदीके तीर पर्यन्त प्रदेश पर अधिकार करनेमें व्यतीत हुआ था। उत्तर मोरोपन्थ, पिंगले, दक्षिणके आणाजीदत्त एवं दक्षिण-पूर्व भू-भागके शासक दत्तजीपन्थ थे। इनके अतिरिक्त और भी कितने ही स्थानों पर शिवाजीका अधिकार था।
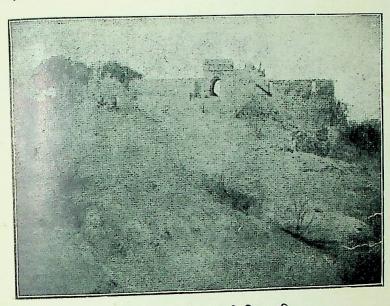
रायगढ़—स्थित शिवाजीकी चिताभूमि।
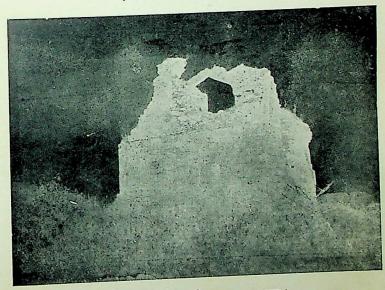
वर्तमानमें—शिवाजीका जन्म स्थान।

उनके पास कुल २४० दुर्ग थे। शिवाजीके परलोक-वास करते समय उनके अधिकृत प्रदेशसे उन्हें ८ करोड़ रुपये वार्षिककी आय थी। मरते समय इनके पास कई करोड़ रुपया, मणि मुक्ता हजारों हाथी घोड़े थे। ४५ हजार पैदल-सैनिक और ६० हजार सिलेदार सैनिक थे। इसके अतिरिक्त एक लाख मावला सैनिक उनके कार्यमें नियुक्त थे। मावलोंको लेकर ही शिवाजी रणमें कूदे थे—और इनको लेकर ही विजय प्राप्त की थी। मावलों पर शिवाजीका अत्यन्त स्नेह रहता था। किसी कर्मचारीको नियुक्त करते समय शिवाजी उसकी स्वयं परीक्षा लेते थे। हिन्दू धर्ममें उनकी अथाह श्रद्धा थी। उनके सैनिकों को मद्य, मांस और वेश्याओंके सम्पर्कसे सदैव दूर रखा जाता था।*

सभी तरहके दीवानी और फौजदारी मामलोंके उनकी अदालतों द्वारा फैसले होते थे। पुलिस और न्याय-विभाग सब अलग अलग थे। हिसाब-किताबकी सदैव कड़ाईसे जांच-पड़ताल होती थी। मामले-मुकद्दमोंके फैसले करते समय हिन्दू-धर्म-शास्त्रकी व्यवस्था ली जाती थी। रघुनाथपन्थ हिन्दू कानूनके सर्वोपरि पण्डित समझे जाते थे। उनकी व्यवस्था सब लोगोंको यहां तक कि स्वयं शिवाजी तकके लिये मान्य होती थी। रघुनाथपन्थ बड़े मर्मज्ञ विद्वान्, स्पष्टवक्ता—एवं न्याय परायण व्यक्ति थे। शिवाजीकी उस समयकी राज्य-व्यवस्थाको आजकलका सभ्य-संसार भी आदर और सम्मानके साथ देखता है।

——o——

* No soldier in the service of Sivaji was permitted to carry any female follower with him in the field—on pain of death

(*History of the Marhattas by Grant Duff*)

परिशिष्ट ।

शिवाजीके चरित्रपर एक दृष्टि ।

——*(:)*——

शिवाजी जैसे शूर वीर साहसी, अदम्य उत्साही और धर्मानुरागी कर्तव्य परायण थे, वैसे ही वे राजनीतिज्ञ भी थे। हिन्दुओंमें अनेक वीर हो चुके हैं, जिन्होंने अपने शौर्य वीर्यसे पृथ्वीको कम्पा दिया था। साहसियोंकी भी कमी नहीं रही है। महाराज पृथ्वीराज जैसे अतुल प्रतापी, महाराणा प्रताप जैसे दृढ़ प्रतिज्ञ, गुरु तेजबहादुर जैसे आत्मविसर्जन करनेवाले महापुरुष और गुरु गोविन्द सिंह जैसे संगठन-कर्त्ता मातृ-भक्त, तथा वीर वैरागी बन्दा जैसे कर्मठ आत्मत्यागी प्रातःस्मरणीय इस वीर भारत वसुन्धरा पर जन्म लेकर हिन्दू जातिको गौरवान्वित कर चुके हैं। अंग्रेजोंके प्रतिद्वन्द्वी महाराज रणजीत सिंहने भी इसी जातिमें जन्म लेकर हिन्दू जातिके मुखको उज्ज्वल किया था। परन्तु इतिहासके पाठक इस बात को जानते हैं कि निकट पूर्वसे लेकर अब तक हिन्दू जातिमें कोई ऐसा वीर नहीं उत्पन्न हुआ जो शिवाजीका समकक्ष हुआ हो। महाराणा प्रताप के आत्मत्याग और उनकी दृढ़तामें अविश्वास करनेवाला लम्पट है। महाराज पृथ्वीराजकी देशभक्तिमें सन्देह करने वाला मूर्ख है। इसी प्रकारसे गुरु तेगबहादुर और गुरु गोविन्दकी धर्मदृढ़ता एवं राष्ट्रीयता को सन्दिग्ध बतानेवाला पापी है। परन्तु हम इन महापुरुषोंके साथ जब शिवाजीकी तुलना करते हैं; तो हमें कुछ और प्रतीत होता है।

उनमें वे गुण तो थे ही जो उपरोक्त महापुरुषोंमें थे। परन्तु उनके अतिरिक्त उनमें और भी कुछ विशेषता थी। हमारा तो विश्वास है कि महाराज पृथ्वीराजको जगह यदि उस समय शिवाजी हुए होते, तो मुसलमान भारतमें प्रवेश ही न कर पाते। यही क्यों, इस विशाल भारतकी राजनीतिक बागडोर आज अंग्रेजोंके हाथमें होती, हमें तो इसमें भी सन्देह है। महाराज पृथ्वीराजको मुसलमानोंने जयचन्दके साथ मिलकर छलसे परास्त किया था। महाराणा प्रतापने भी अपनी सरलतासे अपनी शक्तिका नाश करवाया था। गुरु तेगबहादुर और गोविन्दसिंह तथा वीर वैरागी बन्दाका भी छल छपटसे विनाश किया गया था। हिन्दू सदासे धर्म युद्ध करते आये हैं। इसीलिये वे बार बार छल कपटका आश्रय लेकर पराजित किये गये। छत्रपति शिवाजीके साथ भी वही चाल चली गई थी। परन्तु शिवाजी इस राजनीतिमें भी कपटी शत्रुओंके गुरु निकले। उन्होंने अपने कार्यकलापोंसे 'शठं प्रति शाठ्यं चरेत्'—का साक्षात् उदाहरण संसारके सामने रख दिया। यदि शिवाजी इस नीतिका अवलम्बन न करते—तो उनका भी कभी का सर्वनाश कर दिया गया होता।

शिवाजी एक साधारण जागीरदारके पुत्र थे। उनकी माता उस समय एक दुर्गमें बन्दिनी थी, जब उनका जन्म हुआ। उनके जन्मकी घटनाको स्मरण करनेसे ऐसा प्रतीत होता है, कि—भगवान् श्रीकृष्ण-की तरहसे पापियोंका विनाश करनेके लिये ही शिवाजीने जेलकी चारदिवारीके भीतर जन्म लिया —और पूनाके एक साधारण स्थानमें उनका लालन पालन हुआ। वृद्ध कोण्डदेवने उनको साधारण शिक्षा दी। बाल्यावस्थामें ही शिवाजीने मावला अधिवासियोंको अपनी उदारतासे स्नेह सूत्रमें आवद्ध कर लिया। जिस समय शिवाजीका जन्म हुआ—उस समय विदेशी विधर्मियोंके अत्याचारसे भारतमही

पीड़ित हो रही थी। हिन्दू जाति कई शताब्दियोंसे स्वाधीनताका विसर्जन करके पराधीनताकी बेड़ियोंसे जकड़ी पड़ी थी। उसी समय अवतारी महापुरुष शिवाजीका जन्म हुआ !

शिवाजीके चरित्र पर आजन्म दुःखिनी, किन्तु महापतिव्रता साध्वी धर्मानुरागिनी वीर जननी-जीजाबाईके धर्मभावका गहरा प्रभाव पड़ा। बाल्य गुरु वृद्ध स्वामी कोण्डदेवकी देशभक्तिने शिवाजीका ध्यान देशकी ओर आकर्षित किया। साधु तुकारामकी भगवद्भक्तिसे शिवाजीके आत्मज्ञानका पट खुल गया और सबसे रामदासकी विरक्ति और राष्ट्रीयताने तो शिवाजीको एक और ही अभूतपूर्व पथका पथिक बना दिया।

शिवाजीने यौवनावस्थामें पदार्पण करते ही थोड़ेसे मावलोंको साथ लेकर कार्यक्षेत्रमें पदार्पण किया। उनके पास न धन था, न सेना। वे पढ़े लिखे भी नहीं थे—न उन्होंने किसी देशका इतिहास ही पढ़ा था। उनके पास शस्त्र भी नहीं थे। सर्वप्रथम उन्होंने विशाल शक्तिसम्पन्न राज्य बीजापुरके कुछ दुर्गोंको किसी प्रकार अपने अधिकारमें किया। इस पर बीजापुर वाले बहुत अप्रसन्न हुए और बार-बार इसका कारण पूछा; प्रतिशोध लेनेकी चेष्टा की। शिवाजीके पिता निरपराध साहाजीको केवल पिता होनेके अपराधमें कैद कर लिया गया। परन्तु शिवाजी धीरे धीरे धन और जन संग्रह करने लगे। उन्होंने अपने विचित्र कार्योंसे अपने साथियोंको मोहित कर लिया। मूर्ख मावला सैनिकोंको सङ्घबद्ध करके उन्हें खासा सैनिक बना लिया। अपनी प्रतिभाके चमत्कारसे उन्होंने उसी जातिमेंसे तानाजी और सूर्याजी जैसे वीरश्रेष्ठ निकाल कर बाहर किये। इसी प्रकारसे अपनी प्रतिभाके बलपर वे स्वयं इतने शक्ति सम्पन्न हो गये कि आस पासके राज-रजवाड़े उनसे भयभीत होने लगे। इसके बाद उन्होंने

बीजापुर, गोलकुण्डा, मुगलों तथा अंग्रेजोंको कैसे बचाया; इसका इस पुस्तकमें विशद वर्णन हो चुका है। प्रबल पराक्रमी शक्ति सम्पन्न मुगल सम्राट् औरङ्गजेब उस समय दक्षिणमें अपने राज्य-विस्तारका प्रबल प्रयत्न कर रहा था। शिवाजीकी प्रतिभाने उसे आगे बढ़नेसे रोक दिया और ३६ वर्ष तक वह बराबर उसी प्रकारसे रुका रहा। उनकी असंख्य सेना मारी गई, राजकोष धनसे रिक्त हो गया, राजा यशवन्त सिंह और जयसिंह निराश होकर महाराष्ट्रसे बिदा हुए। सेनापति अफजलखांको जानसे हाथ धोने पड़े। शायस्ताखां बड़ी वीरतासे अकड़ कर दक्षिणमें आया था, परन्तु उसे अपमानित होकर भागना पड़ा। इस बीचमें एक बार विश्वासघात करके शिवाजीको आगरा ले जाकर बन्दी किया गया, परन्तु शिवाजी वहांसे ऐसी सफाईसे निकल भागे कि दुर्दान्त औरङ्गजेबकी बुद्धि कुण्ठित हो गई। इसके बाद दिलेरखां, वहादुरखां आदि सेनापतियोंकी जो दुर्गति की गई, वह इतिहास प्रसिद्ध है ही। सूरत और कर्नाटकको लूट कर शिवाजीने प्रभूत धन प्राप्त किया। साहाजीकी चालीस हजार सालाना आमदनीकी जागीर शिवाजीकी प्रतिभासे बढ़कर ९ करोड़ रुपये वार्षिककी होगई। अपने ठाठ बाटसे मुगल सम्राट्की वरावरी करने लगे। इसके बाद जो हुआ वह आप इस जीवन चरित्रमें पढ़ ही चुके हैं।

शिवाजीने हिन्दू जातिमें अचिन्तनीय साहस और उत्साह भर कर स्वाधीनताका मन्त्र फूंका; जिससे मृतप्राय हिन्दू-जातिमें सञ्जीवनी शक्तिका सञ्चार हुआ। इसके अतिरिक्त शिवाजी, मातृ-पितृ-भक्त, पुत्र स्नेहशील—पिता, एवं प्रेमी पति थे। यद्यपि उस समयकी प्रथाके अनुसार उन्हें बहु विवाह करने पड़े थे, परन्तु सबके प्रति कर्त्तव्य पालन करनेमें सदा यत्न शील रहे। उन्होंने सदा आत्मसंयमसे काम लिया। वे धर्मपरायण थे, परन्तु धर्मान्ध नहीं थे। वे जैसे अपने

मन्दिरों—मठों और साधु-सन्तोंकी प्रतिष्ठा करते थे--वैसे ही मस्जिदों, फकीरों और कुरानको, उन्होंने सदा श्रद्धाकी दृष्टिसे देखा—और उनकी रक्षा की। उनका नैतिक चरित्र इतना उच्च और उज्ज्वल था, कि उसे स्मरण कर रोमाञ्च हो जाता है। स्त्रियोंकी उन्होंने सदा प्रतिष्ठा की। सावित्रीबाईका अपमान करनेवालेकी आंखें फोड़कर उसे आजन्म कैदमें डाल दिया था। यही क्यों जब उन्होंने किसी ब्राह्मण-कन्या पर पुत्र सम्भाजी द्वारा बलात्कार होनेकी बात सुनी तो तुरन्त न्याय और धर्मका अवलम्बन कर पुत्र सम्भाजीको पनहला दुर्गमें कैद कर दिया। वे स्वयं भी पर स्त्रीको मातृवत् समझते थे। उनको स्वयं तो विलासिता छू तक भी न सकी थी, किन्तु उन्होंने उसका सैनिकों तकसे सम्पर्क नहीं होने दिया था।

इतिहासकारोंने शिवाजीको शैयतानका अवतार, डाकू, विश्वास-घाती लिखा है। परन्तु हम तो शिवाजीके चरित्रका जितना अधिक विश्लेषण करते हैं, उतना ही अधिक महत्वपूर्ण मालूम होता है। वीर शिवाजी अफजलखांकी यदि हत्या न करते तो वह उनको बन्दी कर लेता और मार डालता या कैद करके उनके स्वराज्यके स्वप्नको भङ्ग कर देता। इसी प्रकारसे अभिमानी सायस्ताखांको शिक्षा न देते तो वह शैयतानी करनेसे कभी बाज न आता। आगराकी कैदसे भाग निकलना—शिवाजीकी बड़ी भारी राजनीतिज्ञता थी। कर्नाटक और पूनाको लूटना एक साधारण बात है। मुगलोंने तो सदा यही किया था। फिर शिवाजी ही क्यों दोषी ठहराये जाते हैं। अब रही सन्धि करने और भङ्ग करनेकी बात, सो हम सारे संसारमें आज भी देख रहे हैं—कि वैसा ही हो रहा है। फिर शिवाजी ही विश्वासघाती क्यों ठहराये जाते हैं। हमारी समझमें तो उन कलुषित-हृदय इति-हासकारोंने जातीय द्वेषके कारण ही शिवाजीको चोर डाकू और

विश्वासघातक लिख डाला है। पक्षपातका चश्मा उतार कर देखा जाय तो हमें तो संसारमें तबसे लेकर अब तक एक भी आदमी ऐसा उत्पन्न हुआ नहीं दीखता जिसको हम शिवाजीका समकक्ष कह सकें।

योरोपमें वीरवर नैपोलियनको भी बड़ा गौरव प्राप्त है। नैपोलियनकी वीरता निस्सन्देह चिरस्मरणीय है। परन्तु—शिवाजीमें और नैपोलियनमें आकाश पातालका अन्तर है। नैपोलियनने वीरतापूर्वक दूसरोंसे फ्रांसका राज्य छीनकर स्वयं राजगद्दी प्राप्त की थी। अपनी प्रतिभा और वीरता तथा आत्मविश्वासके आधार पर एक विशाल सेनाका संगठन कर डाला और उसीकी शक्तिसे समस्त योरोपको भयभीत कर दिया था। परन्तु इससे नैपोलियनकी जाति—और उसके देशको क्या लाभ हुआ ? नैपोलियनके सभी क्रिया कलाप अपने लिये थे। परन्तु शिवाजीने मरणोन्मुख हिन्दू जातिकी पराधीनताकी बेड़ियोंको काटनेके लिये हाथमें खड्ग धारण की। विदेशी और विधर्मी जो भारतवासियोंकी छातीपर चढ़कर उनका रक्तपान कर रहे थे, उन्हें उन्होंने अपनी प्रतिभा और तेगसे रोक दिया। मरती हुई निराश हिन्दू जातिमें सञ्जीवनी शक्तिका सञ्चार किया और वह प्रतिशोध लेनेके लिये कटिबद्ध हो गई। यही शिवाजीके चरित्रमें विशेषता थी। उनके सब कार्य परोपकारके लिये थे। शिवाजीने अपने अतुल साहस, असाधारण पराक्रम और अलौकिक निश्चय के साथ स्वर्गादपि गरीयसी मातृभूमिको यवनोंके हाथसे उस समय मुक्त किया था, जब कि औरङ्गजेब रूपी समुद्रकी प्रचण्ड तरङ्गोंका प्रवाह भयानक गर्जनाके साथ भारतके पूर्व पश्चिम और उत्तर दक्षिण प्रान्तोंको ग्रास करनेको उद्यत हो रहा था। शिवाजीके गुरु समर्थ रामदास स्वामीने उनकी मृत्युके बाद एक कवितामें कहा है—कि शिवाजीको सदा स्मरण रखो और जीवनको तृणवत् समझो।

संसारमें कीर्ति ही जीवित रहती है। शिवाजीके आदर्शको सदा स्मरण रखो जिससे हिन्दू जातिमें सदा सञ्जीवनी शक्तिका सञ्चार होता रहे।

—·—

रत्नाकर-ग्रन्थ-माला ।

सावित्री-सत्यवान् !

इस पुस्तकमें सती-शिरोमणि सावित्री के अद्‌भुत चरित्रको सरल भाषामें ऐसे अच्छे ढङ्गसे लिखा गया है कि जिसके पढ़नेसे हिन्दू-बालिकायें और हिन्दू-रमणियां पातिव्रत्यके मर्मको सरलतासे हृदयंगम कर सकें। सती-शिरोमणि सावित्री का चरित्र, युग-युगान्तरोंसे सती रमणियोंका आदर्श माना जाता है। सावित्री के धर्मबलके सामने यमराजको भी हार माननी पड़ी थी। बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। सात रङ्गीन चित्र। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य सर्वसुलभ ॥) मात्र।

शैव्या-हरिश्चन्द्र ।

इस पुस्तकमें हिन्दू जातिके कीर्ति स्तम्भ, भारतके सौभाग्यसूर्य, गौरव-रवि, सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र तथा उनकी महीयसी रानी शैव्याकी अपूर्व आत्मत्यागकी कथा लिखी गयी है। शैव्या-हरिश्चन्द्रका त्यागमय जीवन चरित्र हिन्दू-रमणियों एवं कन्याओंके लिये आदर्श है। इस पुस्तकमें शैव्या-हरिश्चन्द्रके जीवनकी सभी घटनायें विशद रूपसे लिखी गई हैं। रङ्ग-बिरंगे अनेक चित्रोंकी सुन्दरता देखने ही योग्य है। छपाई-सफाई बढ़िया। मूल्य वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

नल-दमयन्ती ।

पुण्यश्लोक राजा नल और परम पति-भक्ति-परायणा दमयन्तीको भला कौन हिन्दू सन्तान नहीं जानता। इस पुस्तकमें उन्हींके परम पवित्र चरित्र और मर्मस्पर्शी जीवनका वर्णन किया गया है। इसमें पतिव्रत-महिमा का बहुत ही सुन्दर चित्र खींचा गया है। शिक्षा-विभागने इसको स्वीकार किया है। बढ़िया छपाई, ऐण्टिक पेपर और आठ रंग-बिरंगे घटित-घटनाओंके चित्र हैं। ऐसी सर्वाङ्गसुन्दर और सर्वसुलभ पुस्तक कहींसे भी प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य ॥) मात्र।

सीता-देवी ।

इस पुस्तकमें जनक-नन्दिनी, राम-प्रिया सीताका चरित्र बहुत ही अच्छे ढङ्गसे लिखा गया है। बालक-बालिकाओं के लिये इसमें अपूर्व शिक्षा है। क्योंकि यह रामायणका सार, उत्तमोत्तम शिक्षाओं का भण्डार—और हिन्दू-ललनाओं का ललित-श्रृङ्गार है। इसमें पुराण, काव्य, नाटक, उपन्यास तथा नीतिशास्त्रका अपूर्व उपदेश भरा हुआ है। सीतादेवी राजनीति, धर्मनीति, समाज और गार्हस्थ्यकी कुञ्जी है। छपाई-सफाई बढ़िया। सात रङ्ग-बिरंगे चित्र। मूल्य ॥=) मात्र।

वीर-बालक अभिमन्युकी लोकोत्तर वीरता, भारतके इतिहासमें सदा अमर रहेगी। गुरु-द्रोण द्वारा निर्मित विचित्र अभेद्य चक्र-व्यूहमें घुसकर षोड्श वर्षीय वीर-बालक अभिमन्युने जो प्रचण्ड वीरता प्रदर्शित की थी—तथा कौरव सप्त महा-रथियोंने मिलकर अभिमन्युको मार डाला था, उस रोमाञ्चकारी कथाको पढ़कर हृदय कांपने लगता और लोकोत्तर वीरताको देखकर बल्लियों उछलने लगता है। ऐसा सरस और सरल भाषामें लिखा जीवन हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। अनेक रंगीन चित्र। मूल्य वही ॥=) मात्र।

अपूर्व आत्मत्यागी, महावीर, आदित्य ब्रह्मचारी, भगवती गंगाके गर्भ-जात—महाराज शान्तनुके पुत्र, कौरव-पाण्डवोंके भीष्म पितामहका नाम सदा संसारमें अमर रहेगा। भीष्मने जो भीषण भीष्म-प्रतिज्ञा की थी, अन्त तक उन्होंने उसका पालन किया। अपने समयके वे अद्वितीय धर्मनिष्ठ, समाज-रक्षक, राज-नीतिके नियन्त्रणकारी वीर थे। बालकों के लिये भीष्मसे बढ़कर कोई आदर्श नहीं हो सकता। अनेक रंगीन चित्रोंसे सुसज्जित। हजारों प्रतियां हाथोहाथ बिक चुकीं। मूल्य ॥=) मात्र।

स्वनामधन्य मर्यादा—पुरुषोत्तम रामचन्द्र और जनक-नन्दिनी भगवती सीताके वीरबाहु और मंजुल-मूर्ति पुत्र-द्वय, लव-कुश की प्रचण्ड वीरताकी कहानी इतिहास-प्रसिद्ध है। राम-तनय लव-कुशकी कथा विशद रूपसे औपन्या-सिक रूपमें लिखी गई है। इसको पढ़ने से बालक-बालिकायें, सार-तत्त्व रूपसे रामायणकी सब घटनाओंको भी हृदयंगम कर लेती हैं और लव-कुशकी प्रचण्ड वीरता-प्रतिभा-साधुताका अनुकरण कर अपने चरित्रको उज्वल बना सकती हैं। अनेक रंगीन चित्र। मूल्य ॥=) मात्र।

पृथ्वीराज।

पृथ्वीराज दिल्लीके अन्तिम हिन्दू सम्राट् थे। इसमें उन्हींके कार्य-कलापों का वर्णन है। भारत पर विदेशी विध-र्मियोंके बहुत दिनोंसे दांत लगे हुए थे। दुर्भाग्यसे हिन्दुओंमें फूट पड़ गई और वे स्वार्थपरायणताके वशीभूत होकर एक दूसरेके प्राणोंके ग्राहक हो गये। अन्तमें गृह-शत्रुओंने विदेशियोंको निमन्त्रण देकर भारतमें बुला कर मातृभूमिको पददलित कराया! यह उसी समयका भारतका रक्त-रंजित इतिहास है। अनेक रंगीन चित्र दिये गये हैं। छपाई-सफाई बढ़िया। मूल्य १) मात्र।

महाराणा-प्रताप।

जिस समय हिन्दू जाति पर मुगल-साम्राज्य-विस्तारका ग्रह लगा हुआ था और हिन्दू राजा महाराजागण एकके बाद एक मुगल-सम्राट्के सामने शिर झुका कर आत्म-समर्पण कर रहे थे, तब महाराणा-प्रताप ही एक ऐसे वीर-व्रती थे, जिनकी हुंकार-ध्वनिसे मुगल-राजसिंहासन कांप उठा था! इस पुस्तकमें उन्हीं हिन्दुकुल गौरव, प्रातः-स्मरणीय महाराणा-प्रतापकी कीर्ति-कहानी विशद रूपसे लिखी गई है। समस्त घटनाओंका इसमें उल्लेख है। अनेक चित्रों से सुशोभित। मूल्य १) मात्र।

शिवाजी।

हिन्दू-कुल-सूर्य, गौरव-रवि, छत्रपति शिवाजीके समान निकट पूर्वके इतिहास में कोई भी वैसा वीर, दृढ़प्रतिज्ञ, हिन्दू-साम्राज्य संस्थापक, प्रचण्ड राज-नीतिज्ञ-वीर हिन्दू नहीं हुआ, जिसने हिन्दू-जातिकी डूबती हुई नैयाको पार लगाया हो। यदि शिवाजीके उत्तराधिकारी भी कहीं वैसे ही खरे सोनेके समान निकल आते, तो आज भारतका नक्शा ही बदला हुआ दृष्टिगोचर होता। इसमें शिवाजीके जीवनकी समस्त घटनायें बड़ी ही ओज-स्विनी भाषामें लिखी गयी है। शीलके लगभग रंगीन चित्र हैं। मूल्य १॥) मात्र

शंकराचार्य।

भारत, वैदिक-धर्मको तिलाञ्जलि देकर नास्तिकतावादके गहरे गर्तमें गिरने लग रहा था, राजा-प्रजा, सत्य-सनातन वैदिक धर्मके शत्रु हो रहे थे, उस समय यदि शङ्कराचार्य न होते तो, वैदिक-धर्म का नाम तक न रह जाता। इस पुस्तक में शंकर-स्वामीके जीवनका जन्मसे लेकर अन्तिम समाधि तकका विशद वर्णन है। शंकरके ब्रह्मचर्य, संसार-त्याग, दिग्विजय, शास्त्रार्थों आदिका विस्तृत वर्णन है और उनके धर्ममतका पूर्णरूपसे निरूपण किया गया है। इसे शंकर-दिग्विजयका हिन्दी-संस्करण समझिये। अनेक चित्र। मूल्य १॥)

श्रीकृष्ण।

यह पुस्तक, वसुदेव-देवकीके प्यारे पुत्र, गोकुलके गोपसखा, गोरक्षक-गोपाल, ब्रज के प्राण, कंस, जरासन्ध, कालयवन, शिशुपाल आदिके काल, द्वारकाके विधाता, पांडवोंके परित्राता, राजा-प्रजाके गुरु, शत्रुओं के पूज्य, धर्मके उपदेष्टा, नीतिके वेत्ता, धर्म-भ्रष्ट क्षत्रिय-कुलोंके संहारक, धर्म-राज्य-संस्थापक, दीन-दरिद्रोंके बन्धु, आदर्श, मृत्युञ्जय, गीताके रचयिता, श्रीकृष्णका चरित्र है। ऐसा अच्छा सर्वाङ्ग सुन्दर सर्वसुलभ और सम्पूर्ण सचित्र श्रीकृष्ण-चरित आज तक प्रकाशित नहीं हुआ। ३० चित्र हैं। मूल्य १॥) मात्र

मिलन-पूर्णिमा।

बहुत बढ़िया ऊंचे दर्जेका सामाजिक उपन्यास हैं। इसके मूल लेखक श्री श्रीनरेशचन्द्र सेन गुप्त एम०ए०डी०एल० हैं। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित है। उपन्यास इतना मनोरञ्जक है कि बिना पूरा किये जी नहीं मान सकता। मनुष्य-चरित्रका विश्लेषण ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया गया है कि कमाल कर दिया गया है। नरेश-बाबू मनुष्यके स्वाभाविक चित्रा चित्रण करनेमें लासानी हैं। पहला संस्करण हाथों हाथ बिक रहा है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित, छपाई-सफाई बहुत सुन्दर। मूल्य २) मात्र।

प्रेयसी।

यह बंगलाके एक बहुत प्रसिद्ध सामाजिक उपन्यासका अनुवाद है। यह इतना मनमोहक है, कि बंगलामें इसके कितने ही संस्करण हो चुके हैं। इसमें प्रेम का जगमगाता चित्र प्रदर्शित किया गया है। अनेक रंग-बिरंगे चित्रोंसे सुसज्जित। बंगलामें इस उपन्यासका बहुत आदर हुआ है। एक वर्षमें ही पांच संस्करण हो गये हैं और धड़ाधड़ बिक रहे हैं। हिन्दीमें यह पहला सचित्र संस्करण है। 'प्रेयसी' जैसे उपन्यास आपने बहुत कम पढ़े होंगे। मंगाकर पढ़िये। बढ़िया छपाई सुन्दर कागज। मूल्य केवल १) मात्र।

स्नेह-बन्धन।

बंगलाके उपन्यास लेखक—लेखिकाओंमें श्रीमती निरुपमादेवीका नाम अमर हो गया। इस सामाजिक उपन्यासमें हिन्दू-समाजकी एक विचित्र गुत्थीको ऐसे स्वाभाविक ढङ्गसे सुलझाया गया है, कि दांतों तले उंगली दबानी पड़ती है। हिन्दी पाठक, देवीजीके 'अन्नपूर्णा-मंदिर' और 'दीदी' के अनुवाद बड़े चावसे पढ़ते हैं। यह उन्हींका लिखा उपन्यास है। अनेक रङ्ग-बिरंगे चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई। पुस्तक एक बार बिना पूरा किये छोड़नेको जी नहीं चाहता। मूल्य २)

देवत्र।

श्रीमती निरुपमादेवी की सर्वश्रेष्ठ कृति है। इस उपन्यासके पात्रोंके चरित्रको ऐसे स्वाभाविक ढङ्गसे चित्रित किया गया है, कि पाठक अवाक् रह जाता है। श्रीमती निरुपमादेवीका बंगलामें वही स्थान है, जो अंगरेजीमें 'मेरी-कोरली' का है। श्रीमती निरुपमादेवीके आज तक निकले सब उपन्यासोंमें यह सर्वश्रेष्ठ है। पुस्तक इतनी मनोरञ्जक है कि एक बार आप उठा कर देख लीजिये, बस फिर बिना पूरा किये आपका छोड़नेको दिल न करेगा। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज। मूल्य २)

दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी

१४।१ ए, शम्भु चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

शङ्कराचार्य

रत्नाकर ग्रन्थमालाका १९ वां रत्न।

दी पोपुलर ट्रेडिङ्ग क म्पनी, ११५ हरीसन रोड, कलकत्ता।